स्थापना के स्वर्णिम 70 वर्ष

इक्षु

राजभाषा पत्रिका

वर्ष 10 अंक 2
जुलाई–दिसम्बर, 2021

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ 226002

राजभाषा कीर्ति एवं राजभाषा गौरव पुरस्कार

इक्षुः राजभाषा पत्रिका
वर्ष 10 : अंक 2
जुलाई–दिसम्बर, 2021

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

आज़ादी का अमृत महोत्सव

इक्षु

संरक्षक एवं प्रकाशक
अश्विनी दत्त पाठक

सम्पादक
अजय कुमार साह

सह–सम्पादक
ब्रह्म प्रकाश
अभिषेक कुमार सिंह

कला एवं छायांकन
योगेश मोहन सिंह
अवधेश कुमार यादव

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002

ISO 9001 : 2015

© भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं।
संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अपने लेख एवं सुझाव भेजें :
संपादक, इक्षु एवं
प्रभारी, राजभाषा प्रकोष्ठ
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ–226 002
ई–मेल : ikshuiisr@yahoo.in

वर्ष 2021: संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक	अध्यक्ष
डॉ. सुधीर कुमार शुक्ल	सदस्य
डॉ. संगीता श्रीवास्तव	सदस्या
डॉ. पुष्पा सिंह	सदस्या
डॉ. शर्मिला राय	सदस्या
डॉ. अखिलेश कुमार सिंह	सदस्य
डॉ. एस.आई. अनवर	सदस्य
डॉ. ए.पी. द्विवेदी	सदस्य
डॉ. एस.के. गोस्वामी	सदस्य
श्री सरोज कुमार सिंह	सदस्य
श्रीमती आशा गौर	सदस्या
डॉ. अनीता सावनानी	सदस्या
श्री अभिषेक कुमार सिंह	सदस्य
श्री अशोक विश्वकर्मा	सदस्य
डॉ. अजय कुमार साह	सदस्य सचिव

प्रकाशक
निदेशक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
रायबरेली रोड, पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ 226 002
फोन : 0522–2961318 फैक्स : 0522–2480738
ई–मेल : director.sugarcane@icar.gov.in
वेबसाइट : www.iisr.nic.in

मुद्रित : माहेश्वरी प्रिंटिंग प्रेस, 289/214 मोतीनगर, लखनऊ–226004 मोबाइल : 9721505010

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक
निदेशक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226 002

निदेशक की लेखनी से.....

भाकृअनुप– भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ 16 फरवरी 2022 को अपनी स्थापना के सात दशकों की यात्रा पूर्ण कर रहा है। संस्थान द्वारा गन्ने की कोलख 8001, कोलख 8102, कोलख 94184, कोलख 07201, कोलख 9709, कोलख 11203, कोलख 11206, कोलख 12207, कोलख 12209, कोलख 14201 एव कोलख 14204 जैसी उन्नतशील किस्मों का विकास किया गया है। संस्थान ने बिहार सरकार के साथ हुए समझौते के अंतर्गत गन्ना मिलों के साथ गुणवत्तापूर्ण बीज गन्ना उत्पादित करके बिहार में गन्ने की उपज बढ़ाने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। संस्थान ने गन्ने की बुवाई की गोल गड्ढ़ा विधि, *फर्ब* विधि व यांत्रिक *ट्रैंच* विधि तथा शीघ्र बहुगुणन हेतु *स्पेस्ड ट्रान्सप्लान्टिंग* तकनीक, *बड–चिप*, गन्ना गांठ तथा *पॉलीबैग* प्रणाली जैसी कई विधियाँ विकसित की हैं। संस्थान ने गन्ने के साथ विभिन्न अल्पकालिक फसलों की अंतःफसली खेती को बढ़ावा देकर किसानों की आय में वृद्धि की है। गन्ने में पेड़ी फसल की उत्पादकता बढ़ाने हेतु एक तकनीकी *पैकेज* विकसित किया गया है। संस्थान द्वारा गन्ने के लाल सड़न, कडुँआ, उकठा, मोजेक, घासी प्ररोह रोग, पेड़ी का बौना रोग, *पोक्का* बोइंग जैसे प्रमुख रोगों के निदान के लिए तकनीक संस्तुत की गयी हैं। गन्ने को 54° सें. तथा 95–99 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता पर ढाई घंटों के लिए नमीयुक्त गर्म वायु यंत्र से उपचारित करने पर बीजजनित रोगों से निजात मिल जाती है। गन्ने में बेधक समूहों के लिए एक समेकित नाशी कीट प्रबंधन विधि विकसित की गई है। प्रदेश में पाइरिला, ऊनी माहू, स्केल कीट तथा बेधक समूहों के लिए जैव नियंत्रण हेतु विभिन्न पराश्रयी तथा परजीवी की पहचान कर बड़ी संख्या में निर्गत तथा संरक्षित किए जाते हैं। संस्थान के निर्देशन में प्रदेश की कई चीनी मिलों में जैव नियंत्रण प्रयोगशालाएं स्थापित की गई हैं।

गन्ने की कटाई उपरान्त सुक्रोज क्षति को रोकने हेतु सोडियम मेटासिलिकेट 0.05 प्रतिशत एवं बैंजलकोनियम क्लोराइड 0.02 प्रतिशत के छिड़काव को कई चीनी मिलों में अपनाया जा रहा है जिससे शर्करा उपज में 0.3 से 0.5 इकाई की वृद्धि हुई है। गन्ने की बुवाई क्रियाओं के यंत्रीकरण में संस्थान ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराकर बुवाई, कर्षण क्रियाओं, मिट्टी चढ़ाने तथा पेड़ी प्रबन्धन हेतु मानव श्रम में मितव्यता लाने वाले कई यंत्र अभिकल्पित एवं विकसित किए हैं। संस्थान द्वारा विकसित टैक्टर चालित *रिजर टाईप शुगरकेन कटर प्लान्टर* के प्रयोग से बुवाई में लगने वाली लागत में 60 प्रतिशत की बचत होती है। कई तरह के यंत्र जैसे *ग्राउन्ड व्हील* से संचालित तीन पंक्ति बहुउद्देश्यीय गन्ना *कटर–प्लान्टर*, ट्रैक्टर द्वारा संचालित द्विपंक्ति गन्ना *कटर–प्लान्टर, रेज्ड बेड सीडर–कम–शुगरकेन कटर–प्लान्टर* का विकास किया गया है जिससे किसानों को फायदा पहुँचा है। संस्थान द्वारा विकसित पेड़ी प्रबंधन यंत्र, पेड़ी फसल के प्रबंधन में किए जाने वाले सभी कार्यों को एक बार में ही निष्पादित कर देता है। सिंचाई में पानी की बचत के लिए यांत्रिक *ट्रैन्च* विधि द्वारा बुआई तथा एकान्तर नाली सिंचाई विधि के अन्तर्गत सिंचाई जल की 36.5 प्रतिशत बचत होने के साथ–साथ जल उपयोग क्षमता में 64 प्रतिशत का सुधार होता है। उत्पाद विविधीकरण हेतु संस्थान द्वारा गुणवत्तायुक्त गुड़ उत्पादन की तकनीक विकसित करके प्रसारित की जा रही है।

संस्थान ने किसानों की आय दोगुना करने की प्रधानमंत्री जी की महत्वाकांक्षी योजना के तहत चीनी उद्योग के साथ समझौता करके *पीपीपी मोड* के अंतर्गत आठ गाँवों को अंगीकृत करके विभिन्न वैज्ञानिक हस्तक्षेपों से किसानों की आय बढ़ाने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। किसानों को गन्ना खेती की नवीनतम जानकारी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से संस्थान द्वारा प्रतिवर्ष प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। जिसमें हजारों कृषक, गन्ना विकास कार्यकर्ता एवं विद्यार्थी प्रतिभागिता कर गन्ना खेती की नवीनतम जानकारी प्राप्त करते हैं। गुणवत्तायुक्त गुड़ बनाने व गन्ना खेती में उद्यमी तैयार करने हेतु उद्यमिता विकास कार्यक्रम संचालित किया जा रहा है। संस्थान के प्रयासों से गन्ना एवं चीनी उत्पादन में उत्साहजनक वृद्धि हुई है तथा गन्ना किसानों की आय में वृद्धि होने से उनके जीवन स्तर में सतत सुधार हो रहा है। आगामी वर्षों में भी संस्थान गन्ना खेती में लागत को कम करके देश के गन्ना कृषकों की आय बढ़ाने हेतु दृढ़ संकल्पित है।

आपका

स्थान : लखनऊ
दिनांक : 31 जनवरी, 2022

(अश्विनी दत्त पाठक)

डॉ. अजय कुमार साह
प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, प्रसार व प्रशिक्षण
संपादक (इक्षु) एवं प्रभारी, राजभाषा प्रभाग

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226 002

'इक्षु–सार'

पूरा देश स्वतन्त्रता की 75वीं वर्षगांठ को "आजादी के अमृत महोत्सव" के रूप में मना रहा है, जिससे हमें नई ऊर्जा प्रदान हो रही है। हम सभी देशवासी अमृत महोत्सव की उमंग में अति उत्साहित हैं। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ परिवार के सभी सदस्यों के लिए यह उमंग दो गुनी है, क्योंकि हमारा संस्थान भी अपनी स्थापना के 70 वर्षों की सफल यात्रा को पूरा करते हुए 71वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। इन 70 वर्षों में संस्थान द्वारा अनेकों तकनीकों एवं किस्मों को विकसित किया गया। उद्देश्य और लक्ष्य सिर्फ एक था कि देश के अंदर गन्ना किसानों तथा चीनी उद्योग को खुशहाल बनाया जाए और इस लक्ष्य को लेकर 16 फरवरी 1952 को शुरू की गई यात्रा अनेकों पड़ाव एवं बाधाओं को पार करते हुए आज संस्थान मिठास के क्षेत्र में उत्कृष्टता के नए आयाम स्थापित करने में सफल हुआ है। संस्थान द्वारा किए गए शोध कार्यों तथा विकसित तकनीकों ने देश को मिठास के क्षेत्र में न सिर्फ आत्मनिर्भर बनाया बल्कि भविष्य में हरित ऊर्जा की चुनौतियों का सामना करने के लिए ठोस दृढ़ता के साथ आगे बढ़ रहा है।

स्थापना के समय संसाधनों के अभाव के बावजूद बहुत ही कम समय में संस्थान ने वर्ष 1956 में चोटी बेधक कीट की जैविक नियंत्रण तकनीक का विकास किया। उसके बाद वर्ष 1964 में सफेद लट्ट कीट नियंत्रण के लिए प्रकाश पुंज *ट्रैप*, 1971 में बुआई की अंतरालित प्रतिरोपण विधि, त्रि–स्तरीय गन्ना बीज उत्पादन एवं आर्द्र–उष्ण वायु उपचार संयंत्र का विकास कर संस्थान ने अपनी सफलता के झंडे गाड़ दिए थे। बाद के वर्षों में उन्नत किस्मों, नाशी कीटों के लिए समेकित प्रबंधन तकनीक, उन्नत बुवाई विधियों तथा सिंचाई जल बचत तकनीकों का विकास हुआ। इन तकनीकी उपलब्धियों ने संस्थान को विश्व पटल पर गन्ना शोध के क्षेत्र में अग्रणीय संस्थानों की श्रेणी में ला दिया। अस्सी और नब्बे के दशक में संस्थान द्वारा विकसित कोलख 8001 तथा 8102 किस्मों ने गन्ना किसानों के लिए आर्थिक समृद्धि का रास्ता प्रशस्त किया। इसी काल खंड में संस्थान द्वारा विकसित चुकंदर की एल.एस.–6 तथा आई.आई.एस.आर. काम्प–1 किस्मों ने देश के अंदर चुकंदर की खेती का मार्ग प्रशस्त किया। गन्ना खेती में लगने वाली लागत तथा श्रम को कम करने के लिए संस्थान ने वर्ष 2000 से 2010 के मध्य ट्रैक्टर चालित कई यंत्रों को विकसित कर अपना लोहा मनवाया और आज संस्थान की पहचान गन्ना खेती के लिए विकसित किए गए यंत्रों से होती है। वर्ष 2011 तथा 2012 में *बड–चिप* तकनीक एवं *केन–नोड* तकनीक विकसित की गयी जिससे गन्ना बुआई में लगने वाले बीज की मात्रा में अप्रत्याशित कमी आई और किसानों का मुनाफा बढ़ा।

पिछले एक दशक में शोध कार्यों में एक नई उत्साह एवं ऊर्जा का संचार हुआ और परिणाम है कि हाल के वर्षों में एक या दो नहीं बल्कि सात किस्मों का विकास हुआ और खेती के लिए संस्तुत की गई। वर्ष 2012–13 में खेती में डिजिटलाइजेशन को बढ़ावा देते हुए संस्थान में कंप्यूटर आधारित विशेषज्ञ प्रणाली यानि *केन–डेस* का अविष्कार किया जो कि गन्ना में पोषण की कमी के लक्षण, नाशी कीटों एवं बीमारियों के लक्षण को चिन्हित कर समाधान पर प्रयोगकर्ता को अंगुली के *क्लिक* पर सलाह देता है।

इन सभी तकनीकों को सघन कार्यक्रम संचालित कर चीनी मिलों तथा गन्ना किसानों तक पहुंचाया गया। जिसका परिणाम यह हुआ कि वर्ष 1952 में देश में गन्ने की उपज 32 टन/हे. थी, वह बढ़कर 2021 में 80 टन/हे. हो गयी है। 2022 तक किसानों की आय दो गुना करने के महत्वाकांक्षी लक्ष्य को प्राप्त करने में भी संस्थान अपनी जिम्मेदारी को बखूबी निभा रहा है। इस संदर्भ में *पब्लिक–प्राइवेट पार्टनरशिप* के अंतर्गत चीनी उद्योग के साथ साझा कार्यक्रम क्रियान्वित किया जा रहा है और उन्नत कृषि तकनीकों को किसानों तक पहुंचाया जा रहा है, जिस कारण सिर्फ 3–4 वर्षों में परियोजना के अंतर्गत किसानों की आय दोगुनी हो गई है। कृषि स्नातक छात्रों तथा ग्रामीण बेरोजगारों के लिए भी उद्यमिता विकास कार्यक्रम चलाया जा रहा है और लगभग 200 उद्यमी कृषक अपना व्यवसाय कर रहे हैं।

'इक्षु' का वर्तमान अंक संस्थान के सुनहरे 70 वर्षों की यात्रा में प्राप्त उपलब्धियों पर विशेष अंक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। मेरे लिए अत्यंत सुखद अनुभव है कि सफलता के अनेक रंगों को सहेजकर इस अंक में प्रस्तुत किया जा रहा है। इस अंक में ज्ञान–विज्ञान, राजभाषा, आरोग्य एवं संजीवनी एवं आमोद–प्रमोद प्रभाग के अंतर्गत यह प्रयास किया गया है कि संस्थान द्वारा पिछले 70 वर्षों के सराहनीय कार्य को सम्मिलित किया जाए, जिससे पाठकों को संस्थान की सतरंगी सफलता से परिचित कराया जा सके।

इक्षु के इस अंक में भाषा विघटन की रोक हेतु जन–प्रबोधन, नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप, गन्ना के साथ अंतः फसल की महत्ता इत्यादि विषयों पर आधारित बहुमूल्य सूचना पाठक के ज्ञान को बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान देगा। साथ ही मैं 'इक्षु' के इस अंक के सफल प्रकाशन में आपके बौद्धिक योगदान एवं सहयोग के लिए आभार व्यक्त करता हूँ।

स्थान : लखनऊ
दिनांक : 31 जनवरी, 2022

(अजय कुमार साह)

इक्षु, राजभाषा पत्रिका
राजभाषा प्रकोष्ठ की अर्द्धवार्षिक पत्रिका
वर्ष : 10, अंक : 2
जुलाई–दिसम्बर, 2021

विषय वस्तु

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की विकास यात्रा के स्वर्णिम सात दशक 01
अश्विनी दत्त पाठक, लाल सिंह गंगवार, अश्विनी कुमार शर्मा, ब्रह्म प्रकाश, अनीता सावनानी, आशीष सिंह यादव एवं कामिनी सिंह

फसल सुधार में भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान का योगदान 06
संगीता श्रीवास्तव, अश्विनी दत्त पाठक, वरुचा मिश्रा, राघवेन्द्र कुमार, मुकुन्द कुमार, संतेश्वरी, आँचल सिंह एवं आशुतोष कुमार मल्ल

सत्तर वर्षों में गन्ना उत्पादन प्रौद्योगिकी में फसल उत्पादन विभाग का योगदान 15
सुधीर कुमार शुक्ल एवं मोना नागरगड़े

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की यात्रा में फसल सुरक्षा अनुसंधान के सत्तर साल 20
शर्मिला रॉय, संजय कुमार गोस्वामी, चंद्रमणि राज, श्वेता सिंह, अरुण बैठा, दिनेश सिंह, सत्यानंद सुशील, दीक्षा जोशी, आशीष सिंह यादव, ब्रह्म प्रकाश एवं आकांक्षा सिंह

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित गन्ना कृषि यंत्र : 70 वर्षों का सतत प्रयास 33
अखिलेश कुमार सिंह

गन्ने की पादप कार्यिकी एवं जैव–रसायन में शोध एवं उपलब्धियां 36
राजीव कुमार, आस्था सिंह, अनम, राजेन्द्र कुमार सिंह, राम सँवारे एवं पुष्पा सिंह

अखिल भारतीय समन्वित गन्ना अनुसंधान परियोजना द्वारा विकसित मुख्य गन्ना उत्पादन प्रौद्योगिकियों का गन्ना उपज एवं आय–वृद्धि में योगदान 45
अश्विनी दत्त पाठक, सत्यानंद सुशील, सुधीर कुमार शुक्ल, संजय कुमार यादव, गया करन सिंह, आदिल जुबैर एवं अम्बरीश कुमार साहू

कृषि विज्ञान केन्द्र, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की उपलब्धियाँ 51
अखिलेश कुमार दुबे, दीपक राय, वीनिका सिंह, संजय कुमार पाण्डेय, विवेकानन्द सिंह, राकेश कुमार सिंह एवं राम लखन शाक्य

सत्तर वर्ष संस्थान के : सत्तर बातें चुकंदर की 55
मुकुन्द कुमार, आशुतोष कुमार मल्ल, संतेश्वरी, वरुचा मिश्रा, संतोष कुमार एवं सुरेन्द्र प्रताप सिंह

गन्ने मे सूखा नियंत्रण हेतु एथेफॉन का प्रभाव 61
राधा जैन

आलू में अधिक पैदावार हेतु मुख्य पोषक तत्वों का महत्व 64
संजय कुमार यादव, सरला यादव, सुभाष बाबू एवं विश्वनाथ प्रताप यादव

उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में गन्ना खेती की उन्नत सस्य क्रियाएं 66
राम रतन वर्मा, तपेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, पुष्पा सिंह, कामता प्रसाद एवं दिलीप कुमार

गन्ना आधारित फसल चक्र में कृषि आय बढ़ाने हेतु गेंदा की वैज्ञानिक खेती 71
संजय कुमार यादव, सुधीर कुमार शुक्ल, विजय प्रकाश जायसवाल, अरुण बैठा एवं अश्विनी दत्त पाठक

स्वस्थ भारत के लिए गन्ने से जैव इथेनाल बनाने की अपार संभावनाओं का दोहन आवश्यक 73
ब्रह्म प्रकाश, लाल सिंह गंगवार, अश्विनी कुमार शर्मा, अनीता सावनानी, ओम प्रकाश, अभिषेक कुमार सिंह एवं कामिनी सिंह

चुकंदर में खरपतवार प्रबंधन 77
मोना नगरगड़े, विशाल त्यागी, दिलीप कुमार, प्रीति सिंह, संतोष कुमार एवं उमेश चंद्र पाण्डेय

वर्ष 2020 : भारत द्वारा बौद्धिक संपदा आवेदनों की प्रवत्ति 79
कामिनी सिंह, लाल सिंह गंगवार, ब्रह्म प्रकाश, ओम प्रकाश एवं अनीता सावनानी

उत्तर प्रदेश का गौरव : गन्ना 81
मनोज कुमार सिंह

गन्ने की मिठास बढ़ाने में प्रथम भारतीय महिला वैज्ञानिक जानकी अम्माल का अनुपम एवं अतुलनीय योगदान 83
ओम प्रकाश, पल्लवी यादव, ब्रह्म प्रकाश, अजय कुमार साह, अश्विनी दत्त पाठक एवं कामिनी सिंह

राजभाषा प्रभाग

भाषा विघटन की रोक हेतु जन–प्रबोधन 85
सूर्य प्रसाद दीक्षित

हिंदी साहित्य की समृद्धि में मुसलमान साहित्यकारों का अनमोल योगदान 87
अभिषेक कुमार सिंह, ब्रह्म प्रकाश एवं अतुल कुमार सचान

केन्द्र सरकार द्वारा घोषित नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप 91
राम जी लाल, अजय कुमार साह एवं महाराम सिंह

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

ग्रीष्मकाल में *कोल्ड ड्रिंक्स* के स्थान पर घर में बने शीतल पेय पदार्थ प्रयोग कर रहें स्वस्थ 95
आशीष सिंह यादव, ब्रह्म प्रकाश, ओम प्रकाश, अभिषेक कुमार सिंह, पल्लवी यादव एवं कामिनी सिंह

गुड : स्वास्थ्य का खजाना 98
संतेश्वरी, वरुचा मिश्रा, मुकुन्द कुमार एवं आशुतोष कुमार मल्ल

गुड का गुलकंद 101
मिथिलेश तिवारी, प्रियंका सिंह, साची चौरसिया, राजीव रंजन राय, दिलीप कुमार एवं अखिलेश कुमार सिंह

आमोद–प्रमोद प्रभाग

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान की गौरवशाली गाथा 102
ब्रह्म प्रकाश

हिंदी भाषा 103
कृष्ण मुरारी सिंह "किसान"

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) की बैठक का आयोजन 104

वाक्यांश 105

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की विकास यात्रा के स्वर्णिम सात दशक

अश्विनी दत्त पाठक, लाल सिंह गंगवार, अश्विनी कुमार शर्मा, ब्रह्म प्रकाश,
अनीता सावनानी, आशीष सिंह यादव एवं कामिनी सिंह
भाकृअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ– रायबरेली रोड पर 26° 48′ उत्तर अक्षांश, 80° 56′ *(गूगल अर्थ)* देशांतर और औसत समुद्र तल से 111 मीटर ऊपर स्थित है। यह सड़क, रेल और हवाई मार्ग से अच्छी तरह जुड़ा हुआ है। ग्रीष्मकाल के दौरान औसत न्यूनतम और अधिकतम तापमान 18° और 39° सेंटीग्रेट के बीच रहता है, जबकि शीतकाल में यह तापमान 7° तथा 29° सें. के मध्य रहता है। अधिकांश वर्षा, जुलाई से सितंबर के मध्य होती है। औसत वर्षा लगभग 658 मि.मी. होती है। वार्षिक वर्षा की लगभग 72% वर्षा बरसात के मौसम में ही होती है।

संक्षिप्त इतिहास और स्थापना

भारत में नील की खेती का उन्मूलन चीनी उद्योग के प्रसार और उपोष्ण भारत में गन्ने की खेती के लिए एक वरदान साबित हुआ। बीसवीं सदी के आरंभ में, नील किसानों की दुर्दशा को दूर करने और बीमार चीनी उद्योगों को बचाने के लिए, पंडित मदन मोहन मालवीय ने भारतीय संसद में गन्ने की खेती के लिए नील द्वारा खाली की गई भूमि को हटाने का अनुरोध किया। चीनी आयात के खिलाफ प्रशुल्क संरक्षण के साथ तत्कालीन सरकार के फैसले ने 1930 के दशक में उपोष्ण भारत को एक प्रमुख गन्ना उत्पादक और प्रसंस्करण क्षेत्र में बदल दिया।

डॉ. सी.ए. बार्बर और उनके सहयोगी, *सर* टी.एस. वेंकटरमण ने संकरण के माध्यम से गन्ने की किस्मों का विकास करके उपोष्ण गन्ना क्षेत्र के लिए देश में नई चीनी मिलों की स्थापना को गति प्रदान की। वर्ष 1931–32 में भारत में केवल 31 चीनी मिलें ही संचालित थीं, जिनकी संख्या 1933–34 में बढ़कर 111 हो गई, जिनमें से 80% नई मिलें उत्तर प्रदेश और बिहार में स्थापित की गई थीं, जिसके फलस्वरूप उत्तर भारत में गन्ने की खेती बड़े पैमाने पर होने लगी। हालांकि गन्ने की खेती में यह उछाल अधिक दिन नहीं चला। 1940 के दशक के दौरान लाल सड़न की गंभीर और बार–बार होने वाली महामारियों ने अधिक उपज देने वाली नई संकर किस्मों को प्रभावित किया। इसलिए, अखिल भारतीय स्तर पर गन्ना एवं चीनी अनुसंधान और समन्वय को मजबूत करने के लिए, 'भारतीय केंद्रीय गन्ना समिति' नामक केंद्रीय समिति का गठन नवंबर, 1944 में किया गया जिसका मुख्यालय नई दिल्ली रखा गया। समिति ने गन्ना खेती और चीनी प्रसंस्करण के सभी पहलुओं पर अनुसंधान कार्य करने के लिए समर्पित एक केंद्रीय अनुसंधान संस्थान की स्थापना का प्रस्ताव रखा। भारतीय केंद्रीय गन्ना समिति ने रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार की भूमि पर चीनी प्रौद्योगिकी और गन्ना अनुसंधान के केंद्रीय संस्थान की स्थापना की। अक्टूबर 1947 में इसका नाम बदल कर भारतीय केंद्रीय गन्ना केंद्र, लखनऊ कर दिया। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान की स्थापना 16 फरवरी, 1952 को भद्रक फार्म, लखनऊ में हुई थी। तत्पश्चात, भारतीय केंद्रीय गन्ना समिति के प्रशासनिक नियंत्रण कार्य को 1 जनवरी, 1954 से खाद्य और कृषि मंत्रालय, भारत सरकार के प्रशासनिक नियंत्रण में कर दिया गया। इसके पश्चात, भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ को 1 अप्रैल, 1969 को यह संस्थान भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के प्रशासनिक नियंत्रण में स्थानांतरित कर दिया गया।

विजन

उत्कृष्ट, वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्धात्मक तथा जीवंत गन्ने की खेती के लिए एक अग्रणी अनुसंधान संस्थान के रूप में समग्र प्रयास करना।

मिशन

भारत की शर्करा एवं ऊर्जा की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु गन्ना उत्पादन, उत्पादकता, लाभप्रदता तथा स्थायित्व को बढ़ाना

अधिदेश

- देश के उपोष्ण क्षेत्र के लिए गन्ना प्रजनन तथा गन्ने के उत्पादन व सुरक्षा पर मूलभूत, नीतिगत तथा विशिष्ट व्यावहारिक समस्याओं पर अनुसंधान करना
- उन्नतशील किस्मों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास के लिए राष्ट्रीय व क्षेत्रीय मुद्दों पर विशिष्ट व्यावहारिक समस्याओं पर किए गए शोध का समन्वयन एवं निगरानी
- तकनीकों का प्रचार–प्रसार तथा क्षमता निर्माण ।

संगठनात्मक संरचना

वर्तमान में, संस्थान को फसल सुधार, फसल उत्पादन, फसल सुरक्षा, पादप कार्यिकी और जैवरसायन, और कृषि अभियंत्रण जैसे पांच प्रभागों में संगठित किया गया है। इन प्रभागों के अतिरिक्त, संस्थान में मृदा, जल तथा पौधों के नमूनों के विश्लेषण के लिए सभी केंद्रीय सुविधा युक्त प्रयोगशाला, रस गुणवत्ता विश्लेषण प्रयोगशाला व कृषि–मौसम विज्ञान प्रयोगशालाएं स्थापित की गयी हैं। आधुनिक गुड़ इकाई, प्रतिस्पर्धी लागत पर रस, गुड़ और अन्य मूल्य संवर्धित उत्पादों के लिए प्रौद्योगिकी में सुधार और गुड़ के भंडारण पहलुओं पर

अनुसंधान करती है। संस्थान को उसके द्वारा निर्मित उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादों हेतु अन्तर्राष्ट्रीय मानकीकरण संगठन (आईएसओ 9001:2015) द्वारा प्रमाणपत्र प्राप्त है। इसकी गतिविधियों के राष्ट्रव्यापी *कवरेज* के लिए एक क्षेत्रीय और दो विशिष्ट उद्देश्यों के लिए संस्थान का क्षेत्रीय केंद्र मोतीपुर, मुजफ्फरपुर (बिहार) में स्थित है। संस्थान का एक जैविक नियंत्रण केंद्र, प्रवरानगर (महाराष्ट्र) और चुकंदर पर शोध हेतु चुकंदर प्रजनन केंद्र, मुक्तेश्वर (उत्तराखंड) में स्थित है। संस्थान में निदेशक सहित वैज्ञानिकों के 74, तकनीकी वर्ग के 134, प्रशासनिक श्रेणी के 49 और कुशल वर्ग सहायक के 72 पद मौजूद हैं। इस संस्थान के पास पूर्वी उत्तर प्रदेश स्थित भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सात संस्थानों के अपने कर्मचारियों की पेंशन को विनियमित करने का उत्तरदायित्व भी है। संस्थान के प्रशासनिक नियंत्रण में लखनऊ तथा लखीमपुर खीरी में एक–एक कृषि विज्ञान केंद्र भी कार्यरत हैं। संस्थान की ऊतक संवर्धन प्रयोगशाला का प्रत्यायनः *बायोटेक कन्सोर्शियम इंडिया लिमिटेड*, नई दिल्ली में स्थापित जैव प्रौद्योगिकी विभाग (डीबीटी) के *एनसीएस–टीसीपी* प्रबंधन प्रकोष्ठ द्वारा विषाणु अनुक्रमण और ऊतक से संबंधित पौधों की आनुवंशिक निष्ठा परीक्षण हेतु मान्यता प्राप्त है।

कृषि वैज्ञानिक भर्ती मण्डल (*एएसआरबी*), नई दिल्ली का ऑनलाइन परीक्षा केंद्रः संस्थान के पास *एएसआरबी*, नई दिल्ली द्वारा परीक्षा आयोजित करने के लिए परीक्षा केंद्र के रूप में कार्य करने की जिम्मेदारी है। वर्तमान समय में संस्थान के पास *एएसआरबी* द्वारा आयोजित विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं के आयोजन के लिए *ऑनलाइन* सुविधा भी उपलब्ध है।

उपलब्धियां

वर्ष 1952 में इस संस्थान की स्थापना के पश्चात, भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने देश के समग्र कृषि परिदृश्य में एक अमिट छाप छोड़ी है और गन्ना कृषि को लाभप्रद बनाने में तकनीकी विकसित करने में मदद की है। इन तकनीकों के अपनाने से भारत चीनी उत्पादन में आत्मनिर्भर हुआ है और अधिशेष चीनी के निर्यात के लिए तैयार है। भारत में गन्ने की खेती अब लगभग 75 लाख किसानों, लगभग 12 लाख कुशल और अर्द्ध–कुशल श्रमिकों और लगभग 40 लाख कृषि मजदूरों की आजीविका का मुख्य स्त्रोत है।

संस्थान के कुशल वैज्ञानिकों के गंभीर प्रयासों के परिणामस्वरूप कई प्रौद्योगिकियों का विकास हुआ है जिन्हें किसानों ने अपनाया है। इसके अतिरिक्त, गन्ने के संबंध में बहुत सी बुनियादी जानकारी भी प्रदान की जाती हैं, जिससे गन्ने की उत्पादकता तथा कृषकों की आय में वृद्धि हुई है।

अंतरालित प्रतिरोपण विधि

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में विकसित अंतरालित प्रतिरोपण तकनीक (*एसटीपी*) की व्यापक प्रशंसा हुई। इस तकनीक को न केवल भारत में, अपितु पड़ोसी देशों में भी विशेष रूप से गन्ने की नई जारी किस्मों के तीव्र बहुगुणन हेतु अपनाया गया है।

त्रिस्तरीय बीज उत्पादन कार्यक्रम और *एमएचएटी*

एमएचएटी से जुड़े स्वस्थ बीज गन्ना के उत्पादन और वितरण के लिए तीन स्तरीय बीज उत्पादन कार्यक्रम की किस्मों ने राष्ट्र को आसन्न चीनी संकट से बचाया और इस प्रयास की परिणति संस्थान के भूतपूर्व निदेशक, डॉ. किशन सिंह को प्रतिष्ठित शांति स्वरूप भटनागर पुरस्कार से सम्मानित किए जाने के रूप में हुई।

कीटों और रोगों का जैव नियंत्रण

वर्ष 1960 के दशक की शुरुआत में तमिलनाडु में चोटी बेधक कीट का प्रथम जैव–नियंत्रण *आइसोटिमा जैवेंसिस* की शुरूआत और पुनर्नियोजन द्वारा किया गया। संस्थान देश के विभिन्न स्थानों पर जैविक नियंत्रण केंद्रों की एक श्रृंखला की स्थापना के माध्यम से जैव–नियंत्रण गतिविधियों का नेतृत्व करता है। संस्थान ने वर्ष 1980 के दशक की शुरुआत में *फुलगोरेसिया* (*एपिरिकैनिया / एपिपायरॉप्स*) *मेलेनोल्यूका* के उपयोग के माध्यम से *पाइरिला* के जैविक नियंत्रण के पक्ष में अपना दृष्टिकोण रखा, जो अब गन्ने में सफल जैविक नियंत्रण का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।

एकीकृत कीट और रोग प्रबंधन *मॉड्यूल*

संस्थान द्वारा एक समग्र तरीके से, गन्ना और चुकंदर के विभिन्न कीट और रोगों के निदान हेतु विशिष्ट एकीकृत प्रबंधन (*आईपीएम*) कार्यक्रम विकसित किए गए हैं। किसानों और मिल मालिकों के लिए संस्थान द्वारा विकसित विशिष्ट *मॉड्यूल्स* अपनाकर कीटों और रोगों का कुशल प्रबंधन किया जा रहा है। संस्थान द्वारा विकसित *आईपीएम* के साथ 'स्वस्थ क्षेत्र में स्वस्थ बीज' बेहतर गन्ना उत्पादकता और लाभ प्रदान करता है। जिसने हमारे राजस्व को भी बढ़ाया है तथा चीनी, गुड़ और खांडसारी में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में भी देश को उल्लेखनीय योगदान दिया है।

नए कीट और रोगों की पहचान

घासी प्ररोह रोग (*जीएसडी*) के *माइकोप्लाज्मल एटियलजि* को स्थापित करने और *लीफ हॉपर* वाहक के माध्यम से इसके संचरण का श्रेय भी इसी संस्थान को जाता है। संस्थान ने भारत में गन्ने की सूत्रकृमि समस्या पर गंभीर अनुसंधान कर प्रथम बार सूत्रकृमि की कई नवीन प्रजातियों की पहचान की।

आवश्यकता आधारित कृषि पद्धतियां

संस्थान ने गन्ने की बुवाई हेतु कई रोपण तकनीक विकसित की हैं जिसमें युग्मित पंक्तिरोपण, गोल गड्ढा विधि, *यांत्रिक ट्रेंच* विधि और अंतर्सस्य पद्धति में गन्ने की बुवाई हेतु रोपण की *आरबीएस* विधि प्रमुख हैं। खरपतवारों के प्रबंधन और अंतः–कर्षण संचालन को पूर्व और बाद के खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग के साथ मानकीकृत किया गया है। स्वसंचालन के साथ–साथ ट्रैक्टर से संचालित निराई–गुड़ाई,

कचरा की पलवार का प्रयोग, फसल अवशेषों के पुनर्चक्रण और पोषक तत्व प्रबंधन, खरपतवार प्रबंधन के साथ–साथ सिंचाई जल प्रबंधन शोध के प्रमुख विषय रहे हैं। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान ने देश की गन्ना कृषि पर चौमुखी प्रभाव डाला है।

अंतर्सस्य पद्धति में गन्ने की खेती का भविष्य

संस्थान ने बहुत पहले ही यह महसूस कर लिया था कि गन्ने में अंतर्सस्य पद्धति में अन्य फसलों की सहफसली खेती करना भविष्य की आवश्यकता होगी क्योंकि चावल व गेहूँ आदि जैसी खाद्य फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र को गन्ने के अंतर्गत ला पाना संभव नहीं है। गन्ने में धान्य, दलहनी, सब्जियों, मसालों एवं चुकंदर जैसी शर्करा फसल के साथ अन्तःफसल, आदि लाभप्रदता को बनाए रखने और भूमि, पानी और पोषक तत्वों के उपयोग की क्षमता बढ़ाने के लिए समय की एक आवश्यकता बन गई है।

मृदा स्वास्थ्य – फसल उत्पादकता की कुंजी

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन संस्थान की प्रमुख गतिविधि बनी रही तथा संस्थान ने सदैव मृदा पोषक तत्व प्रबंधन पर कार्य किया है जिसने मृदा की उर्वरता की स्थिति को अक्षुण्ण बनाए रखा है। उपोष्ण भारत में प्रचलित फसल प्रणाली किसी भी अन्य फसल प्रणाली से बेहतर है। 150 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस और 60 कि.ग्रा. पोटेशियम के साथ–साथ 10–15 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर की सिफारिश अब गन्ने की खेती के लिए मानक प्रथा है। संस्थान ने जल संरक्षण तकनीक के रूप में फसल की पत्तियों एवं अन्य अवशेषों की पलवार के माध्यम से इस विशाल जैवभार (12–15 टन/हेक्टेयर) का लाभकारी रूप से उपयोग करने के लिए प्रौद्योगिकियों का विकास किया है। पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण के लिए तेजी से अवशेष अपघटन और उपयुक्त मशीनरी की सहायता से उपयुक्त सूक्ष्मजैविक संवर्धन के प्रयोग के साथ सम्मिलित किया गया है। मृदा की भौतिक और रसायनिक दोनों स्थितियों में सुधार करने के लिए हरी खाद की फसल उगाने और मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता के समग्र सुधार के लिए गन्ने की लगातार खेती से खेत में जमीन के नीचे बनी कड़ी पर्त को तोड़ने के लिए गहरी जुताई की भी सिफारिश की गई है।

चीनी परता की समस्याओं का समाधान

परिपक्वता की अवधि बढ़ाने के लिए, संस्थान कटाई से पूर्व गन्ने की खड़ी फसल पर रसायनों का प्रयोग करके परिपक्वता को तेज करने की अनुशंसा करता है। इसी प्रकार, कटाई के उपरांत सुक्रोज की क्षति की समस्या के समाधान हेतु सोडियम मेटासिलिकेट और बेंजल्कोनियम क्लोराइड के मिश्रण के छिड़काव से गन्ने की कटी फसल पर छिड़काव करके प्रबंधन प्रभावी पाया गया।

गन्ना कृषि का मशीनीकरण

संस्थान अपनी स्थापना से ही गन्ना कृषि के यंत्रीकरण हेतु प्रयासरत है। संस्थान ने गन्ना विशिष्ट मशीनरी के विकास का नेतृत्व किया और धीरे–धीरे, संस्थान का कृषि अभियंत्रण संभाग भारत में गन्ने की खेती के यंत्रीकरण हेतु मशीनरी की अभिकल्पना एवं विकास में उत्कृष्टता का केंद्र बन गया है। गन्ना की बुवाई के लिए बैलों से लेकर ट्रैक्टर चलाने तक, अर्द्ध स्वचालित से स्वचालित तक, साधारण बुवाई यंत्र से लेकर यांत्रिक *ट्रैंच* बुवाई प्रणाली को पूरा करने तक का लंबा सफर तय किया है। कृषि अभियन्ताओं ने पेड़ी प्रबंधन यंत्र के विकास और लघु एवं सीमांत गन्ना किसानों के लिए छोटे उपकरणों के विकास या विभिन्न अंतकर्षण कार्यों को अंजाम देने का बीड़ा उठाया हुआ है।

गुड़ और खांडसारी और मूल्य संवर्धन

संस्थान ने कुशल ऊर्जा उपयोग के लिए 3–कड़ाह वाली भट्टियों के क्रमिक संशोधन के माध्यम से गुणवत्ता वाले गुड़ के उत्पादन में सुधार करने में एक बड़ा कदम उठाया है। ठोस गुड़ का आकार और उनकी उपयुक्त *पैकेजिंग* का भी मानकीकृत किया गया है। इसी प्रकार, मसालों और औषधीय जड़ी–बूटियों का उपयोग करके भंडारण क्षमता और आगे मूल्य संवर्धन करके, संस्थान ने उत्पाद विविधीकरण में भी मदद की है और बेहतर आय प्राप्त करने के लिए बाजार की नई संभावनाएं खोली हैं। संस्थान ने गुड़ और खांडसारी कुटीर उद्योग को आवश्यक बढ़ावा दिया है और ग्रामीण युवाओं और ग्रामीण उद्यमिता को शामिल करते हुए स्वयं सहायता समूहों के विकास में भी मदद की है।

नवीन किस्मों के विकास में योगदान

वर्ष 1969 में भाकृअनुप में शामिल होने के साथ, संस्थान को विशेष रूप से भारत के उपोष्ण क्षेत्र के लिए गन्ना और चुकंदर की किस्मों के विकास का भी अधिदेश मिला। एक राष्ट्रीय संस्थान के रूप में, संस्थान ने उपोष्ण कृषि–जलवायु के लिए उपयुक्त गन्ने की किस्म के लिए गन्ना पैतृक *स्टॉक* के साथ भाकृअनुप – गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर में स्थित राष्ट्रीय संकरण उद्यान (*एनएचजी*) सुविधा को समृद्ध करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कोलख 8001, कोलख 8102 और कोलख 94184 जैसी गन्ने की किस्में भारत के उपोष्ण क्षेत्र में किसानों और चीनी मिलों के बीच बेहद लोकप्रिय हुई। आज, कोलख 94184 किस्म अकेले 2.65 लाख हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र में उगाई जा रही है। संस्थान द्वारा विकसित कोलख 14201, कोलख 14204, कोलख 12207, कोलख 12209, कोलख 11203 और कोलख 11206 हाल ही में विकसित व्यावसायिक खेती हेतु संस्तुत की जाने वाली गन्ने की नवीनतम किस्में हैं।

चुकंदर

चुकंदर की खेती के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया गया और भारत में उष्ण कटिबंधीय चुकंदर की खेती के लिए उपयुक्त *पैकेज* और उत्पादन विधियों का विकास किया गया है। चुकंदर में प्रजनन के प्रयासों के परिणामस्वरूप दो लोकप्रिय चुकंदर की किस्में एलएस 6 और आईआईएसआर कम्पोजिट–1 का विकास

हुआ। ये दो किस्में गर्मी के महीनों के दौरान उपोष्ण भारत में प्रचलित परिपक्वता अवधि में तापमान में उचित वृद्धि को सहन करने में सक्षम हैं।

अखिल भारतीय गन्ना अनुसंधान समन्वित परियोजना (गन्ना)

विभिन्न राज्यों द्वारा आयोजित गन्ना और चुकंदर अनुसंधानों के समन्वय की जिम्मेदारी भी चुकंदर (1 अप्रैल 1970 से प्रभावी) और गन्ना (16 जुलाई 1970 से प्रभावी) पर दो अखिल भारतीय समन्वित परियोजनाओं के मुख्यालय के रूप में संस्थान को दी गई थी। आज अखिल भारतीय गन्ना अनुसंधान समन्वित परियोजना (गन्ना) देश के पांच गन्ना कृषि–जलवायु क्षेत्रों (उत्तर पश्चिम क्षेत्र, उत्तर मध्य क्षेत्र, उत्तर पूर्व क्षेत्र, पूर्वी तटीय क्षेत्र और प्रायद्वीपीय क्षेत्र) में 22 नियमित केंद्रों और 14 स्वैच्छिक केंद्रों के माध्यम से संचालित हो रही है। परियोजना ने भाकृअनुप–गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर में राष्ट्रीय संकरण उद्यान (*एनएचजी*) की स्थापना में एक उल्लेखनीय भूमिका निभाई है, जो भारत में गन्ने के लिए विकसित एक अनूठी सुविधा है, ताकि देश के सभी भाग लेने वाले केंद्रों के गन्ना प्रजनकों को सुविधा प्रदान की जा सके तथा वे अपनी पसंद के अनुसार संकरण कर सकें। अब तक गन्ने के 120 जीनप्ररूपों की पहचान की जा चुकी है और इनमें से 68 गन्ना किस्मों को *सी.वी.आर.सी.* द्वारा व्यावसायिक खेती हेतु जारी भी किया जा चुका है।

प्रसार और प्रशिक्षण गतिविधियाँ

चीनी उद्योग के गन्ना प्रबंधकों के लिए क्षमता निर्माण कार्यक्रम

संस्थान प्रत्येक वर्ष जुलाई माह के दौरान गन्ना प्रबंधन एवं विकास पर चीनी मिलों के गन्ना विकासकर्मियों के लिए नियमित रूप से 15–21 दिनों का प्रशिक्षण आयोजित करता है। इस कार्यक्रम में देश की विभिन्न चीनी मिलों के गन्ना प्रबंधकों/अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है। चीनी मिलों के अधीनस्थ क्षेत्रों में गन्ना प्रौद्योगिकियों को बड़े पैमाने पर अपनाने में तेजी लाने का लक्ष्य चीनी मिलों के गन्ना प्रबंधकों/अधिकारियों को *आईआईएसआर* प्रौद्योगिकियों के 'मशाल–वाहक' के रूप में तैयार करना और विकसित करना है।

कौशल विकास आवासीय प्रशिक्षण

संस्थान नियमित रूप से गन्ना उत्पादन तकनीकों, बीज गन्ना उत्पादन, गन्ना अनुसंधान में नए आयामों और गुड़ बनाने सहित गन्ना आधारित उत्पादन प्रणालियों से आय बढ़ाने के तरीकों और साधनों पर प्रशिक्षण के लिए विभिन्न हितधारक समूहों के लिए 1 से 7 दिनों की अवधि के आवासीय कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है।

अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन

नवीनतम विकसित गन्ना किस्मों और बीजगन्ना उत्पादन तकनीक के तेजी से प्रसार के लिए उत्तर प्रदेश, बिहार और महाराष्ट्र के विभिन्न जिलों में बड़ी संख्या में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन आयोजित किए जा रहे हैं। विभिन्न चीनी मिलों के अधीनस्थ क्षेत्रों में किसानों के खेतों में संस्थान द्वारा विकसित विभिन्न यंत्रों पर प्रदर्शन आयोजित किए गए।

सामाजिक–आर्थिक अध्ययन और किसानों की आय दोगुनी करना

किसानों की आय दोगुनी करने के लिए *आईआईएसआर–डीएससीएल* परियोजना *पीपीपी मोड* में कार्य कर रही है। गन्ना क्षेत्र की क्षमता का दोहन करके किसानों की आय को दोगुना करने की दिशा में, संस्थान ने 19 अगस्त, 2017 को डीसीएम श्रीराम लिमिटेड (*डीएसएल*), नई दिल्ली के साथ 4 चीनी मिलों के अधीनस्थ क्षेत्रों में सार्वजनिक निजी भागीदारी *मोड* में एक संयुक्त परियोजना पर एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं। परियोजना का मूल उद्देश्य उत्तर प्रदेश के लखीमपुर और हरदोई जिलों के 8 गाँवों में तकनीकी और मानव संसाधन विकास का हस्तक्षेप करके 2,100 हेक्टेयर भूमि पर फसल उगाने वाले सभी 2,028 किसान परिवारों की आय को दोगुना करना था। किसानों के एकीकृत विकास के लिए विकास विभागों, अन्य शोध संस्थानों, नमस्ते इंडिया जैसे निजी भागीदारों और गैर सरकारी संगठनों के साथ कार्यात्मक संबंध बनाए गए। परियोजना का सकारात्मक प्रभाव काफी स्पष्ट है क्योंकि गन्ने से होने वाली आय 2015–16 में ₹ 1.00 लाख प्रति हेक्टेयर से बढ़कर 2017–18 में लगभग ₹ 1.80 लाख प्रति हेक्टेयर हो गई। कुल आय में वृद्धि में गन्ना क्षेत्र का योगदान लगभग 60–65% होने की उम्मीद है।

मेरा गाँव मेरा गौरव

संस्थान के वैज्ञानिकों की तेरह बहुविषयक टीमों ने पांच जिलों नामतः सीतापुर–43, फैजाबाद–5, हरदोई–5, रायबरेली–7 और बाराबंकी–3 में "मेरा गाँव मेरा गौरव" योजना के तहत 63 गाँवों को अंगीकृत किया है। अंगीकृत लिए गए सभी 63 गाँवों में किसान गोष्ठी/बैठकें आयोजित की गयीं। वैज्ञानिकों–किसानों के विचार–विमर्श ने विभिन्न गाँवों में लगभग 5,000 किसानों की सक्रिय भागीदारी के साथ कृषि महत्व के अत्यंत महत्वपूर्ण मुद्दों का पता लगाने में मदद की है। वैज्ञानिकों ने किसानों को नई किस्में, बीज, प्रौद्योगिकियों और आदानों की जानकारी प्राप्त करने में मदद की, जिसके माध्यम से लगभग 1,000 हेक्टेयर क्षेत्र को फसलों की खेती के तहत लाया गया। इसके अलावा, अंगीकृत किए गए गाँवों में नई किस्मों, बीजों, प्रौद्योगिकियों और स्रोत की उपलब्धता के बारे में किसानों में जागरूकता पैदा की गई।

परामर्शी सेवाएँ

संस्थान चीनी मिल क्षेत्र में वैज्ञानिक गन्ना विकास, मशीनीकरण, पेड़ी प्रबंधन, अंतर्सस्य पद्धति में अन्य फसलों के साथ सह–फसली खेती, गन्ना और चुकंदर में समेकित कीट प्रबंधन, किस्म योजना, खरपतवार प्रबंधन, सूक्ष्म सिंचाई, गन्ना प्रजनन, चुकंदर उत्पादन तकनीक, बीज उपचार जैसे क्षेत्रों पर

परामर्श और संविदात्मक सेवाएं प्रदान करता है। स्वस्थ बीज उत्पादन प्रौद्योगिकी, ऊतक संवर्धन प्रयोगशाला/ऊतक संवर्धन तकनीक की स्थापना, जैवनियंत्रण प्रयोगशाला की स्थापना, गुड़ उत्पादन, गुड़ का मूल्यवर्धन और भंडारण, कटाई के बाद सुक्रोज की मात्रा में कमी को रोकने के लिए गन्ना प्रबंधन, उपयोग द्वारा गन्ने में सुक्रोज स्तर को बढ़ाना गन्ने की खेती में पकने वाले और पौधों के विकास नियामकों के उपयोग पर भी परामर्शी सेवाएँ विभिन्न हितधारकों को दीं जाती हैं।

उद्यमिता विकास

संस्थान बीज गन्ना उत्पादन और कृषि व्यवसाय पर किसानों के बीच उद्यमिता विकास पर प्रशिक्षण प्रदान कर रहा है। फलस्वरूप किसानों के खेतों में उन्नत किस्मों के गन्ने के स्वस्थ बीज का बड़ी मात्रा में उत्पादन हो रहा है। इसी तरह, संस्थान ने किसानों, गैर सरकारी संगठनों के कर्मियों, विकास अधिकारियों, कृषि स्नातकों और विभिन्न राज्य सरकारों के विस्तार कार्यकर्ताओं को उद्यमिता में ज्ञान और कौशल प्रदान करने के लिए ठोस प्रयास किए हैं।

राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों से समन्वयन

संस्थान ने कई राष्ट्रीय/अंतर्राष्ट्रीय अनुसंधान संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, चीनी मिलों और गैर सरकारी संगठनों के साथ संबंध विकसित किए हैं। संस्थान ने जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ गन्ना अनुसंधान में सामान्य रुचि के क्षेत्रों का पता लगाने का प्रयास किया है और ब्राजील, ऑस्ट्रेलिया, चीन, श्रीलंका आदि में इस उद्देश्य के लिए दौरे किए गए हैं। *इंटरनेशनल जेनेटिक रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट, इंटरनेशनल सोसाइटी ऑफ शुगरकेन टेक्नोलॉजिस्ट,* विभिन्न विदेशी विश्वविद्यालयों और गन्ने की फसल उगाने वाले संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, क्यूबा, चीन, श्रीलंका, बांग्लादेश, वियतनाम और ऑस्ट्रेलिया जैसे प्रमुख देशों की सरकारों/संस्थानों के साथ संस्थागत संबंध स्थापित करने के प्रयास भी किए गए हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर, संस्थान ने राष्ट्रीय स्तर के अनुसंधान संगठनों जैसे भाकृअनुप–गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर के साथ *क्रॉसिंग* कार्यक्रम तथा उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में गन्ना की बुवाई हेतु उन्नत कृषि यंत्र विकसित करने के लिए समन्वयन स्थापित किया है। इसने *सीएसआईआर*–राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ; *सीएसआईआर*–केंद्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान, लखनऊ; *सीएसआईआर*–केंद्रीय सगंध एवं औषधि पादप संस्थान, लखनऊ और राष्ट्रीय शर्करा संस्थान, कानपुर के साथ शोध हेतु समन्वयन स्थापित किए हैं। संस्थान में आयोजित संगोष्ठी/विचार–मंथन सत्रों में वैज्ञानिकों/अधिकारियों को आमंत्रित कर देश में राष्ट्रीय/राज्यस्तरीय गन्ना अनुसंधान संगठनों का भी सहयोग लिया जा रहा है। संस्थान ने गन्ना खेती हेतु मशीनों के निर्माण और संस्थान की प्रौद्योगिकी के माध्यम से गुड़ बनाने के लिए विभिन्न निजी एजेंसियों के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं।

संस्थान को प्रदान किए गए पुरस्कार

संस्थान या इसके वैज्ञानिकों को प्रदान किए गए कुछ महत्वपूर्ण पुरस्कारों में प्रतिष्ठित शान्ति स्वरूप भटनागर पुरस्कार (1976), वर्ष 2013–14, 2014–15, 2015–16, 2017–18 तथा 2019–20 के लिए राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार का राजभाषा कीर्ति पुरस्कार, वर्ष 2016–17 तथा 2019–20 के लिए राजश्री टंडन राजभाषा पुरस्कार, 2016–17 तथा 2019–20 का गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार, *ग्लोबल एग्रीकल्चर लीडरशिप* पुरस्कार (2016), भाकृअनुप– हरिओम आश्रम ट्रस्ट पुरस्कार (2012–13), पंडित दीनदयाल उपाध्याय सर्वश्रेष्ठ कृषि विज्ञान केंद्र (जोनल) पुरस्कार (2017) और महिंद्रा समृद्धि इंडिया एग्री *एवार्ड्स* (2018) का पुरस्कार प्रदान किया गया।

माघ अंधेरी सप्तमी, मेह बिज्ज दमकंत।
मास चारि बरसै सही, मत सौचें तू कन्त।।

यदि माघ बदी सप्तमी को बदली छाई हो और बिजली चमके तो आगामी बरसात में चार महीने अच्छी वर्षा होगी।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

फसल सुधार में भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान का योगदान

संगीता श्रीवास्तव, अश्विनी दत्त पाठक, वरुचा मिश्रा, राघवेन्द्र कुमार, मुकुन्द कुमार, संतेश्वरी, आँचल सिंह एवं आशुतोष कुमार मल्ल

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में उपोष्ण क्षेत्रों के लिए गन्ना किस्मों के मूल्यांकन के साथ आनुवंशिक सुधार गतिविधियाँ सन 1961 में शुरू हुईं। प्रारम्भ में इसके लिए गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर के अंतर्गत 'वनस्पति विज्ञान और प्रजनन' नामक एक छोटी इकाई की स्थापना की गई। कुछ वर्ष पश्चात, इसे वनस्पति विज्ञान और प्रजनन विभाग के रूप में स्थापित कर दिया गया, जो आगे चलकर वर्ष 1989 में फसल सुधार विभाग में परिवर्तित हो गया। संस्थान के मूलभूत उद्देशों के अनुरूप यह विभाग शर्करा फसलों (गन्ना और चुकंदर) पर मौलिक और अनुप्रयुक्त अनुसंधान में लगा हुआ है।

विभाग का मिशन

उच्च चीनी उत्पादकता के लिए लाल सड़न प्रतिरोधी गन्ने की किस्मों का विकास करना।

विभाग के मुख्य गन्ना अनुसंधान कार्य–क्षेत्र

- *सैकरम कौम्प्लेक्स* के माध्यम से गन्ने के आर्थिक महत्व के लक्षणों द्वारा आनुवंशिक वृद्धि करना
- उपोष्ण भारत के लिए उपयुक्त गन्ना किस्मों का विकास करना
- गैर परम्परागत तकनीक एवं जैव–प्रौद्योगिकी के माध्यम से प्रजनन क्षमता बढ़ाना
- बीज उत्पादन और विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता (*डस*) हेतु परीक्षण
- भारतीय कृषि जलवायु के लिए चुकंदर का प्रजनन और उसके अनुकूलन की दिशा में शोध कार्य
- सम्प्रति, विभाग की प्रमुख गतिविधियों को परम्परागत एवं गैर–परम्परागत विधियों से उपोष्ण कटिबंधीय भारत के लिए अधिक उपज एवं चीनी मात्रा वाली शर्करा फसलों का विकास करना, आनुवंशिक संसाधनों को एकत्र तथा उपयोग करना, समुन्नत गन्ना बीज उत्पादन और गन्ने में विशिष्टता एवं एकरूपता और स्थिरता (*डस*) परीक्षण, ऊतक संवर्धन, कोशिकानुवंशिकी, *डीएनए फिंगरप्रिंटिंग* एवं *मार्कर* पर कार्य, जीन की पहचान, *एसोसिएशन* तथा *क्यूटीएल मैपिंग* आदि में समूहीकृत किया जा सकता है।

1. गन्ने के आनुवंशिक संसाधन और पूर्व–प्रजनन संबंधित कार्य

गन्ने के आनुवंशिक सुधार का आरम्भ *सैकरम ऑफिसिनेरम, सैकरम स्पान्टेनियम* एवं अन्य *स्पेशीज़* के बीच संकरण के साथ हुआ। गन्ने की आनुवंशिक वृद्धि में 2n गुणसूत्र संचरण के कारण *सैकरम ऑफिसिनेरम* के उपयोग (*सैकरम ऑफिसिनेरम फीमेल पेरेन्ट* के रूप में) करने से उपज और गुणवत्ता में महत्वपूर्ण सुधार हुआ तब से आज तक अंतर–प्रजाति/किस्म का संकरण कायम है लेकिन धीरे–धीरे उपज और गुणवत्ता में एक ठहराव का अनुभव किया जा रहा है। इस कारण *सैकरम* और संबंधित *जेनेरा* के अब तक अप्रयुक्त परिग्रहणों (अभिवृद्धि) से नई आनुवंशिक परिवर्तनशीलता का परिचय देना वांछनीय हो गया है। दुनिया में गन्ने की खेती अधिकांशतया सीमित संख्या में जीवद्रव्य से बने क्रॉस से की जाती है जिन्हें भारत और जावा में 19वीं शताब्दी के अंत और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में चयन किया गया था। मूल *क्रॉस* में केवल 13 *क्लोन* शामिल थे, जिनमें से आठ *सैकरम* ऑफिसिनेरम के, दो *सैकरम स्पान्टेनियम* के, एक *सैकरम स्पान्टेनियम* और *सैकरम ऑफिसिनेरम* का प्राकृतिक संकर, तथा *सैकरम साइनेंस* के दो *क्लोन* थे। उपोष्ण कटिबंधीय भारत में कोजे 64 ने अस्सी के दशक में अपने संबंधित क्षेत्रों की परता बढ़ाई। इसके बाद से गुणवत्ता की बाधा को तोड़ पाना मुश्किल हो गया था किन्तु अब यह लक्ष्य प्राप्त कर लिया गया है। इसके अतिरिक्त उपोष्ण कटिबंधीय भारत में शीघ्र परिपक्वन वाली किस्मों में कम तापमान के कारण खराब अंकुरण होता है क्योंकि इन्हें शरद ऋतु में काटा जाता है। इसके फलस्वरूप पेड़ी की उपज में गिरावट आती है एवं उत्पादन भी खराब होता है। नब्बे के दशक में, गन्ना प्रजनन संस्थान द्वारा अंतर–प्रजाति संकरण पर काम शुरू किया गया था और भारत के विभिन्न कृषि–जलवायु क्षेत्रों में गन्ने के विकसित कृन्तकों का परीक्षण किया गया था। इस संबंध में *सैकरम* प्रजाति और *एरियन्थस स्पीशीज* से जुड़े संकर ने काफी संभावनाएं दिखाई हैं। पिछले दो दशकों के दौरान जैविक और अजैविक प्रतिबलों के प्रतिरोधक क्षमता वाले कई बहुत अच्छे और मजबूत कृन्तकों की उत्पत्ति *एरियन्थस* के तहत हुयी है जिसके कारण से यह अपनी ओर ध्यान आकर्षित करता है। भाकृअनुप–भागअनुसं, लखनऊ इन

जीन स्रोतों को लक्षित प्रजनन और आनुवंशिक *स्टॉक* के विकास के लिए सक्रिय रूप से उपयोग कर रहा है।

उपोष्ण भारत में गन्ना फसल सुधार के लिए गन्ने के जननद्रव्य का मूल्यांकन और संवर्धन प्रारम्भ किया गया था। वर्ष 1994 में, संस्थान के उद्देशों को पुनः संशोधित किया गया। औद्योगिक आवश्यकताओं और फसल उगाने की परिस्थितियों के आधार पर आनुवंशिक संसाधनों का उपयोग प्रजनन कार्यक्रमों में किया जा सकता है तथा भाग लेने वाले केंद्रों के लिए लक्षित प्रजनन हेतु *जीन इन्ट्रोगेशन* पर एक व्यापक कार्यक्रम की आवश्यकता है। प्रजनन कार्यक्रम में, पहचाने गए जीन स्रोतों का उपयोग जलवायु परिवर्तन और नई औद्योगिक मांग के अनुकूल पुनः आनुवंशिक संयोजक विकसित करने के लिए किया जा रहा है। हम अधिक चीनी उत्पादन के लिए *सैकरम ऑफिसिनेरम,* लाल सड़न प्रतिरोध और अजैविक सहनशीलता के लिए *सैकरम स्पान्टेनियम, बायोमास* और कम तापमान पर कटाई के तहत चोटी बेधक सहिष्णुता तथा उच्च पेड़ी प्राप्त करने के लिए *एरियन्थस* प्रजाति का उपयोग कर रहे हैं। हम जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के लिए अलग तरह के संकरों का मूल्यांकन कर रहे हैं।

(i) गन्ना जननद्रव्य का रखरखाव और मूल्यांकन

संस्थान द्वारा *सैकरम आफिसिनेरम, सैकरम बारबेरी, सैकरम साइनेन्स, आईएसएच, इक्षु क्लोन, एलजी सिलेक्शन,* वाणिज्यिक संकर, *सोमाक्लोन* आदि से युक्त 350 जीनप्रारूपों के संग्रह को बनाए रखा गया है। किसानों को अपनी पसंद की किस्मों का चयन करने का अवसर प्रदान करने के लिए हर साल उत्तर प्रदेश की 30 सर्वश्रेष्ठ शीघ्र पकने वाली और मध्य देर से पकने वाली किस्मों से युक्त किस्मों का *कैफेटेरिया* बनाए रखा जाता है।

(ii) गन्ने के *जेनेटिक स्टॉक*

शर्करा के लिए एक प्रजनन लाइन एलजी 95053 तथा लाल सड़न रोग के लिए, गन्ना प्रजनन *स्टाक* एलजी 05817 पंजीकृत किए गए हैं और प्रजनन कार्यक्रम में उपयोग के लिए 110 आनुवंशिक *स्टॉक,* राष्ट्रीय संकरण उद्यान, कोयम्बटूर भेजे जा चुके हैं।

अ. गन्ना प्रजनन *स्टॉक* एलजी 95053, *एनबीपीजीआर* में पंजीकृत किया गया है, जिसकी पहचान संख्या *आईसी* 553283 और पंजीकरण संख्या *आईएनजीआर* संख्या 09054 है। इसकी विशेषताएँ निम्न हैं: शीघ्र परिपक्व होने वाला, नियमित रूप से फूल आने के साथ उच्च शर्करा कृन्तक; प्रारंभिक उच्च शर्करा संचय क्षमता, उच्च अनुपात देने वाली संतति के रूप में प्रजनक *एलजी* 9503, को 89003 x कोसी 671 की संतति के चयन द्वारा प्राप्त किया गया है।

ब. लाल सड़न रोग प्रतिरोध के लिए गन्ने के प्रजनन स्टॉक का विकास भी किया जा रहा है। गन्ना कृन्तक एलजी 05817 को 2018–19 के दौरान *एनबीपीजीआर* में *आईडी* नंबर *आईएनजीआर* 18035 के साथ पंजीकृत किया गया है।

स. **उच्च शर्करा गुणों के लिए *प्रीब्रीडिंग* और आनुवंशिक *स्टॉक* का विकास:** 76 उच्च शर्करा आनुवंशिक *स्टॉक* को संतति परीक्षण और संकरण कार्यक्रमों में पैतृक कृन्तक के रूप में उपयोग करने के लिए भाकृअनुप–गन्ना प्रजनन अनुसंधान, कोयंबटूर में राष्ट्रीय संकरण उद्यान (*एनएचजी*) में शामिल किया गया है। गन्ने में सुक्रोज से जुड़े *जीनोमिक* हिस्सों के मानचित्रण के लिए *बाइपेरेन्टल क्रॉस* और *सेल्फ* से अलग–अलग आबादी विकसित की गई है और *फीनोटाइपिंग* की गयी है।

2. उपोष्ण भारत के लिए गन्ना की उपयुक्त किस्मों का विकास

फसल सुधार विभाग उपोष्ण भारत के लिए गन्ने की किस्मों के विकास में निरंतर प्रयासरत है, विशेष रूप से उच्च शर्करा, बेधक कीट, लाल सड़न एवं अजैविक प्रतिबलों (जल भराव और सूखे) के प्रति सहिष्णुता के लिये कई प्रजातियों को *एक्रीप, इसमा* एवं राज्य स्तर के अंतर्गत बहु–स्थानिक परीक्षण के लिए चयनित किया गया हैं। इस दिशा में व्यावसायिक खेती के लिए कई किस्में विमोचित की गई है। इसके पूर्व गन्ने की दो किस्मों, कोलख 8001 और कोलख 8102 को भारत के उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों में व्यावसायिक खेती के लिए संस्तुत किया गया था। कोलख 8001 को गुजरात राज्य में भी व्यावसायिक खेती के लिए संस्तुति दी गई थी। फसल सुधार के प्रयास निरंतर किए जा रहे हैं और विभाग ने गन्ना पर अखिल भारतीय समन्वित परियोजना के तहत राष्ट्रीय परीक्षण कार्यक्रम में कई कृन्तकों का योगदान दिया है। इसके अलावा, संस्थान ने उत्तर प्रदेश और बिहार के राज्यों में किस्मों के परीक्षण के लिए भी किस्में दी हैं।

विगत दस वर्षों के दौरान वाणिज्यिक खेती के लिए गन्ने की 12 किस्में विकसित की गयी हैं (तालिका 1)। इसमें से, 9 गन्ने की किस्में भारत के उत्तर पश्चिम क्षेत्र के लिए तथा तीन किस्में उत्तर मध्य क्षेत्र के लिए केंद्रीय फसल उप–समिति द्वारा कृषि फसलों की किस्मों के मानक, अधिसूचना और विमोचन के अंतर्गत विमोचित की गयी हैं। उत्तर प्रदेश के सभी अंचलों में व्यावसायिक खेती के लिए राज्य गन्ना किस्म विमोचन समिति द्वारा गन्ना किस्म कोलख 14201 (इक्षु 10) को उत्तर प्रदेश द्वारा जारी किया गया है। *पीपीवी और एफआर* अधिनियम, 2001 के तहत इस

संस्थान द्वारा गन्ने की विकसित किस्में

तालिका 1: संस्थान द्वारा विकसित गन्ना किस्मों का विवरण

अधिसूचना / विमोचन का वर्ष	किस्म	प्रचलित उपनाम	व्युत्पत्ति	उत्पादन क्षमता (टन / हे.)	सुक्रोज (%)	इक्षु रस में पोल प्रतिशत
परिपक्वता समूहः शीघ्र						
2008	कोलख 94184	बीरेन्द्र	कोलख 8001 *सेल्फ*	76.0	18.0	17.9
2012	कोलख 9709	-	एलजी 7230 *जीसी*	75.0	18.1	13.3
2013	कोलख 07201	इक्षु 1	कोलख 8102 × कोजे 96260	84.3	16.4	12.3
2018	कोलख 11203	इक्षु 5	कोलख 8102 × को 1148	81.9	18.4	13.4
2019	कोलख 11207	इक्षु 6	कोलख 8002 *सेल्फ*	75.4	16.9	13.2
2020	कोलख 14201	इक्षु 10	को 0238 *जीसी*	81.9	18.7	13.9
2021	कोलख 15201	इक्षु 11	कोशा 8436 *जीसी*	93.9	17.6	13.6
	कोलख 15466	इक्षु 13	कोशा 8436 *जीसी*	86.1	17.5	13.5
परिपक्वता समूहः मध्य देर						
1988	कोलख 8001	-	को 62174 × को 1148	75.0	18.5	14.3
1996	कोलख 8102	-	को 1158 *जीसी*	80.0	18.0	16.8
2018	कोलख 09204	इक्षु 3	कोलख 8102 × कोजे 64	82.8	17.0	13.2
	कोलख 11206	इक्षु 4	कोपन्त 90223 × को 62198	91.5	17.6	13.4
2019	कोलख 12209	इक्षु 7	एलजी 95053 × कोपन्त 90223	77.5	17.7	14.3
2020	कोलख 14204	इक्षु 8	कोलख 8002 × कोसे 92423	92.7	17.7	13.8
2021	कोलख 15207	इक्षु 12	को 88039 *जीसी*	84.5	18.7	14.5

तालिका 2: *एनबीपीजीआर* के साथ पंजीकरण के साथ राष्ट्रीय संकरण उद्यान में शामिल की गयी नई किस्में

वर्ष	प्रजाति	*एनबीपीजीआर* की राष्ट्रीय पहचान संख्या (आईएसी)
2010–15	एलजी 95053 (को 89003 × कोसी 671) - शीघ्र, उच्च शर्करा	553283
2017–18	कोलख 09204 (इक्षु 3)	623150
	कोलख 11206 (इक्षु 4)	625722
	कोलख 11203 (इक्षु 5)	625721
2018–19	कोलख 11207 (इक्षु 6)	628156
	कोलख 12209 (इक्षु 7)	628157
2020–21	कोलख 14201 (इक्षु 10)	636653
	कोलख 14204 (इक्षु 8)	636654
2018–19	एलजी 05817 – (लाल सड़न सहिष्णु)	आईएनजीआर 18035
-	एलजी 95053 –(शर्करा)	आईएनजीआर 09054

संस्थान से किस्मों के पंजीकरण के लिए आवेदन भी किए गए हैं। चार गन्ना किस्मों, कोलख 11203 (इक्षु 5), कोलख 11206 (इक्षु 4), कोलख 12207 (इक्षु 6), कोलख 12209 (इक्षु 7) को पादप विविधता और किसान अधिकार संरक्षण के तहत पंजीकरण के लिए आवेदन किया गया है। उपरोक्त किस्मों के विधिवत भरे हुए आवेदन पौध किस्म और किसान अधिकार संरक्षण प्राधिकरण, नई दिल्ली को संरक्षण के लिए अधिनियम, 2001 के अंतर्गत जमा किए गए हैं।

तालिका 3: संस्थान द्वारा विकसित राष्ट्रीय संकरण उद्यान में सम्मिलित गन्ने के प्रजनन *स्टाक*

उच्च शर्करायुक्तः एलजी 94144, 94126, 94164, 95037, 95047, 95053, 95056, 95123, 96001, 96029, 96115, 97009, 97022, 97023, 97032, 97050, 97112, कोलख 97147, 94184, 97169, 97154, 99001, 99017, 99112, 99114, 99118, 99122, 99157, 99164, 99183, 99190, 01002, 01009, 01014, 01016, 01030, 01116, 01118, 01154, 01170, 02005, 02057, 02100, 05433, 05434, 05460, 05493, 07408, 07482, 07501, 07560, 08422, 02005, 05302, 05403, 09487, 09475, 14482, 14564, 11440, 14436, 14450, 14568, 05464, 05470, 05480, 07408, 07482, 07501, 07560, 08422, 07503, 08478, 07595, 07528, 07443

लाल सड़न रोग के तीन प्रचलित प्रभेद (*सीएफ* 08, 09 एवं 11) के लिए मध्यम प्रतिरोधीः एलजी 05810 एवं 05828

लाल सड़न रोग के चार प्रचलित आइसोलेट्स के (*सीएफ* 01, 08, 09, एवं 11) लिए मध्यम प्रतिरोधी, उच्च शर्करा एवं अधिक पेड़ी क्षमताः एलजी 05823, 05817, 7671, 7672

चोटी बेधक सहिष्णु: एलजी 04601, 04602, 04603, 04604, 04605, 05609, 05610, 06618, 07615, 07650, 07675, 07680, 07690, 07692

लाल सड़न सहिष्णु एवं उच्च शर्करा युक्त: एलजी 05817, 05823, 05828, 06810, 06839, 08865, 08866, 07503, 08478, 07595, 07528, 07433

लाल सड़न सहिष्णु एवं उच्च शर्करा युक्त सोमाक्लोन्स: एलजी 7641 एवं एलजी 7671

साथ ही इसी दौरान गन्ने के कई कृन्तक बहु–स्थानीय परीक्षण के लिए स्वीकृत किए गए हैं। इस अवधि में अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना के तहत बहु–स्थानीय परीक्षण के लिए कुल 110 गन्ना कृन्तक स्वीकार किए गए हैं। एलजी 011707, एलजी 08758, एलजी 11706, एलजी 10726 ने सिंचित और सूखे की स्थिति में उपज में योगदान देने वाले लक्षणों और रस की गुणवत्ता के लिए कोलख 94184 से बेहतर प्रदर्शन किया है ।

3. गन्ना सुधार के लिए गैर परम्परागत तकनीक का उपयोग

इस क्षेत्र में संस्थान ने गन्ना ऊतक संवर्धन (सूक्ष्म प्रजनन, *सोमाक्लोनल* भिन्नता और आनुवंशिक परिवर्तन) एवं कोशिका आनुवंशिकी पर ध्यान केंद्रित किया है, जबकि जैव प्रौद्योगिकी के अंतर्गत *जीनप्रारूपों* और किस्मों के लक्षण वर्णन, आनुवंशिक विचलन अध्ययन, *मार्कर्स* की पहचान के लिए गन्ना ईएसटी के विकास और चीनी तथा लाल सड़न प्रतिरोधक क्षमता आदि के लिए चिन्हक सहायित चयन *(एमएएस)* को भविष्य में उपयोग करने के लिए तकनीक विकसित करने का प्रयास किया गया है।

अ. गन्ना में कोशिकानुवंशिकीय अध्ययन

(i) संवर्धित गन्ना जीनप्रारूप के निहित गुणसूत्र मोज़ेक

वाणिज्यिक या निकट वाणिज्यिक गन्ना जीनप्रारूप के दैहिक गुणसूत्रों के अध्ययन ने गन्ने में गुणसूत्र मोज़ेक और संख्यात्मक गुणसूत्र विपथन की उपस्थिति को दर्शाया। उच्च गुणसूत्र मोडल संख्या वाले जीनप्रारूप में असमान गुणसूत्र संख्या की व्यापक श्रेणी पाई गई है। को 1148, कोशा 767, कोजे 64 तथा कोपन्त 84211 जैसी लोकप्रिय किस्में जो लम्बे समय से प्रयोग की जा रही थी, उनमें अन्य जीनप्रारूपों की तुलना में अधिक क्रोमोसोम मोज़ेक पाया गया।

(ii) *सैकरम स्पोंटेनियम* में साइटोटाइप पहचान

संस्थान के खरिका प्रक्षेत्र में संरक्षित, विभिन्न भौगोलिक अनुकूलन और अलग–अलग *फोटोपीरियड* का प्रतिनिधित्व करने वाले *एस. स्पान्टेनियम क्लोनों* के संग्रह से आठ नए *साइटोटाइप* की पहचान की गई। इन जीनप्रारूपों के द्विगुणित गुणसूत्रों की संख्या $2n = 48$ से 112 तक है।

(iii) सैकरम प्रजाति के गुणसूत्रों पर आरडीएनए जीन को फिश आधारित तकनीक द्वारा पता लगाना

25S *आरडीएनए* और 5S *आरडीएनए* अनुक्रमों का उपयोग करके स्वउद्दीपित अविस्थापन संकरण फिस तकनीक से उत्पन्न फ्लोरोसेंस द्वारा गन्ने की किस्मों में प्रजातियों के *जीनोम* के अंशों को विभेदित किया गया है। 25S और 5SrDNA प्रोब का प्रयोग गन्ने में *स्पेशीज़* विशिष्ट गुणसूत्रों को पहचानने हेतु किया गया। किसी भी गन्ना संकर किस्म में इस कोशिकीय आण्विक *चिन्हक* का प्रयोग गुणसूत्रों की पहचान के लिए हो सकता है।

(iv) सेल्फिंग द्वारा क्रोमोसोम परिवर्तन

को 1148 और कोलख 8102 में *सेल्फिंग* द्वारा प्राप्त संतति कृन्तकों में गुणसूत्रों की संख्या में व्यापक परिवर्तन और उनकी भिन्नता की सीमा पाई गई तथा आमतौर पर *सेल्फिंग* द्वारा प्राप्त संतति में जनकों के मुकाबले गुणसूत्र संख्या सीमा में कमी पाई गई। साथ ही मात्रात्मक विशेषताओं के संदर्भ में गन्ने की सामान्य वृद्धि शक्ति में भी गिरावट देखी गयी।

(v) उपोष्ण परिस्थितियों के अनुकूल गन्ने के जीनप्रारूप में प्रजाति गुणसूत्र की भूमिका

गन्ना के जीनप्रारूप में जनक कृन्तक तथा कृन्तक पीढ़ी में गुणसूत्रों का अध्ययन करने से पता चला कि उनके *क्रॉस* व्युत्पन्न *क्लोनल* आबादी में, गुणसूत्र संख्या भिन्नता की सीमा क्रमिक *क्लोनल* पीढ़ियों में धीरे–धीरे कम हो गई, जिसने संतति पौधों में गुणसूत्र संख्या के स्थिरीकरण की ओर एक प्रवृत्ति का संकेत दिया। संतति पादपों के गुणसूत्रों पर आरडीएनए जांचों की भौतिक स्थिति से, यह सिद्ध हो गया है कि धीरे–धीरे विलुप्त हो रहे गुणसूत्र मुख्य रूप से *सैकरम स्पान्टेनियम* प्रजाति के हैं।

(vi) जलभराव की स्थिति में गन्ने की जड़ों का अध्ययन

जलभराव की गंभीर समस्या से गन्ना उत्पादन प्रभावित है। इस संदर्भ में, यह पाया गया कि वे सभी किस्में, जिन्होंने जलभराव की स्थिति में संतोषजनक प्रदर्शन किया (जैसे कोपन्त 93227, कोलख 9618 और कोलख 9617), इनकी जड़ों में अच्छी तरह से विकसित वायु स्थान पाये गए। जिससे ज्ञात होता है कि जलभराव की स्थिति में गन्ने की जड़ों में इस तरह के विकसित *एरेन्काइमा* का निर्माण जीनप्रारूप के बेहतर प्रदर्शन की ओर केन्द्रित करता है।

ब. गन्ने के आनुवंशिक सुधार के लिए ऊतक संवर्धन तकनीक का उपयोग

(i) वांछनीय आनुवंशिक भिन्नता के लिए *सोमाक्लोन*

गन्ने में वांछनीय आनुवंशिक भिन्नता को बढ़ाने के लिए *सोमाक्लोनल* भिन्नता की प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया

गया है। विकसित *सोमाक्लोन्स* में इंटरनोड एवं कली के आकार, फूलों के व्यवहार, प्ररोहों के रंग आदि दिलचस्प परिवर्तन देखे गए हैं, हालाँकि कई मामलों में, ये लक्षण कृन्तक पीढ़ियों में कायम नहीं रह पाये। उल्लेखनीय *सोमाक्लोन* एससी 64–101 (सीएफ 08 के विरुद्ध मध्यम प्रतिरोधी) और कोशा 767 के चार *सोमाक्लोन* हैं जिन्होंने सीएफ 09 पर मध्यम प्रतिरोधक प्रतिक्रिया दिखाई है (जिसके विरुद्ध कोशा 767 अत्यधिक संवेदनशील है)।

(ii) गन्ने में आनुवंशिक रूप से परिशुद्ध पौधों का सूक्ष्मप्रवर्धन और मूल्यवर्धन

पुरानी *एलीट* किस्मों के कायाकल्प और गन्ने की नई जारी किस्मों के तेजी से गुणन के लिए गन्ना *एडोप्टिव* अनुसंधान कार्यक्रम (*एसएआरपी सार्प*) योजना के तहत इस संस्थान में गन्ने में सूक्ष्म प्रसार पर काम शुरू किया गया। *एसएसआर* एवं *आईएसएसआर* जैसे मजबूत *मार्कर सिस्टम* और रोग अनुक्रमण के माध्यम से पौधों में विषाणुजनित रोगों से मुक्ति हेतु आनुवंशिक निष्ठा सुनिश्चित करने के अलावा *माइक्रोप्रोपेगेशन प्रोटोकॉल* को मानकीकृत किया गया है। *ग्लूकोनासेटोबैक्टर डायज़ोट्रोफिकस* के *इन–विट्रो इनोक्यूलेशन* से सूक्ष्म प्रचारित पौधों के मूल्यवर्धन के लिए एक प्रोटोकॉल विकसित किया गया है जिसके परिणाम स्वरूप उच्च उत्पादकता प्राप्त हुई है।

(iii) ऊतक संवर्धन तकनीकों के माध्यम से रोग मुक्त और आनुवंशिक रूप से शुद्ध बीज गन्ना का उत्पादन

नवीनतम विकसित किस्मों (जैसे कोलख 94184, कोलख 9709, कोलख 11203, कोलख 12207, कोलख 12206, कोलख 12209, कोलख 14201 और कोलख 14204) के *एपिकल शूट एक्सप्लांट्स* का उपयोग करके इन *विट्रो क्लोनल* प्रसार में तेजी लाई गयी जिनमें हर साल किस्मों के >10,000 पौधे उत्पादित किए जा रहे हैं तथा जिन्हें अभिजनक बीज उत्पन्न करने के लिए खेत में स्थानांतरित किया जाता रहा है।

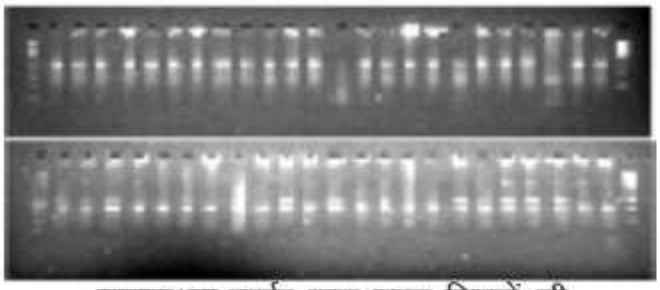

एसएसआर मार्कर द्वारा गन्ना किस्मों की *डीएनए फिंगरप्रिंटिंग*

(iv) गन्ने में धीमी वृद्धि वाली *टिश्यू कल्चर* तकनीक द्वारा *इन विट्रो* संरक्षण *प्रोटोकॉल* का विकास

धीमी वृद्धि वाली *कल्चर* तकनीक का उपयोग कर गन्ना जीनप्रारूप खाकाई के *इन विट्रो* संरक्षण के लिए एक प्रोटोकॉल को मानकीकृत किया गया। इसके अंतर्गत गन्ने के *कल्चर* को बिना किसी *सब–कल्चर* के 365 दिनों तक संग्रहित किया जा सकता है। इस तरह के संग्रहित धीमी गति से बढ़ने वाली *शूटिंग* से पुनर्प्राप्त *कल्चर* में कोई आनुवंशिक भिन्नता नहीं होती है।

(v) *एनसीएस–टीसीपी* के तहत आनुवंशिक निष्ठा परीक्षण और *वायरस इंडेक्सिंग* के लिए *डीबीटी*–मान्यता प्राप्त परीक्षण प्रयोगशाला (*एटीएल*)

डीबीटी–एटीएल प्रयोगशाला में गत पांच वर्षों में कुल 27,657 स्टॉक कल्चर (5,186 गन्ना + 22,471 केले के नमूने) जिनमें 12,020 (2,536 गन्ना + 9,484 केला), और 15,637 (2,650 गन्ना + 12,987 केला) पौधों के नमूनों का परीक्षण किया गया है जो लगभग ~15 *मिलियन टिशू कल्चर*–उत्पन्न की गई गुणवत्ता वाली रोपण सामग्री के प्रमाणीकरण के बराबर हैं।

(vi) शाकनाशी प्रतिरोधकता के लिए पराजीनिक गन्ने का विकास

गन्ने के आनुवंशिक परिवर्तन का मानकीकरण *एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमफेशियन्स स्ट्रेन* LBA4404 का उपयोग करके किया गया था, जिसमें *बाइनरी वेक्टर* pCAMBIA 2301 *हार्बरिंग* nptII और β–*ग्लुकुरोनिडेस (गस) रिपोर्टर जीन* शामिल हैं। सह–खेती के बाद *लीफ रोल एक्सप्लांट्स* के साथ किए गए क्षणिक β–*ग्लुकुरोनिडेस जीन* को जब परखा गया तब उसमें अलग–अलग नीले धब्बे दिखाई दिए। प्राप्त किए गए कल्पित ट्रांसफॉर्मैंट्स को जीन–विशिष्ट *पीसीआर* का उपयोग करके β–*ग्लुकुरोनिडेस* के साथ–साथ *एनपीटी* II *जीन* के लिए जांचा गया।

स. गन्ने में कार्यात्मक *जीनोमिक्स* और जीन पहचान अध्ययन

(I) व्यक्त अनुक्रम टैग (*ईएसटी*) का विकास, पानी की कमी के प्रतिबल की पहचान और लाल सड़न रोग से संबंधित जीन

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ और दिल्ली विश्वविद्यालय, दक्षिणी परिसर के बीच गन्ने के कार्यात्मक जीनोमिक्स पर एक *डीबीटी*–वित्त पोषित सहयोगी परियोजना के तहत, गन्ना किस्म कोशा 767 के विभिन्न ऊतकों के लिए सामान्य *सीडीएनए लाइब्रेरी* के रूप में गन्ना व्यक्त अनुक्रम *टैग (ईएसटी)* का पहला भारतीय संसाधन तैयार किया गया है। इसके अलावा सूखे, जलभराव और लाल सड़न के खिलाफ नामित किस्मों के तनावग्रस्त और सामान्य पौधों से आण्विक *लाइब्रेरी* का निर्माण किया गया है। सूखे और लाल सड़न की स्थिति में, को 1148, जल भराव के लिए सहिष्णु किस्म कोलख 8102 (गन्ने की एक

भारतीय उपोष्ण किस्म) के स्वस्थ और लाल सड़न से संक्रमित ऊतकों से >35,000 व्यक्त अनुक्रम *टैग* (*ईएसटी*) उत्पन्न करने के लिए अनुक्रमण किया गया है। *बायोइनफॉरमैटिक्स* द्वारा सार्वजनिक *डेटाबेस* में मौजूद गन्ना *ईएसटी* के साथ 4,087 समूहों की पहचान की जिसमें 85 *ऐसे क्लस्टर* शामिल हैं जो अनुमानतः *कोलेटोट्राईकम फाल्केटम* (लाल सड़न) संक्रमण पर व्यक्त होते हैं और जिनको पहले रिपोर्ट नहीं किया गया है। चयनित ईएसटी समूहों की *रियल–टाइम रिवर्स ट्रांसक्रिप्शन–पीसीआर प्रोफाइलिंग* ने कई गन्ना समूहों की पहचान की जो जैविक और अजैविक प्रतिबलों की स्थितियों के जवाब में अंतर अभिव्यक्ति दिखाते हैं। गन्ने में पच्चीस अजैविक प्रतिबल–संबंधी समूहों ने जल की कमी वाले प्रतिबल के दौरान दो गुना सापेक्ष अभिव्यक्ति दिखाई है। इसी तरह, लाल सड़न रोग संबन्धित *ईएसटी* समूहों की पहचान की गई है जो गन्ने की लाल–सड़न संवेदनशील और लाल–सड़न प्रतिरोधी किस्मों का मूल्यांकन कर सके।

(ii) लाल सड़न रोग के प्रतिरोधक जीन अनुरूप दृष्टिकोण

संरक्षित आर–जीन क्षेत्रों से *डीजेनेरेटड प्राइमरों* को गन्ने के लाल सड़न रोगों के लिए विशिष्ट प्रतिरोध जीन अनुरूप की पहचान करने के लिए *डिज़ाइन* किया गया है और चार कल्पित प्रतिरोधक जीन अनुरुपों की पहचान की गई है। लाल सड़न *इनोक्यूलेशन* पर *पीआर–प्रोटीन* जैसे *काईटीनेज* और β–1,3–*ग्लूकेनेस* की अभिव्यक्ति में *मॉड्यूलेशन* का भी *आरटी–पीसीआर* द्वारा जीन विशिष्ट प्राइमरों का उपयोग करके अध्ययन किया गया है।

(iii) गन्ने में लाल सड़न रोग के खिलाफ प्रतिरोध जीन *एनालॉग्स* की पहचान और अभिव्यक्ति विश्लेषण

पादप रोग प्रतिरोधक जीन के संरक्षित रूपांकनों से कल्पित प्रतिरोधक जीन अनुरूप (*आरजीए*) को *होमोलॉजी–*आधारित *पीसीआर* का उपयोग करके गन्ने से अलग किया गया और लाल सड़न *इनोकुलेटेड* और अनुपचारित नमूनों के प्ररोहों को ऊतक से पृथक कुल *आरएनए* का उपयोग करके मान्य किया गया था। प्रतिरोध जीन अनुरूप बहुरूपता (*आरजीएपी*) गन्ने में जीन विविधता विश्लेषण के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में स्थापित किया गया है।

(iv) लाल सड़न रोगजनकों से युक्त गन्ने में छोटे *आरएनए* प्रतिलेखों की रूपरेखा और भविष्यवाणी

गन्ने की लाल सड़न रोग प्रतिरोधी (बीओ 91) तथा संवेदनशील (कोजे 64) किस्मों से पैथोजन इनोकुलेशन के बाद विभेदित रूप से व्यक्त 90 miRNA और 472 नवीन miRNA का पूर्वानुमान किया गया है। इसमें कोशिकीय और चयापचय प्रक्रियाओं, कोशिका या *ऑर्गेनेल* विकास एवं रोग प्रतिरोध तंत्र से संबन्धित जीन के लक्ष्य उपस्थित थे और अब उनका सत्यापन किया जा रहा है।

(v) आण्विक नैदानिक किट का विकास

डीबीटी वित्त पोषित परियोजना के तहत, गन्ने के लाल सड़न और कंडुआ रोगों के लिए *पीसीआर* आधारित एक अत्यधिक संवेदनशील और विशिष्ट नैदानिक *किट* विकसित की गई है ताकि लाल सड़न रोग कारक *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* के आकस्मिक आगमन का पता लगाया जा सके और गन्ने की कली में *स्पोरिसोरियम सिटामाइनम*, (जो गन्ने के कंडुआ रोग के रोगजनक है) के संक्रमण का पता लगाया जा सके ताकि रोगग्रस्त गन्ने का उपयोग गन्ने की बुवाई के लिए नहीं किया जाए और इन रोगों को फैलने से रोका जा सके।

(vi) सुक्रोज और लाल सड़न प्रतिरोध के विशेष संदर्भ में गन्ना (*सैकरम* प्रजाति *कॉम्प्लेक्स*) में *जीनोमिक* चयन–आधारित त्वरित प्रजनन

विभिन्न गन्ना अनुसंधान केंद्रों से लगभग 500 अत्यधिक विविध गन्ना जीनप्रारूपों को प्रशिक्षण *पौपुलेशन* के रूप में चुना गया है। 10 *मार्करों* का उपयोग करके उनकी *जीनोटाइपिंग* पूरी हो गई है। जनसंख्या संरचना की पहचान के लिए मार्कर डेटा का विश्लेषण किया गया है और लगभग 200 जीनप्रारूपों की प्रशिक्षण जनसंख्या का गठन किया गया है जो अधिकतम उपलब्ध विविधता को लेखाँकित करने में सक्षम होगा। सुक्रोज मात्रा और पेराई योग्य गन्ने के लिए प्रशिक्षण जनसंख्या को *फीनोटाइप* किया गया है। *जीनोटाइपिंग–बाइ–सीक्वेंसिंग डेटा* तैयार किया गया है और प्रशिक्षण आबादी में '*एसएनपी*' का पता लगाने के लिए विश्लेषण किया जा रहा है। उपयुक्त *जीनोमिक* चयन मॉडल की भविष्यवाणी और बेहतर *क्लोन* की पहचान के लिए जीईबीवी मूल्यों की गणना की जाएगी।

(vii) गन्ने में *आरएनए* अनुक्रम *बल्क्ड सेग्रेगेंट* विश्लेषण के माध्यम से सुक्रोज संचय की जांच करना

उच्च और निम्न–*सुक्रोज पैरेन्ट्स* (एमएस68/47 और कोवी 92102) की एफ, आबादी के *आरएनए* अनुक्रमण आधारित *ट्रांसक्रिप्टोम* विश्लेषण से उनतालीस सामान्य महत्वपूर्ण अंतर जीन की पहचान की गई है जिनमें क्लोरोफिल ए, ब बाइंडिंग प्रोटीन और पीएसएके को सुक्रोज मध्यस्थता प्रतिक्रिया विनियमन के प्रारंभिक बिंदुओं के रूप में देखा गया है। प्रारंभिक सुक्रोज संचय प्रतिलेखन कारकों, अरेबिनोग्लैक्टन और अमीनो एसिड ट्रांसपोर्टरों के ऊपर विनियमन (*अपरेगुलेशन*) के साथ–साथ विलेय परिवहन, *पीयूपी* और *स्पेस्ड ट्रांसप्लांटिंग* तकनीक (*एसटीपी*) में शामिल जीनों के नीचे विनियमन (*डाउन रेगुलेशन*) के साथ हुआ। परिवर्तनशील सुक्रोज सामग्री

वाले गन्ने की किस्मों पर इन जीनों का *रीयल–टाइम पीसीआर* सत्यापन किया जा रहा है।

(viii) *एसोसिएशन* मैपिंग दृष्टिकोण एवं *मार्कर–ट्रेट* संघटन (*एमटीए*)

123 *जीनोमिक* और व्यक्त अनुक्रम *टैग–एसएसआर* से उत्पन्न 989 *एसएसआर मार्कर लोसाई* का एक *सेट मार्कर–ट्रेट संघटन* (*एमटीए*) खोजने के लिए उपयोग किया गया है। कुल पंद्रह *एसएसआर मार्करों* की पहचान की गई जो भिन्न वर्षों में समान रहे। ये *मार्कर* पेराई योग्य गन्ने में विशेष भिन्नता के लिए 57%, गन्ने की मोटाई के लिए 34%, गन्ने की लंबाई के लिए 27%, सुक्रोज के लिए 20% और गन्ने में आँख की संख्या के लिए 19% की व्याख्या कर सकते हैं।

(ix) गन्ने में *एसएनपी* खनन और *लिंकेज मैपिंग* के लिए आरएनए अनुक्रम

एमएस 68/47 (कम सुक्रोज; एलपी) × कोवी 92102 (उच्च सुक्रोज; एचपी) से विकसित 262 F1 व्यक्तिगत जीनोटाइप वाली मैपिंग पौपुलेशन का उपयोग सुक्रोज संचय से जुड़े अंतर जीन और एकल *न्यूक्लियोटाइड पॉलीमॉर्फिज्म* (*एसएनपी*) की पहचान के लिए अनुक्रमण (जीबीएस) और आरएनए अनुक्रम दृष्टिकोण द्वारा *जीनोटाइपिंग* का उपयोग कर के किया गया है। सुक्रोज और अन्य कृषि संबंधी महत्वपूर्ण लक्षणों से जुड़े क्यूटीएल की पहचान के लिए 131 F1 और उनके दो पैतृक जीनप्ररूप (सीओवी 92102 और एमएस 68/47) से *जीनोटाइपिंग–बाय–सीक्वेंसिंग* (*जीबीएस*) *लाइब्रेरी* के अनुक्रमण द्वारा गन्ने का *जीबीएस*–आधारित लिंकेज मानचित्र तैयार किया गया। 5677 गैर–निरर्थक एकल *एसएनपी मार्करों* से, 560 समूहों को 142 *लिंकेज* समूहों में *मैप* किया गया है। कई प्रतिलेखन कारकों, *रिसेप्टर काइनेसेस, ग्लुकुरोनोसिल ट्रांसफेरेज़, कॉलोज़ सिंथेज़, माइक्रो आरएनए बायोजेनेसिस कॉम्प्लेक्स* और *फाइटोहार्मोन* पर पूर्व–प्रमुख रूप से स्थित महत्वपूर्ण अंतर एसएनपी को आरएनए अनुक्रम आधारित *ट्रांसक्रिप्टोम* विश्लेषण द्वारा पहचाना गया।

(x) घासी प्ररोह रोग के *फाइटोप्लाज्मा* का आण्विक अध्ययन

भारत में पहली बार *राइबोसोमल आरएनए ऑपेरॉन* का उपयोग करते हुए *नेस्टेड पीसीआर* आधारित जांच द्वारा पादप गन्ने (*होस्ट*) में घासी प्ररोह रोग *फाइटोप्लाज्मा* का पता लगाने के लिए तकनीक विकसित की गयी है और विश्व में पहली बार गन्ने में रोग फैलाने वाले *वेक्टर* कीट में घासी प्ररोह रोग *फाइटोप्लाज्मा डेल्टोसेफालस वल्गेरिस* का पता लगाया गया।

(xi) कवक रोगजनक और जैवनियंत्रक कारक का आण्विक लक्षण वर्णन

लाल सड़न रोगजनक के *आइसोलेट्स कोलेटोट्राइक फाल्केटम*, कंडुआ रोगजनक रोग *स्पोरिसोरियम सिटामाइनम* उकठा रोग पैथोजन *फ्यूसैरियम सैकरी* और जैवनियंत्रण कारक *ट्राइकोडर्मा हर्जियानम* के आइसोलेट्स को आण्विक मार्करों और *आरडीएनए* अनुक्रम विश्लेषण का उपयोग करके आण्विक पहचान की गई है।

4. समुन्नत बीज उत्पादन और विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता (*डस*) हेतु परीक्षण

बीज की आनुवंशिक शुद्धता और गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए प्रभाग द्वारा हर साल 12 से 13 हेक्टेयर भूमि में गन्ने की किस्मों के अभिजनक बीज का उत्पादन किया जा रहा है और इसे चीनी मिलों तथा किसानों को वितरित किया जा रहा है। संस्थान द्वारा विगत 5 वर्षों 2016-2021 में 42,000 क्विंटल से अधिक गन्ना बीज का उत्पादन किया गया है। नवीन अधिसूचित किस्मों के विशिष्ट लक्षणों के बारे में जागरूक करने के साथ–साथ किसानों को बीज गन्ना पैकेट वितरित करके हाल ही में अधिसूचित किस्मों के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए जागरूकता अभियान शुरू किया गया है। 'मेरा गांव, मेरा गौरव' योजना के तहत, गुणवत्तायुक्त बीज गन्ना एक प्रमुख घटक रहा है। बिहार में सात केंद्रों पर 30 हजार क्विंटल से अधिक अभिजनक बीज का उत्पादन किया गया है। संस्थान क्षेत्रीय केंद्र मोतीपुर, *एचएसएम*, हरिनगर; *वीएसएम*, गोपालगंज; *जेएसएम*, मझोलिया; *टीएसएल*, बगहा, *एचपीसीएल*, सुगौली और *एनएसएसएम*, नरकटियागंज, बिहार में 2016 से सामान्य खेती के लिए >50 प्रतिशत क्षेत्र में गन्ने की खेती की जा रही है जिसके परिणामस्वरूप बिहार के किसानों के गन्ना उत्पादन, उत्पादकता और लाभप्रदता में वृद्धि हुई है। बिहार में आधार बीज (>600 हेक्टेयर) के रकबे में वृद्धि हुई है और प्रमाणित बीजों की उपलब्धता 2017–18 में बढ़कर 14.67 लाख क्विंटल हो गई जो 2016–17 में केवल 10.34 लाख क्विंटल थी और 2019–20 में प्रमाणित बीजों की उपलब्धता 16.5 लाख क्विंटल बीज रही।

गन्ने की विशिष्टता, एकरूपता और स्थिरता (*डस*) परीक्षण के अंतर्गत खेत में 166 संदर्भ किस्मों का रखरखाव किया जा रहा है, जिसमें सीवीआरसी एवं राज्यों से चिह्नित, जारी और अधिसूचित सभी किस्में और गन्ने की अखिल भारतीय समन्वित परियोजना के अंतर्गत परीक्षित उन्नत किस्म के कृन्तक शामिल हैं। *डस* परीक्षण दिशा–निर्देशों के अनुसार संदर्भ संग्रह में 150 किस्मों पर *डस* लक्षण दर्ज किए गए हैं। तीन किसानों के कृन्तक देसी नंबर 1, देशी नंबर 2 और फुसेन का मूल्यांकन वर्ष 2015–16 से 2016–17 में किया जा चुका है और एक किसान किस्म 'कप्तान बस्ती' का मूल्यांकन किया जा रहा है। संदर्भ संग्रह की 3 सबसे समान किस्मों (कोसे 96258, को 6425, कोपन्त 96219 और बीओ 130) के साथ मूल्यांकन किया गया था। पांच 'नई' और चार किसान किस्में वर्तमान में *डस* परीक्षण के

अधीन हैं।

5. चुकंदर अनुसंधानः भारतीय कृषि जलवायु के लिए चुकंदर का प्रजनन और अनुकूलन

चुकंदर, सूरजमुखी और सोयाबीन सहित उन तीन फसलों में से एक है जिनकी 1950 के दशक में एक ही समय के आसपास भारत में परिचयात्मक रूप से खेती की गई थी जबकि अन्य दो ने अब स्वयं को भारत में व्यावसायिक रूप से स्थापित कर लिया है, चुकंदर अभी भी भारतीय कृषि परिदृश्य में महत्वपूर्ण योगदान देने की प्रतीक्षा कर रहा है।

1970 और 1980 का दौर चुकंदर पर गहन शोध गतिविधियों का दौर था। इस दौरान जननद्रव्य मूल्यांकन, किस्म विकास एग्रोनॉमिकल, पैथोलॉजिकल, एंटोमोलॉजिकल और एग्रीकल्चर इंजीनियरिंग पहलुओं पर काम किया गया। श्रीगंगानगर ने उत्पादन और प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी का परीक्षण आधार प्रदान किया। भारत ने चुकंदर के बीज के लिए आत्मनिर्भरता का विकल्प चुना और एक खुली परागित, द्विगुणित रूसी किस्म, रामोंस्काया–06 (आर–06) को यूरोप की कुछ अन्य *एनिसोप्लोइड* किस्मों के साथ भारतीय परिस्थितियों के लिए उपयुक्त पाया गया। श्रीनगर में राष्ट्रीय बीज निगम द्वारा आर–06 का बीज उत्पादन सफलतापूर्वक किया गया और बाद में इसे हिमाचल प्रदेश में स्थानांतरित कर दिया गया।

(i) चुकंदर में जननद्रव्य अध्ययन एवं किस्म विकास

रूस, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, स्वीडन, चेकोस्लोवाकिया, डेनमार्क, ईरान और संयुक्त राज्य अमेरिका से प्राप्त 350 से अधिक जननद्रव्य लाइनों का मूल्यांकन भारतीय कृषि जलवायु में प्रदर्शन के लिए किया गया है। इनमें *बीटा वल्गेरिस स्पेशीज* जैसे *बीटा वल्गेरिस सबस्पेशिस मैरिटिमा, बीटा वल्गेरिस सबस्पेशीज वल्गेरिस, बीटा वल्गेरिस सबस्पेशीज सिक्ला, बीटा इंटरमीडिया, बीटा ट्राइगिना, बीटा पेटेलारिस, चारा चुकंदर, सीएमएस लाइन्स, इनब्रेड लाइन्स* और अन्य किस्में शामिल थी। किस्मों जैसे कि मेरिबो माघपोली, मेरिबो रेसिस्टापोली, एमएम मारेपोली, मेज़ानोपॉली–आर, ट्राइबल और कावे गिगापोली, आईआईएसआर कॉम्प–1, एलएस–6, एलकेसी–2, एलकेसी–3, एलकेसी–4, पंत एस–4, पंत एस–10 और पंत कॉम्प–3) में अच्छी उपज और सकल शर्करा पायी गयी है। द्विगुणित प्रजनन में चुकंदर की 7 किस्में (आईआईएसआर कॉम्प–1, आईआईएसआर–2, एलएस–6, एलएस–7, एलकेसी–2, एलकेसी–3, एलकेसी–4) विकसित की गई और चुकंदर की 50 *इनब्रेड* लाइनें भी विकसित की गई । इसके अतिरिक्त उच्च शर्करा वाली किस्में एलएस–6, एलकेसी–4, सीएल आर–II/79, पंत एस–10, एजे पोली–2, त्रिरेव, एम मेरीनापोली, पोईली रेव–एन, ईटालमोन और मेनिवरडा भी विकसित की गईं। उच्च तापमान सहिष्णु जीनप्रारूप जैसे एम. मैग्नापोली, आईआईएसआर कॉम्प–1, एम मार्कोपॉली, आईआईएसआर–2, मेज़ानापोली–आर, एलएस–6, रामोंस्काया–06, एलएस–7, एजे–3, पंत एस–10, ओपीएच पहचाने गए। उपोष्ण क्षेत्रों में वाणिज्यिक खेती के लिए एलएस–6 और आईआईएसआर कॉम्प–1 जैसी दो किस्मों को निकाला गया और उष्णकटिबंधीय भारत के लिए भी एलएस–6 की पहचान की गई। इसके अलावा, संस्थान से विकसित की गयी चुकंदर की किस्मों (एलएस–6 और आईआईएसआर कॉम्प–1) को चुकंदर उद्योगों और अनुसंधान संस्थानों को वितरित किया जा रहा है। इसके अलावा, भारतीय परिस्थितियों के लिए कम समय में चुकंदर बीज उत्पादन तकनीक विकसित की गई है। बीज उत्पादन की *स्टेकलिंग* विधि से चुकंदर के बीज को एक वर्ष के भीतर ही काटा जाता है।

चुकंदर की खेती एवं विकसित किस्म

(I) चुकंदर में *पॉलीप्लोइडी* की स्थापना

चुकंदर में *पॉलीप्लोइड* की उपज क्षमता, विशेष रूप से *ट्रिपलोइड्स* में उनकी जड़ उपज और सुक्रोज प्रतिशत के संदर्भ में सर्वविदित है। हालांकि, भारत में चुकंदर की *पॉलीप्लोइड* किस्में आमतौर पर *डिपलोइड, ट्रिपलोइड* और *टेट्राप्लोइड* घटकों वाले मिश्रण होते हैं और इसलिए पॉलीप्लोइड के वास्तविक लाभ उनकी वांछित सीमा तक प्राप्त नहीं होते हैं। टेट्राप्लोइड आबादी को विकसित करने और इकट्ठा करने के लिए, हमारे प्रजनन कार्यक्रमों में आगे उपयोग के लिए भारतीय कृषि जलवायु परिस्थितियों के लिए *एनिसोप्लोइड* और *ट्रिपलोइड* संकरों को प्रजनन और स्थापित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस दिशा में तीन मुख्य दृष्टिकोणों के साथ काम किया गया है: (1) अनुकूलित द्विगुणित जीनोटाइप से *टेट्राप्लोइड्स* की नई आबादी को बनाना (2) *टेट्राप्लोइड कोएनिसोप्लोइड* आबादी से अलग करना और (3) *अनिसोप्लोइडी* आबादी की *प्लोइड* स्थिति की जांच के लिए रंध्र संबंधी मापदंडों की प्रभावकारिता और फिर इसे कोशिका विज्ञान के साथ सहसंबंधित करना।

(ii) *बीटा* प्रजातियों में *साइटोलॉजिकल* और *कैरियोटाइपिक* अध्ययन

जीनस बीटा की *क्रोमोसोमल* विशेषताओं का अध्ययन उपोष्णकटिबंधीय चुकंदर में *कैरियोटाइप* संबंधों एवं अर्धसूत्री विभाजन विशेषताओं को खोजने के लिए किया गया है। प्रजनन कार्यक्रमों में अंतरजातीय संकर और *पॉलीप्लोइड* के विकास के लिए इन प्रजातियों का उपयोग करने की व्यवहार्यता का पता लगाने के लिए अध्ययन किया गया है। बीटा की चार प्रजातियों के कैरियोटाइप बनाए गये हैं। *बीटा वल्गारिस एल, बीटा वल्गारिस* सब स्पीशीस *मैरिटिमा, बीटा वल्गारिस* सबस्पीशीस *ओरिएंटलिस* और *बीटा लोमेंटोगोना*। इन सभी का गुणसूत्र संख्या 2एन=18 है और सभी सामान्यतः असममित हैं। कुल अगुणित *क्रोमैटिन* लंबाई 17.92 से 24.17 *माइक्रोमीटर* तक देखी गयी है, जबकि व्यक्तिगत गुणसूत्र का आकार 1.47 से 3.15 माइक्रोमीटर तक पाया गया है। *स्टेबिन्स* के विषमता के वर्गीकरण के अनुसार, ये प्रजातियाँ 2A से 4A तक *कैटेगिरी* में थीं, जिससे *कैरियोटाइप* के बीच एक विकासवादी प्रवृत्ति की पुष्टि हुई और *बीटा वल्गैरिस* प्रजाति एलएस 6 का *कैरियोटाइप* सबसे उन्नत पाया गया।

मुक्तेश्वर में चुकंदर बीज का उत्पादन

बदलते परिवेश और पर्यावरण के अनुकूल तकनीकी हस्तक्षेप के वर्तमान परिदृश्य में, गन्ना हरित ऊर्जा के उत्कृष्ट स्रोत के रूप में उभरा है। जैवऊर्जा के लिए फीडस्टॉक की मांग बहुत बड़ी है और भविष्य में इसमें वृद्धि होगी। उच्च बायोमास और पुनर्जनन क्षमता को देखते हुए, गन्ने की भूमिका बायो एनर्जी फीडस्टॉक के रूप में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में प्रचलित गन्ने की किस्मों को कुछ अंतर–स्पेशीज़ क्रॉस से विकसित किया गया था, जिसने क्रोमोसोमल पुनर्संयोजन को सीमित कर दिया। राष्ट्रीय संकरण उद्यान, गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर में अनेक पैतृक लाइनों को उपलब्धता होने के बावजूद, प्रजनन कार्यक्रमों में अब तक केवल चयनित लाइनों का उपयोग किया गया है। इसलिए आनुवंशिक आधार को व्यापक बनाने के लिए अब तक अप्रयुक्त आनुवंशिक संसाधनों का उपयोग करके परिवर्तनशीलता उत्पन्न करना आवश्यक है। मौजूदा आनुवंशिक पृष्ठभूमि में नए जीनों का प्रवेश, और परिवर्तनशीलता में वृद्धि सुक्रोज संचय क्षमता को बढ़ाने के साथ–साथ नए विकसित जीनप्रारूप में अन्य आर्थिक लक्षणों में सुधार करने में सहायक सिद्ध होगा। पूर्व में प्रजनन–पूर्व रणनीतियों ने उच्च शर्करायुक्त पैतृक आनुवंशिक स्टॉक उत्पन्न किये हैं। आनुवंशिक आधार के विस्तार और विविधता को बनाए रखने के साथ विशेषता में स्थाई सुधार सुनिश्चित करने के लिए बेहतर पैतृक कृन्तक की आवश्यकता है।

गन्ने में मात्रात्मक लक्षणों के लिए आनुवंशिक लाभ की दर में सुधार के लिए जीनोमिक चयन एवं जीनोम संपादन अपेक्षाकृत नयी और आशाजनक तकनीक हैं। जीनोमिक चयन दृष्टिकोण से प्रजनन चक्र की लंबाई को कम करके, क्लोनल प्रदर्शन की भविष्यवाणी और जनकी के चयन के लिए प्रजनन मूल्यों की सटीकता में वृद्धि करके आनुवंशिक लाभ की दर में उल्लेखनीय वृद्धि होने की संभावना है। इसके अतिरिक्त गन्ना प्रजनन कार्यक्रम को बढ़ाने के लिए अत्याधुनिक आण्विक उपकरणों का उपयोग भी लाभप्रद होने की संभावना है।

इसके अलावा भविष्य में गन्ना प्रजनन कार्यक्रम को बढ़ाने के लिए अत्याधुनिक आण्विक तकनीकों जैसे ट्रांसक्रिपटोमिक्स, प्रोटिओमिक्स और क्रिस्पर कैस का उपयोग किया जाएगा, जिसमें आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण लक्षणों के लिए आनुवांशिक पूल को मजबूत करने तथा लक्षित पर्यावरण के लिए बेहतर गन्ना किस्मों के विकास पर विशेष जोर दिया जाएगा। इस दिशा में चीनी, चारे और *बायो एथेनॉल* के स्रोत के रूप में चुकंदर की क्षमता का दोहन करने के साथ–साथ चुकंदर के त्वरित प्रजनन, रखरखाव और गुणवत्तायुक्त बीज उत्पादन द्वारा संस्थान के लक्षित उदेश्यों की पूर्ति होने की अपार सम्भावना है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

सत्तर वर्षों में गन्ना उत्पादन प्रौद्योगिकी में फसल उत्पादन विभाग का योगदान

सुधीर कुमार शुक्ल एवं मोना नागरगड़े
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

फसल उत्पादन विभाग, भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान का वो पंख है जो देश के उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में कृषि तकनीकों के फैलाने में लगा हुआ है। सर्वप्रथम फसल उत्पादन विभाग वर्ष 1956 के दौरान मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान नामक एक खंड के रूप में अस्तित्व में आया था, जिसका मुख्य उदेश्य मिट्टी की उर्वरता मूल्यांकन और फसल के लिए पोषक तत्वों के प्रबंधन पर काम करना था। तत्पश्चात विकसित तकनीकों के प्रभावी प्रसार के लिए वर्ष 1969 में विभाग के अंतर्गत ही प्रसार और प्रशिक्षण अनुभाग शुरू किया गया था। मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान विभाग के अंतर्गत ही कृषि मौसम विज्ञान अनुभाग 1992 में अस्तित्व में आया। सभी अनुभागों को एकीकृत कर जून 2001 में फसल उत्पादन विभाग उद्गमित किया गया। वर्तमान में 'फसल उत्पादन विभाग' के अंतर्गत सस्य विज्ञान, मृदा विज्ञान, सूक्ष्म जीव विज्ञान, कृषि प्रसार, प्रक्षेत्र अनुभाग व कृषि मौसम विज्ञान इकाई अनुग्रहित हैं। विभाग के विकास की राह में गन्ना उत्पादकता में सुधार, संसाधनों का सीमित उपयोग एवं मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखना प्रमुख पदचिन्ह हैं। विभाग अपने उद्देश्यों को पूरा करने में निरंतर प्रयासरत है एवं विभिन्न तकनीकों को विकसित करके गन्ना उत्पादकों को अपनी सेवाएं दे रहा है। विभाग द्वारा विकसित तकनीकियो का विवरण निम्नवत है:

(1) बुआई की अवधि

- शरद ऋतु का गन्ना अक्टूबर के महीने में बोया जाता है।
- बसंत ऋतु का गन्ना फरवरी–मार्च में बोया जाता है।
- उच्च पैदावार पाने के लिए पंजाब और हरियाणा में मार्च, उत्तर प्रदेश में फरवरी–मार्च एवं बिहार में फरवरी गन्ने की रोपाई के लिए सबसे अच्छा समय है।
- महाराष्ट्र में *अडसाली* फसल की बुआई जुलाई–अगस्त में की जाती है। इस फसल की परिपक्वता में लगभग 15–18 महीने लगते हैं।
- दक्षिण भारत में एकसाली बुआई की जाती है। इस पद्धति में बुआई दिसम्बर से फरवरी के मध्य की जाती है तथा एक साल बाद फसल की कटाई की जाती है।

(2) बीज

अच्छी रोपण सामग्री (बीज) उच्च पैदावार में योगदान करती है। इसलिए, गन्ने की फसल की उत्पादकता में सुधार के लिए स्वस्थ बीज गन्ना की आपूर्ति मुख्य शर्त है। गन्ने की बुवाई (दो कली, तीन कली) भारत में सर्वाधिक प्रचलित है। नई बीज गुणन विधियों जैसे *बड चिप* और *केन नोड* के प्रयोग से बीज की मात्रा की आवश्यकता कम हो जाती है और परिवहन में आसानी होती है।

गन्ना गाँठ प्रौद्योगिकी : इस विधि में व्यवहार्य कली वाले गन्ना गाँठ का चयन करें और इसे *कंटेनर* में 4–5 दिनों के लिए 60% नमी वाले विघटित *एफवाईएम* के घोल में रखें। इस अवधि में कलियाँ अंकुरित हो जाती हैं। अंकुरित कली को खेत में ले जाकर खाईयों में लगाया जाता है। यह तकनीक कलियों के जल्दी अंकुरित होने और बीज सामग्री के सुगम परिवहन की सुविधा प्रदान करती है। इस विधि से 1 हेक्टेयर क्षेत्र में रोपण के लिए 1–2 टन बीज की आवश्यकता होती है।

(3) रोपण के तरीके

मुख्य रूप से कटाई और अंत:कर्षण कार्यों की सुविधा के लिए विभिन्न कार्यक्षेत्रों में मानव श्रम को कम करने के लिए, यांत्रिक कटाई की सुविधा के साथ–साथ गन्ना उपज स्तर को बनाए रखने के लिए उष्णकटिबंधीय क्षेत्र के लिए 120 सें.मी./ 30:150 सें.मी. की व्यापक पंक्ति दूरी की सिफारिश की जाती है। हालांकि, उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में, मशीनीकरण की सुविधा के लिए गन्ना रोपण 30:120 सें.मी. एक अच्छा विकल्प है। रोपण विधि ऐसी होनी चाहिए कि यह जड़ प्रसार और विकास को प्रोत्साहित करे। प्रमुख रोपण विधियाँ निम्नानुसार हैं :

यांत्रिक *ट्रेंच* विधि : गन्ने के पौधे की फसल से अधिक गन्ना उपज और बाद में अच्छी पेडी फसल के लिए रोपण की *ट्रेंच* विधि की सिफारिश की गई है। यह हल्की मिट्टी पर उच्च पौधों की वृद्धि के लिए फसल को गिराने से बचाती है और बढ़ी हुई इनपुट उपयोग दक्षता के साथ उच्च गन्ना और चीनी की पैदावार के लिए उपयुक्त है। संस्थान ने निम्नलिखित विशेषताओं के साथ *ट्रेंच* रोपण की एक यंत्रीकृत विधि विकसित की है :

- 30 सें.मी. चौड़ी और 25–30 सें.मी. गहरी खाई बनाना
- खाईयों के बीच केंद्र से केंद्र की दूरी 120 सें.मी. (90 सें.मी.: 30 सें.मी.) रखते हुए
- *ट्रेंच प्लांटर* द्वारा गन्ने के *सेटों* को *पेयर्ड रो सिस्टम* में मशीनीकृत रोपण

एफआईआरबी रोपण

देर से बुवाई की स्थिति में गन्ने की उपज में होने वाले नुकसान को कम करने के लिए संस्थान में *फरो इरीगेटेड रेज्ड*

बेड (एफआईआरबी) प्रणाली के तहत एक अभिनव गेहूं + गन्ना की तकनीक विकसित की है। इस विधि में गेहूँ की 2–3 पंक्तियाँ उठी हुई क्यारियों (अक्टूबर–नवंबर) में बोई जाती हैं और गन्ने की बुवाई उसके अनुकूलतम समय (फरवरी–मार्च) में कूँड़ों में की जाती है। *एफआईआरबी* विन्यास 50–30–50 सें.मी. का होता है। इस तकनीक में गन्ने की फसल को जुताई और वृद्धि के लिए उपयुक्त समय मिलता है और समय पर रोपण और बेहतर *राइजोस्फीयर* के कारण गेहूँ और गन्ना दोनों की उपज में वृद्धि होती है।

गोल गड्ढा विधि/*नो टिलर टेक्नोलॉजी/मदर शूट टेक्नोलॉजी*

यंत्रीकृत गड्ढे खोदने वाले यंत्र से 75 सें.मी. व्यास और 30 सें.मी. गहराई के गड्ढे खोदे जाते हैं। लगभग केंद्र से केंद्र की दूरी 105 सें.मी. के साथ 9,000 गड्ढे/हेक्टेयर खोदे जाते हैं। प्रत्येक गड्ढे की परिधि पर खोदी गई मिट्टी को रखा जाता है। प्रत्येक गड्ढे में 20 उपचारित 2–आँख वाले गन्ने के टुकड़े एक समान *पैटर्न* में रखे जाते हैं जैसे कि साइकिल के पहिये में तीलियाँ होती हैं। *ट्राइकोडर्मा* @ 20 कि.ग्रा. 200 कि.ग्रा. गोबर की खाद या प्रेसमड प्रति हेक्टेयर के साथ मिलाकर सेटों पर डाला जाता है। खाद, उर्वरकों और रसायनों की सामान्य अनुशंसित खुराक भी दी जाती है। अन्तः कर्षण क्रियाओं के दौरान गड्ढों को धीरे–धीरे 5 से 7 सेंटीमीटर की गहराई तक खोदी गई मिट्टी से भर दिया जाता है। इस विधि से गन्ने की उपज 1.5–2.0 गुना, जल उपयोग दक्षता 30–40% और पोषक तत्व उपयोग दक्षता 30–35% तक बढ़ जाती है।

क्रॉस सब सॉइलिंग: खेत की तैयारी का एक उन्नत तरीका

- खेत तैयार करने से पहले तीन से चार वर्ष में एक बार एक मीटर की दूरी पर *क्रिसक्रॉस सब सॉइलिंग* करना चाहिए, जिससे मिट्टी की गहरी परतों में भी जल एवं वायु का प्रवाह बेहतर हो सके।
- *सबसॉइलिंग ट्रैक्टर* द्वारा चलने वाले *सब–सॉइलर* से 45–50 सें.मी. की गहराई में किया जाना चाहिए।

पोषक तत्व प्रबंधन

- 100 टन/हेक्टेयर गन्ने की औसत फसल 208 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 53 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 280 कि.ग्रा. पोटैशियम, 30 कि.ग्रा. गंधक, 3–4 कि.ग्रा. लोहा, 1–2 कि.ग्रा. मैंगनीज और 0–6 कि.ग्रा. तांबा मिट्टी से अवशोषण करती है।
- गन्ना की बावक फसल के लिए क्रमशः 150,60,60 कि.ग्रा. नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। हालांकि मिट्टी परीक्षण के आधार पर नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटैशियम का प्रयोग बेहतर होता है।
- हमेशा पूर्णतः अपघटित जैविक खाद गोबर की सड़ी खाद/*प्रेस मड केक* 10–15 टन/हेक्टेयर रोपण से एक महीने पहले डालना चाहिए।
- एक तिहाई नाइट्रोजन और फास्फोरस और पोटेशियम की पूरी खुराक को गन्ने की बुआई के दौरान प्रयोग करना चाहिए।
- शेष दो तिहाई नाइट्रोजन को दो बराबर भागों में किल्ले निकलने की अवस्था के दौरान उपयोग किया जाना चाहिए है।
- नाइट्रोजन का प्रयोग जून माह तक समाप्त हो जाना चाहिए।
- *ट्राइकोडर्मा विरिडी (सीएफयू* $10'$/जी) और *ग्लुकोन–एसेटोबैक्टर डायजोट्रोफिकस* @ 10 कि.ग्रा./हेक्टेयर का प्रयोग करने से गन्ने की वृद्धि और उपज अधिक होती है।
- गंधक की कमी वाले क्षेत्रों में गंधक 30–40 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से उपयोग करना चाहिए।
- पेडी फसल को मुख्य फसल की तुलना में 25% अधिक नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है
- पेड़ी फसल में 80 कि.ग्रा. पोटेशियम/हेक्टेयर का प्रयोग, फसल को गिरने से बचाता है और सुक्रोज की मात्रा में भी वृधि करता है
- गन्ने में हरिमाहीनता (*क्लोरोसिस*) का प्रबंधनः कैल्शियम बाहुल्य कंकरीली मिट्टी में *आयरन क्लोरोसिस* पोषक तत्वों की कमी से होने वाली एक व्यापक समस्या है। यह गन्ने की पेड़ी फसल में मुख्य रूप से देखी जाती है।
- 0-5% मैगनीज सल्फेट के साथ 1% आयरन सल्फेट और 2% यूरिया के घोल का दो से तीन बार छिड़काव करना लाभदायक होता है।
- आयरन सल्फेट @ 25 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से बुआई के समय मिट्टी में प्रयोग करने से भी लाभ होता है।
- चीनी उद्योग से प्राप्त होने वाली प्रेस मड (5 टन/हेक्टेयर) + आयरन पाइराइट (2 टन/हेक्टेयर) का मिट्टी में उपयोग करना लाभदायक होता है।
- गोबर की खाद @ 25 टन/हेक्टेयर का मृदा में उपयोग 01-5% आयरन सल्फेट एवं 1% यूरिया के साथ पर्णीय छिड़काव साप्ताहिक अंतराल पर और 1% जिंक सल्फेट का मासिक अंतराल पर उपयोग करना चाहिए।
- जस्ते की कमी परिलक्षित होने पर इसका प्रयोग लाभदायक होता है।
- मृदा में गंधक की कमी होने पर गंधक @ 30 से 40 कि.ग्रा. / हे की दर से बुआई के पहले खेत की तैयारी के समय अथवा बुआई के समय उपयोग करना लाभदायक होता है।

कार्बन पृथक्करण

गन्ना की फसल को *ग्रीनहाउस* गैस उत्सर्जन को कम करने की क्षमता के लिए पहचाना जाता है, क्योंकि जैव ईंधन के दहन से उत्सर्जित कार्बन का एक बड़ा हिस्सा प्रकाश संश्लेषण के दौरान फसल के रूप में परिवर्तित हो जाता है, जिसे बाद में संग्रहीत किया जा सकता है। मृदा जैविक कार्बन पुआल अपघटन और जड़ों के *एक्सयूडीशन* द्वारा मिट्टी में मिल जाते है। गन्ने की सूखी पत्तियों की बड़ी मात्रा (10–20 Mg/ha) मिट्टी पर जमा होने के परिणामस्वरूप लगभग 3–5 Mg C/ha और 40 कि.ग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर वार्षिक रूप से मिट्टी में मिल जाते है, जिससे मृदा कार्बन में वृधि होती है। कृषि पारिस्थितिकी तंत्र में मृदा कार्बन एक प्रमुख गुण है क्योंकि यह पोषक तत्वों के चक्रण, मृदा संरचना, पानी की उपलब्धता और अन्य महत्वपूर्ण मृदा गुणों को प्रभावित करता है।

सिंचाई जल प्रबंधन

पौधों की उत्पादकता और प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया मिट्टी की नमी पर निर्भर करती है। अपर्याप्त पानी की उपलब्धता में पर्याप्त फसल की उपज प्राप्त करना एक बड़ी चुनौती है। गन्ना एक सी, पौधा है जो विकास की विभिन्न अवस्थाओं जैसे कि अंकुरण, किल्ले निकलने की अवस्था, बढ़ाव और परिपक्वता पर जल तनाव के विभिन्न स्तरों का अनुभव करता है। हालांकि, अंकुरण चरण के बाद, किल्ले निकलने की अवस्था को जल प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण अवस्था माना गया है।

भारत में, गन्ने के 50 लाख हेक्टेयर में से 89% क्षेत्र में सिंचाई की जाती है। उष्ण कटिबंधीय भारत में, सिंचाई की संख्या 30 से 36 तक होती है, जबकि उपोष्ण कटिबंधीय भारत में, 80 मि.मी. की गहराई के साथ 5 से 10 सिंचाई की आवश्यकता होती है। वार्षिक आधार पर, कुल फसल वाष्पीकरण *(ईटीसी)*/जल–उपयोग 1,100–1,800 मि.मी. है, जबकि अधिकतम दैनिक दर 6 से 15 मि.मी./दिन है। भारत में गन्ने के लिए पानी की आवश्यकता 1,143 से 3,048 मि.मी. तक होती है जबकि किसान आवश्यकता से अधिक पानी का प्रयोग करते हैं। प्रमुख सिंचाई की विधियाँ निम्नुसार है:

(अ) एकांतर कूँड़ विधि :

- इस विधि में एक पंक्ति छोड़कर अगली पंक्ति (नाली) में सिंचाई की जाती है।
- इस विधि से गन्ने की उत्पादकता को प्रभावित किए बिना 30-40% तक पानी की बचत की जा सकती है।

(ब) *स्प्रिंकलर* सिंचाई

- गन्ने की फसल में सिंचाई जल उपयोग क्षमता में वृद्धि के लिए यह विधि उपयोगी है।
- यह विधि बुआई की तिथि से या कटाई से 5 महीने तक पेड़ी गन्ने की सिंचाई के लिए आसानी से उपयोग की जा सकती है।
- यह ऊबड़–खाबड़ (असमतल) जमीन या ढलान प्रकृति के खेतों के लिए उपयुक्त विधि है।
- एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में स्प्रिंकलर प्रणाली लगाने के लिए लगभग ₹ 1.0-1.5 लाख तक की लागत आती है।

(स) सूक्ष्म सिंचाई/टपक सिंचाई

- सूक्ष्म सिंचाई में सतह के ड्रिप, उपसतह *ड्रिप, माइक्रो स्प्रेयर* या *माइक्रो स्प्रिंकलर* द्वारा, मिट्टी की सतह के ऊपर या नीचे पानी की छोटी–छोटी बूँदों का लगातार उपयोग होता है।
- इसमें अस्थायी रूप से और स्थानीय रूप से मिट्टी की नमी का सटीक नियंत्रण शामिल है, जो पानी की उपयोग क्षमता में वृद्धि होती है और अंततः फसल की उपज में सुधार होता है।
- *ड्रिप* सिंचाई में पानी की उपयोग क्षमता 95% तक होती है एवं एकरूपता बनी रहती है, यदि *ड्रिप सिस्टम* ठीक से नियोजित, अभिकल्पित और संचालित हो।
- सामान्य दशा में लगभग एक हेक्टेयर के सिंचाई पानी से इस विधि से 2-5 हे. तक खेत की सिंचाई की जा सकती है।

गन्ना के लिए सूखा के दौरान आकस्मिक योजना

- बारिश के मौसम में लंबे समय तक सूखे के दौरान बार–बार हल्की सिंचाई की सलाह दी जाती है।
- 85% कूँड लंबाई में *कट ऑफ* के साथ कूँड सिंचाई को अपनाया जाना चाहिए और पानी को बचाने और अधिक फसल क्षेत्र को *कवर* करने के लिए बाढ़ सिंचाई को त्यागने की आवश्यकता है।
- एकांतर कूंडों में सिंचाई करने से सिंचाई दक्षता में वृद्धि और पानी की बचत होती है।
- सूखे के दौरान गन्ने की पत्तियों पर इथ्रेल (100 लीटर पानी में 12 मि.ली.) का छिड़काव करना चाहिए।
- शुष्क मौसम में फसल की वृद्धि को बनाए रखने के लिए अकेले यूरिया (2-5%) या *एमओपी* (2-5%) के संयोजन में छिड़काव किया जाना चाहिए।
- गन्ने की कतारों पर मिट्टी चढ़ाने (विशेष रूप से शरद ऋतु में बोई गई फसल और शरद ऋतु में शुरू की गई पेड़ी) फसलों में की जानी चाहिए।

खारपतवार प्रबंधन

(अ) गन्ने की फसल में खरपतवार प्रबंधन

- एट्राजीन @ 2.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हे. (जमाव पूर्व) खरपतवार नाशक/मेट्रिब्यूज़िन @ 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर की दर से 800– 1000 लीटर पानी/हेक्टेयर में घोल बनाकर जमीन पर छिड़काव करना चाहिए।

- इसके बाद इन चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के निदान के लिए बुआई के 60 दिनों बाद 2,4–डी/1-0 किलोग्राम सक्रिय तत्व/हेक्टेयर के उपयोग से नष्ट किया जा सकता है या इसके बाद 90 दिनों के बाद एक गुड़ाई की आवश्यकता पड़ती है।
- गन्ने की बुआई के बाद 45, 75 और 105 दिनों के बाद तीन गुड़ाई करने से भी खरपतवारों का प्रबन्धन किया जा सकता है।

(ब) पेड़ी फसल में खरपतवार प्रबंधन

- तीन गुड़ाई पेड़ी फसल के आरंभ होने के पहले, पाँचवें और नौवें हफ्ते में की जानी चाहिए।
- खरपतवारनाशी एट्राज़ीन @ 2.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर या मेट्रिब्यूज़िन @ 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर (800– 1000 लीटर पानी/हेक्टेयर) जमाव पूर्व खरपतवारनाशक के रूप में प्रयोग करना चाहिए। इसके पश्चात् 2,4 डी *सोडियम साल्ट*/1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर (800–1000 लीटर) पानी/हे.) या पेड़ी फसल के आरंभ होने के 45 दिनों के बाद गुड़ाई करनी चाहिए।

  इसके अलावा, गन्ने की कटाई के बाद या पेड़ी फसल के आरंभ में शुष्क पत्ती के बिछावन से या दो कतारों के बीच में प्रयोग से कतारों के मध्य खरपतवार का नियंत्रण किया जा सकता है तथा साथ ही पताई बिछाने के फायदे भी लिए जा सकते हैं।

(स) बेल वाले खरपतवारों का प्रबंधन

एट्राजीन @ 2.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हे. या मेट्रिब्यूज़िन @ 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर की दर से जमाव पूर्व खरपतवारनाशक के रूप में उपयोग करना चाहिए तथा डायीकेम्बा/300 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हे. की दर से बुआई के 75 दिन बाद उपयोग करने से खरपतवारों का निदान संभव है।

फसल विविधीकरण

गन्ने पर आधारित उत्पादन प्रणाली में अंतर–और/या अनुक्रमिक फसलों के रूप में छोटी अवधि की अधिक मूल्य वाली फसलों का समावेश, भूमि उपयोग दक्षता बढ़ाने, उत्पादन लागत को कम करने, उत्पादन के विभिन्न अवयवों के उपयोग को कम करने और फसल पद्धति को टिकाऊ बनाने में बड़ा योगदान है।

सहफसली खेती

- गन्ने में सहफसली खेती से प्रति इकाई क्षेत्र और समय के साथ कृषि आय में वृद्धि की जा सकती है।
- सहफसली खेती में उर्वरक प्रबंधन के लिए गन्ने में एक तिहाई नत्रजन बुआई के समय एवं शेष दो तिहाई नत्रजन दो बार में अंतरवर्तीय फसल की कटाई के बाद मिट्टी में उचित नमी पर *टॉप ड्रेसिंग* द्वारा की जानी चाहिए। जबकि अंतरवर्ती फसल में कुल नत्रजन का एक तिहाई एवं फॉस्फोरस व पोटैशियम की पूर्ण मात्रा बुआई के समय दी जानी चाहिए। शेष दो तिहाई नत्रजन बुआई अन्तः फसल की प्रकृति एवं संस्तुति के आधार पर की जानी चाहिए।

तालिका 1: भारत में गन्ना आधारित सहफसली प्रणाली

बुआई का समय	सहफसल
मौसमी/ सुरु	ग्रीष्मकालीन मूँगफली, सोयाबीन, तरबूज, ककड़ी
प्री–सीजनल	आलू, चना, पत्ता गोभी, फूल गोभी, प्याज
अडसाली (महाराष्ट्र)	मूँगफली, सोयाबीन, लोबिया, मूली, धनिया, मेंथी

गन्ना आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली

भारत में, 6 करोड़ किसानों की आय गन्ना उत्पादन पर निर्भर करती है और जिसमे से अधिकांश 75–80% सीमांत और छोटे किसान हैं। गन्ने की खेती में ऐसी कृषि तकनीकों के उपयोग की आवश्यकता है जो भारत में गन्ना कृषक समुदाय के लिए पर्याप्त रोजगार और आय सृजन करने में सक्षम हों। गन्ना आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली में गन्ना एक प्रमुख घटक है एवं इसमें विभिन्न घटकों जैसे मछली पालन, मुर्गी पालन, सुअर पालन, बत्तख और डेयरी को एक साथ एकीकृत किया जाता है। गन्ना आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली प्रोटीन के प्रमुख स्रोत के रूप में कार्य करता है साथ ही साथ आर्थिक लाभ, पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण को बढ़ाता है और बाहरी उत्पादों पर निर्भरता को कम करता है। संस्थान द्वारा, निम्नलिखित लाभदायक एकीकृत कृषि प्रणालियां शरद ऋतु और बसंत के लिए विकसित की गयी हैं–

शरद ऋतु गन्ना आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली

इस प्रणाली द्वारा ₹ 4,54,412/हेक्टेयर की शुद्ध आय प्राप्त होती है। इसके द्वारा हम ₹ 1,95,212/हेक्टेयर अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं। इसके प्रमुख घटक निम्नानुसार हैं:

गन्ना + सब्जियां (लहसुन, मेंथी *फेनम–ग्रेकेम एल.*), धनिया, टमाटर (*सोलनम*) *लाइकोपर्सिकम* एल.), फूलगोभी, पालक (*स्पाइनेशिया ओलेरासिया* एल.), गाजर, ग्वार, प्याज (*एलियम सेपा एल.*), बैगन (*सोलनम मेलोंगेना एल.*), हरी मिर्च (शिमला मिर्च प्रजाति), पत्ता गोभी, मटर, सोयाबीन, सौंफ (*फोनीकुलम वल्गारे एल.*), लौकी (*लगेनेरिया सिसेरिया* (*मोलिना*) *स्टैंडल*, भिंडी (*एबेलमोस्कस एस्कुलेंटस* (एल.) *मोएंच*,, लोबिया, *कुकुरबिट*, मक्का) + बागवानी फसलें करौंदा (*कैरिसा कैरंडास. एल.*) सीमा वृक्षारोपण + पपीता (*कैरिका पपीता एल.*) + केला (*मूसा × पैराडिसियाका एल.*), + *बैकयार्ड पोल्ट्री* (नस्लः अशील, निर्भीक, कड़कनाथ, बटेर) + मत्स्य पालन (रोहू, कतला, नैन) + *वर्मीकम्पोस्ट* (*आइसेनिया फोटिडा*)

बसंत ऋतु गन्ना आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली : इस प्रणाली द्वारा ₹ 448,990 / हेक्टेयर की शुद्ध आय प्राप्त होती है। इसके द्वारा हम ₹ 193,190 / हेक्टेयर अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं। इसके प्रमुख घटक निम्नानुसार हैं:

गन्ना + सब्जियां, (लौकी, स्पंज लौकी) (*लफ्फा एजिपियाका मिल.*), टमाटर (*सोलनम लाइकोपर्सिकम एल.*), बैगन, कद्दू प्याज, मक्का मेथी, पौचोई, चीनी गोभी *(ब्रासिका रैपा)*, *चिनेंसिस* (*एल.*) + बागवानी फसलें (केला, करोंदा, पपीता) +मुर्गी (नस्ल– अशील, निर्भीक, कड़कनाथ, बटेर) + मत्स्य पालन (रोहू, कतला, नैन) + *वर्मीकम्पोस्ट (ईसेनिया फेटिडा)*

पेड़ी फसल प्रबंधन

- पेड़ी फसल की उपज बढ़ाने के लिए मेडों को तोड़ना, ठूँठों का कर्तन, *शेविंग* और किनारे की जड़ों की छंटाई अवश्य करनी चाहिए।
- पेड़ी फसल प्रबंधन संयंत्र (*आरएमडी*) अंतःकर्षण क्रियाएं, गोबर की खाद वितरण, कीटनाशक, फफूँदनाशक, उर्वरक और मिट्टी चढ़ाने की क्रिया एक ही बार में करता है और एक हेक्टेयर पेड़ी फसल क्षेत्र के लिए लगभग 4–5 घंटों में सभी क्रियाएँ इस मशीन से की जा सकती हैं।
- पेड़ी में अगर खाली स्थान हो तो पूर्व अंकुरित गन्ने के टुकड़ों से इनकी भराई करनी चाहिए।
- गन्ने की दोहरी पंक्ति से पेड़ी फसल में बुआई से खाली स्थान कम रहता है और उपयुक्त पौधों की संख्या भी बनी रहती है। इसके साथ ही एकल पंक्ति प्रणाली की तुलना में उत्पादन बढ़ जाता है।
- मिट्टी की नमी के संरक्षण, खरपतवार संक्रमण को कम करने और मिट्टी में कार्बन को बनाए रखने के लिए शुष्क पत्तियों को बिछावन के रूप में उपयोग करना चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्र में बिछावन के लिए लगभग 8–10 टन सूखी पत्तियों की आवश्यकता होती है।
- पोटेशियम (80 कि.ग्रा. / हेक्टेयर) का उपयोग के साथ खड़े गन्ने की फसल में कटाई से एक महीने पहले सिंचाई के साथ देने से पेड़ी फसल में फुटान में वृद्धि की जा सकती है।
- एक तिहाई नत्रजन पेड़ी फसल के आरंभ में उपयोग करनी चाहिए। शेष दो तिहाई नाइट्रोजन अधिकतम किल्ले निकले की अवधि के दौरान 30 दिनों के अंतराल पर दो बार में डालनी चाहिए। उर्वरक की मात्रा और समय पेड़ी फसल के आरंभ पर / गन्ने की फसल की परिपक्वता के समय पर निर्भर करता है।
- मृदा परीक्षण के आधार पर पेड़ी फसल के आरंभ में गन्ने की पंक्तियों में फास्फोरस *ड्रिल* करना चाहिए। इससे जड़ों की अच्छी वृद्धि होती है।

समिति के प्रतिवेदन के आठवें खण्ड में जिन मंत्रालयों / विभागों में 25 प्रतिशत से अधिक अधिकारी / कर्मचारी हिंदी में अप्रशिक्षित पाए गए थे, उनकी स्थिति में अब निश्चित रूप से सुधार हुआ है परन्तु जिन मंत्रालयों / विभागों में जहां उस समय प्रशिक्षण कार्य पूरा हो चुका था, अब हिंदी में अप्रशिक्षित अधिकारियों / कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि हो गई है। इसे समिति ने गंभीरता से लेते हुए सिफारिश करती है कि ये मंत्रालय / विभाग प्रशिक्षण कार्य की ओर विशेष ध्यान दें और प्रशिक्षण कार्य को शीघ्रातिशीघ्र पूरा करवाएं, ताकि प्रशिक्षण कार्य एक वर्ष में पूरा हो सकें। समिति यह सिफारिश करती है कि यदि नए भर्ती होने वाले कार्मिकों को हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं है, तो भर्ती के तुरंत बाद ही सरकार को उन्हें प्रशिक्षण के लिए भेजना चाहिए।

संस्तुति संख्या : 5
राष्ट्रपति आदेश दिनांक 31 मार्च, 2017

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की यात्रा में फसल सुरक्षा अनुसंधान के सत्तर साल

शर्मिला रॉय, संजय कुमार गोस्वामी, चंद्रमणि राज, श्वेता सिंह, अरुण बैठा, दिनेश सिंह, सत्यानंद सुशील, दीक्षा जोशी, आशीष सिंह यादव, ब्रह्म प्रकाश एवं आकांक्षा सिंह

भाकृअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत के विभिन्न प्रांतों में गन्ना एक व्यवसायिक फसल के रूप में उगाया जाता है। यह न केवल किसानों के लिए नगद आय का विकल्प है बल्कि इससे भोजन (रस, गुड़ और चीनी), पशुओं के लिए चारा (ऊपर की हरी पतियाँ, *बगास, मोलासेस*), ईंधन और रसायन (*बगास, मोलासेस,* एल्कोहल) की भी प्राप्ति होती है। गन्ने के उत्पादन पर कीट और व्याधियों का विपरीत प्रभाव पड़ता है। एक अनुमान के तहत यह नुकसान 15–25% तक होता है। अगर इसका मूल्य निकालें तो आज यह नुकसान लगभग ₹ 21 अरब तक हो सकता है।

भारतीय कृषि और अर्थव्यवस्था में गन्ने के महत्व को देखते हुए, इसके विभिन्न प्रकार के विकास की ओर ध्यान आकर्षित किया गया। चीनी मिलों के आसपास गन्ने की बड़े पैमाने पर व्यावसायिक खेती के परिणामस्वरूप विभिन्न कीटों द्वारा व्यापक नुकसान को महसूस करते हुए, भारत में गन्ना कीटों और रोगों पर 1912 में संगठित शोध कार्य शुरू किया गया। इसके तहत उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर, तमिलनाडु और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में गन्ना अनुसंधान केन्द्र, शाहजहाँपुर, उत्तर प्रदेश की स्थापना की गई थी। 1932 में चीनी प्रशुल्क के माध्यम से चीनी उद्योग को दी गयी सुरक्षा से गन्ना कीट नियंत्रण के क्षेत्र में अनुसंधान पर अधिक जोर दिया गया। बाद में 1932 में पूसा (बिहार) में एक और गन्ना अनुसंधान केंद्र स्थापित किया गया। इस दौरान, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार के तहत भारतीय केंद्रीय गन्ना समिति की स्थापना हुई। बाद में 1952 में भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की स्थापना भारतीय केंद्रीय गन्ना समिति के अंतर्गत हुई। 1961 तक फसल सुरक्षा में अनुसंधान का कार्य गन्ना समिति के अंतर्गत गठित हुई नाशी कीट योजना उत्तर प्रदेश, बिहार, मद्रास, उड़ीसा, पंजाब, मुंबई में चलता रहा। इस योजना में विभिन्न नाशी कीट के अध्ययन के लिए *एंटोमोलॉजिकल आउटपोस्ट* की भी स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त, डालमियानगर (बिहार) में श्वेत ग्रंग भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में गन्ने के रोगों पर शोध कार्य योजना संचालित की गई। इन योजनाओं ने बाद में फसल कीटों के जैविक नियंत्रण पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना का हिस्सा बनाया गया। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ अप्रैल 1969 में, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की छत्रछाया में आ गया।

स्थापना की दृष्टि से 1912 से आज तक का सफर चित्र 1 से समझा जा सकता है। इस लेख में भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान की स्थापना के बाद इस क्षेत्र में सत्तर वर्षों में किए गए वैज्ञानिक कार्यों और प्रगति का कालानुक्रमिक रूप से दशक में समूहीकृत करने का प्रयास किया गया है।

फसल सुरक्षा अनुसंधान का इतिहास

चित्र 1: भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के विकास का कालानुक्रमिक चित्रण

सर्वप्रथम 1901 में बार्बर नामक वैज्ञानिक ने गोदावरी नदी के डेल्टा एवं मद्रास के गंजाम जिले से गन्ने के लाल सड़न रोग का जिक्र किया। उन्होंने इस रोग का विस्तृत अध्ययन किया जिसमें रोग के कारक का श्रोत, संक्रमण का तरीका,रोग प्रसार के कारण, प्रसार पर मौसम का प्रभाव आदि शामिल थे। बटलर और खान ने 1906 में गन्ने का कंडुआ और 1913 में गन्ने का उकठा रोग का पता लगाया। प्रारंभिक काल (1947 से पहले) के दौरान गन्ना विकृति विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान की गतिविधि ज्यादातर विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों में विशेष रूप से उपोष्ण कटिबंधीय भारत में लाल सड़न के लिए प्रतिरोधी किस्मों के विकास तक सीमित रही। हालांकि, अच्छी संकर (लाल सड़न के लिए प्रतिरोधी) के बावजूद, 1938–40, तक अभूतपूर्व लाल सड़न महामारी पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार में हुई। इस महामारी नें सीओ 213 जो कि एक अच्छी संकर किस्म थी, उसका उत्पादन और गन्ना पेराई की मात्रा को कम कर दिया। 1942–43 में बिहार में गन्ने में कंडुआ और एक अन्य कवक रोग ने महामारी का रूप लिया। कुछ प्रतिवेदन को छोड़कर पचास के दशक के मध्य तक गन्ने की बीमारियों की सूची में बहुत कुछ नहीं जोड़ा गया।

1952 से गन्ने के कीटों और रोगों पर दो वर्गों में गन्ना कीट विज्ञान और गन्ना कवक के तहत व्यवस्थित वैज्ञानिक अनुसंधान का कार्य शुरु किया गया। बाद में इन दो वर्गों को विभागो में उन्नयन कर दिया गया। कीट विज्ञान विभाग ने कीटों और कृन्तकों पर और पादप रोग विभाग ने चीनी फसलों के रोगों और

सूत्रकृमि पर शोध किया। जून 2001 में, भाकृअनुप की संभागीय पुनर्गठन नीति के तहत, चीनी फसलों के पौध सुरक्षा से संबंधित सभी पहलुओं पर काम करने के लिए इन दोनों विभागों को मिला दिया गया। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने 1958 में भारत में गन्ने की सूत्रकृमि समस्याओं की जांच का बीड़ा उठाया। 1968 में, चुकंदर के रोगों पर व्यवस्थित काम किया गया और 1970 में मीठे ज्वार के रोगों पर भी काम शुरू किया गया।

फसल सुरक्षा अनुसंधान के सत्तर साल

गन्ने की फसल में रोपण से लेकर कटाई तक बड़ी संख्या में कीट, गैर–कीट, रोग और सूत्रकृमि का प्रकोप होता है। अंकुरण और जुताई के चरणों में कीट और रोग क्षति के परिणामस्वरूप गन्ने की उपज में कमी आती है, जबकि परिपक्वता चरणों में नुकसान के परिणामस्वरूप गन्ने की गुणवत्ता तथा विशेष रूप से चीनी उत्पादन में कमी आती है। गन्ने में कीट और व्याधि प्रबंधन रणनीति में कर्षण, यांत्रिक, रासायनिक, जैविक और अन्य नियंत्रण उपाय शामिल किए जाते हैं।

गन्ना कीट नियंत्रण के क्षेत्र में समस्या–उन्मुख अनुसंधान पर अधिक जोर देने के लिए 1952 में कृषि मंत्रालय, भारत सरकार के तहत भारतीय केंद्रीय गन्ना समिति द्वारा गन्ने की कीट समस्याओं के विभिन्न पहलुओं की जानकारी एकत्रित की गई। इस जानकारी को विभिन्न पुस्तकों के रूप में समय–समय पर संशोधित कर प्रकाशित भी किया गया। स्वतंत्रता के बाद गन्ना रोग विज्ञान ने विभिन्न दिशाओं जैसे, रोग कारक, महामारी विज्ञान और विभिन्न माध्यमों से रोग प्रबंधन में कई गुना कार्य हुआ। इस अवधि के दौरान बीमारियों को सूचीबद्ध करके उसका समय–समय पर नवीनीकरण भी किया गया। इस सूची में बीमारियों को दो वर्गों में बांटा गया। एक वर्ग में बीजजनित हैं महत्वपूर्ण रोग जैसे लाल सड़न, कंडुआ, उकठा, *लीफ स्कैल्ड*, पेड़ी का बौना रोग, ग्रासीशूट, मोजेक आदि रोग जोड़े गए और दूसरे वर्ग में *लीफ स्पॉट, पाइनएप्पल* रोग और कुछ सूत्रकृमि के कारण होने वाले रोगों को जोड़ा गया। उपयुक्त रोग प्रबंधन प्रथाओं को विकसित करने के लिए रोग के रोगजनक और महामारी विज्ञान के बारे में विवरण खोजने के लिए गंभीरता से कार्य किया गया।

इस लेख में सत्तर वर्षों की प्रगति और शोध कार्य को समझने के लिए गन्ना पौध सुरक्षा (कीट विज्ञान और पादप रोग विज्ञान) का कार्य दशकों में विभाजित किया गया है।

उन्नीस सौ पचास के दशक में अनुसंधान का परिदृश्य (1952–1960)

इस दशक में गन्ने की समिति ने नाशी कीट और रोगों से बचाव के लिए सभी गन्ना अनुसंधान योजना में निगरानी एवं रख–रखाव की योजनाओं को शुरू किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य गन्ना बेधक, पायरिला, दीमक और लाल सड़न रोग की निगरानी करने का था। इसके परिणामस्वरूप प्रभावित गन्नों के गुच्छों को हटाकर लाल सड़न को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सका। पायरिला को गैमेक्सीन पाउडर और उसके परजीवी को पहचान कर नियंत्रित किया गया। पंजाब में गुरदासपुर बेधक को सीओ 285 में *रिपोर्ट* किया गया। नाशी कीट और रोगों से बचाव के लिए बड़ी संख्या में तकनीक का प्रदर्शन किया गया। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली मे लाल सड़न रोग के क्रियात्मक जाति पर कार्य हुआ। इस दौरान रोग प्रतिरोधी किस्मों के विकास पर अनुसंधान कार्य आरंभ हुआ साथ ही कीट और रोगों के नियंत्रण पर भी अध्ययन किया गया।

कीट विज्ञान

अनुसंधान कार्य शुरू में दीमक, तना और जड़ बेधक के जीवन वृत, मृत्यु दर, कीटों से होने वाली क्षति या तने और जड़ बेधक आक्रमण के नियंत्रण के लिए मिट्टी पर कीटनाशक उपचार के प्रभाव पर केंद्रित रहा। चोटी, प्ररोह और जड़ बेधक उत्तर प्रदेश, मद्रास, पंजाब, मुंबई, बिहार में सबसे अधिक नुकसान कर रहे थे। देश भर में इस अवधि के दौरान पहचाने गए प्रमुख बेधक में *सिरपोफेगा निवेला*, तना बेधक *काइलोट्रीया इन्फ्यूसकेटेलस*, गुरदासपुर बेधक *बिसेट्टीय स्टेनिएल्लस*, पोरी बेधक *प्रोसेरा इंडिकुस* शामिल हैं। नैनीताल के पास सर्वेक्षण के दौरान, यह देखा गया कि तना बेधक चीलो *औरिसिलिया* राज्य के मध्य तराई जिलों से अन्य स्थानों पर भी फैल रहे थे। दीमक की तीन प्रमुख प्रजातियों की पहचान *कोपोटेर्मेस हेमी, मिक्रोटेर्मिस* और *ओडोन्टोटर्मेस* प्रजाति के रूप में की गई। इनमें ओडोन्टोटर्मेस आकार में सबसे बड़े थे और सबसे प्रचुर मात्रा में भी पाए गए।

बीएचसी, डीडीटी, एल्ड्रिन, क्लोर्डेन, टोक्साफीन और पैराथियोन जैसे संश्लेषित और गैर–संश्लेषित कीटनाशकों का बेधक, पायरिला और दीमक के लिए प्रभावकारिता परीक्षण किया गया। दीमक के खिलाफ 1% एल्ड्रिन या 5% क्लोर्डेन का छिड़काव प्रभावी पाया गया। 5% बीएचसी धूल के मृदा अनुप्रयोग ने प्ररोह बेधक के संक्रमण को कम किया। एल्ड्रिन 0.01%, डाइल्ड्रिन 0.05% और फोलिडोल 0.06% सफेद मक्खी *एलूरोलोबस बारोडेन्सिस* के खिलाफ उपयुक्त पाये गये। दीमक को नियंत्रित करने में कीटनाशक डाइल्ड्रिन और एल्ड्रिन भी प्रभावी थे। क्रायोलाइट डस्ट, एग्रोसाइड और ग्यूसासोल 550 जैसे नए अणु बेधक कीटों को नियंत्रित करने में प्रभावी पाए गए।

1959 में डालमियानगर में यांत्रिक विधियों के माध्यम से सफेद भृंग नियंत्रण के लिए एक बड़े पैमाने पर अभियान चलाया गया जहां प्रकाश जाल और खाद्य पौधों से लगभग 50,000 भृंगों को एकत्र किया गया और नष्ट कर दिया गया। इस *ऑपरेशन* के साथ कुछ गंभीर रूप से प्रभावित क्षेत्रों में बीएचसी धूल का प्रयोग किया गया जिसके परिणामस्वरूप गन्ने की फसल को बचाया जा सका।

एपिपायरॉप्स, टेलिनोमस, सैकेरिकोकस सैकरी और *पैरालेप्लोमैस्टिक्स डाक्टयलोपी* जैसे परजीवियों के जीव विज्ञान पर अध्ययन भी शुरू किया गया। जैव नियंत्रण कारक *एपिपायरॉप्स मेलनोलेउका* ने मेरठ, सेवरही, गोला गोकर्णनाथ और हरगांव में पाइरिला की महामारी को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया। तापमान, आर्द्रता और वर्षा के प्रभाव के सूक्ष्म जलवायु

अध्ययन प्ररोह और जड़ बेधक बेधकों के प्रकोप पर किया गया ताकि जलवायु और कीट प्रकोप के बीच संबंध को प्रभावी ढंग से समझा जा सके।

रोग विज्ञान

लाल सड़न और कंडुआ के खिलाफ गन्ने की किस्मों में रोग प्रतिरोध अध्ययन की विरासत भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में शुरू की गई थी। इस अध्ययन में बीओ 3, बीओ 10 और बीओ 11 को लाल सड़न प्रतिरोधी किस्मों के रूप में माना गया और सीओ 313 और सीओ 513 लाल सड़न के प्रति अतिसंवेदनशील पाया गया। लाल सड़न कवक का परीक्षण पंजाब, बिहार और उत्तर प्रदेश के 34 *आइसोलेट्स* में किया गया, जहां यह निष्कर्ष निकाला गया कि हल्के रंग वाले, एवं अत्यधिक *स्पोरुलेटिंग आइसोलेट्स* अधिक रोग कारक क्षमता वाले थे। प्रयोग के लिए कृत्रिम टीकाकरण के दो अलग–अलग तरीकों जैसे, *एबट* विधि और लाल सड़न के टीकाकरण की *प्लग* विधि की तुलना की गई और *एबट* की विधि बेहतर संक्रमण देने के लिए उपयुक्त पाई गई। लाल सड़न कवक, *कॉलेटोट्राईकम फाल्केटम* में भिन्नता पर अध्ययन किए गए और कल्चर में *फिजलोस्पोरा टुकुमेंसिस* जैसी लाल सड़न कवक का पेरिथेशियल चरण प्राप्त किया गया। लाल सड़न कवक की कई *स्ट्रेन* इस बीमारी को फैलने के लिए जिम्मेदार पाई गई और बिहार से डी *टाइप स्ट्रेन*, उत्तर प्रदेश से ए *टाइप स्ट्रेन* और उत्तर प्रदेश, बिहार व पश्चिम बंगाल से आई टाइप स्ट्रेन की पुष्टि हुई। जैव नियंत्रण गतिविधि के तहत, *एक्टिनोमाइसिटीज* की दो प्रजातियों द्वारा उत्पादित *एंटीबायोटिक* दवाओं को प्रयोगशाला के स्तर पर लाल सड़न कवक पर निरोधात्मक प्रभाव पाया गया। लाल सड़न के द्वितीयक संक्रमण को नियंत्रित करने में पेरेनॉक्स रसायन का छिड़काव कारगर पाया गया।

गन्ने के कंडुआ रोग के फैलाव का मूल्यांकन उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब और मद्रास में किया गया क्योंकि यहां से गंभीर उपज हानि (60–80%) होने की सूचना मिली थी। यह रोग उच्च तापमान और कम आर्द्रता से जुड़े मानसून की पूर्व अवधि में यह रोग बढ़ता है। कंडुआ बीजाणुओं के नियंत्रण में कॉपर सल्फेट (1.0%) और पेरेनॉक्स (0.32%) का छिड़काव कंडुआ को पूरी तरह से रोकने में प्रभावी पाया गया।

गन्ने पर उकठा के प्रभाव का व्यापक रूप से अध्ययन किया गया और परिवर्तनशीलता के साथ–साथ रोगजनकों के संवर्धी अभिलक्षणों का भी अध्ययन किया गया। उकठा रोग बिहार में आम था और इसके कारक *सेफालोस्पोरियम सैकरी, फ्यूजेरियम मोनिलिफोर्मे* और *फ्यूजेरियम सबग्लुटिनन्स* गन्ने की किस्मों में या तो अकेले या संयोजन में पाए गए थे। जहां *सेफालोस्पोरियम सैकरीका* सफेद स्ट्रेन रोगजनकों के बीच अत्यधिक *स्पोरुलेटिंग* और विषाक्त था। गन्ना का उकठा रोग का कारक धान, मक्का, ज्वार आदि को भी प्रभावित करता पाया गया।

स्ट्रिगा को भी गन्ना फसल के संभावित परजीवी के रूप में पहचाना गया और दो प्रकार के स्ट्रिगा की पहचान क्रमशः *स्ट्रिगा यूफ्रेसियोड्स* और *स्ट्रिगा लुटिया* के रूप में की गई। कुछ अन्य मामूली रोग जैसे *टेंगल टॉप, रेड स्ट्राइप, टॉप रोट क्लोरोसिस* और *रस्ट* के मामले दर्ज किए गए ।

पादप परजीवी सूत्रकृमि पर अध्ययन किए गए और रोग प्रभावित गन्नों से *हॉपलोलैमस* प्रजाति, *प्रेटिलेंकस प्रैटेंसिस, मेलोइडोगाइन जावनिका, टाइलेनवोरिन्चस* प्रजाति, *क्रेकोनेमोइड्स* प्रजाति, *हेलिकोटाइलेंचस नैनस, हेलिकोटाइलेंचस एरिथ्रिना* और *जिफिनिमा साइट्री* प्रजातियों के सूत्रकृमि पृथक किए गए।

उन्नीस सौ साठ के दशक में अनुसंधान का परिदृश्य (1961–1970)

कीट विज्ञान

इस दशक में गन्ने के कीटों और परजीवियों का संग्रह एक नियमित कार्य के रूप किया गया और ब्रिटिश संग्रहालय, लंदन; वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून और भारतीय प्राणी सर्वेक्षण, कलकत्ता के सौजन्य से कीटों की कुल 110 प्रजातियों की पहचान की गई थी। गन्ना घुन *स्किजोटेट्रानिकस एंड्रोपोगोनि*, पत्ती *रोलर* की एक नई प्रजाति *निओमरैस्मिया सस्पिकलिस*, को भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान प्रक्षेत्र में पहली बार देखा गया। साथ ही दो *हाइमेनोप्टेर सयअपांटेल्स साइप्रिस* और *गोनियोजस बोर्नियनस, ट्कनिड* मक्खी *थिओकर्सेलिया* प्रजाति और एक परभक्षी *बीटल क्लेएनियसबाइकुलैटस, नियोमारास्मिया सस्पिकलिस* के लार्वा के परजीवी के रूप में पाए गए थे। 1966 में बाराबंकी में गन्ने की एक दुर्लभ सफेद मक्खी *निओमास्केलिया बगी* देखी गई थी। शक्तिपुर *फार्म्स*, में सफेद मक्खी एलूरोलोबस बारोडेंसिस के *निम्फ* और *प्यूपारिया* को कवक *एस्केरसोनिया प्लेसेंटा* द्वारा परजीवी होने की सूचना मिली थी। *आईआईएसआर फार्म* में बिहार *कैटरपिलर डायाक्रिसिया ओब्लिका* पर ड्रिनो प्रजाति द्वारा परजीवीकरण का पहला रिकॉर्ड दर्ज किया गया ।

जनसंख्या जीव विज्ञान और प्ररोह बेधक के नियंत्रण पर अध्ययन में यह पता चला कि सर्दियों के दौरान लार्वा और बेधक आबादी का बड़ा हिस्सा ठूंठ के ऊपर के हिस्सों मे मौजूद होता है और इसलिए कचरा जलाने से बेधक के नियंत्रण की सिफारिश की गई थी। *आर्मीवर्म स्यूडोलेटिया (सिर्फिस) यूनिपंक्टा* के हमले की भी पहली बार अक्टूबर 1961 के दौरान कोस 510 पर संस्थान के प्रक्षेत्र में रिपोर्ट की गई और इसके जीव विज्ञान, क्षति की प्रकृति और नियंत्रण रणनीतियों पर अध्ययन शुरू किया गया। रसायनों में, बीएचसी की *डस्टिंग आर्मीवर्म* को नियंत्रित करने में प्रभावी थी। गन्ना सफेद मक्खी *एलूरोलोबस बारोडेंसिस* और *बीटल* जैसे अन्य गन्ना कीटों पर भी अध्ययन किया गया। बेधक के रासायनिक नियंत्रण पर परीक्षण जारी रहे और *एंड्रिन इमल्शन* और *ग्रेन्यूल्स* और *टेलोड्रिन इमल्शन* को बेधक को नियंत्रित करने में बेहतर उपचार थे। विभिन्न गन्ने की किस्मों की भी जांच की गई ताकि किस्मों के प्रति बेधकों के व्यवहार का अध्ययन किया जा सके।

परजीवियों पर अध्ययन जारी रहा और नए परजीवियों का

अध्ययन किया गया, जिनमें बेधक के अंडों का परजीवी *टेलेनोमस बेनिफिशियंस, आर्मीवर्म* परजीवी *पारासीरोला* प्रजाति, *डोलिचोकोलोन पैराडॉक्सस, लिनिमिया वल्पेनिओड्स, स्यूडोगोनिया सिनेरास्केन्स, एनिकोस्पिलस* प्रजाति और *पारासीरोला* प्रजाति के *हाइपरपरसाइट पेडिओबियस* के रूप में पहचाने जाने की सूचना मिली थी। *कोर्सयरा* प्रजाति और *ट्राइकोग्रामा* प्रजाति का प्रयोगशाला में पालन कुछ मानकीकरण और संशोधन के साथ जारी रखा गया।

प्ररोह बेधक *चिलो इन्फ्यूसकेटेलस* के प्रयोगशाला पालन के लिए कृत्रिम आहार विकसित किया गया। इस आहार में निर्जलित गन्ना पत्ती के पाउडर को शामिल करने से प्यूपा के वजन, लिंग अनुपात, कीट के उद्भव, पतंगे की लंबी उम्र और उर्वरता के संबंध में गुणवत्ता में सुधार हुआ। मादा फेरोमोन (मादा पेट की नोक का विलायक निष्कर्षण) के जवाब में नर कीट के व्यवहार पर बहुत सारे अध्ययन किए गए, जिसमें क्षेत्र और प्रयोगशाला स्थितियों के तहत नर की उड़ान रेंज शामिल थी। मादा पर *फेरोमोनल* ग्रंथि का स्थान 9वें और 10वें उदर खंडों के बीच के अंतः खंडीय क्षेत्र में होने की पुष्टि की गई।

इस दशक में चुकंदर के कीटों का भी अध्ययन किया गया। प्रमुख कीड़ों में *कट वर्म एग्रोटिस* प्रजाति, लार्वा *डायक्रिसिया ओब्लिकुआ*, पत्ती खाने वाले लार्वा *स्पोडोप्टेरा एक्सिगुआ* और *स्पोडोप्टेरा लिटोरलिस* शामिल हैं।

रोग विज्ञान

इस दशक में लाल सड़न प्रतिरोध की प्रवृत्ति का अध्ययन, गन्ने की किस्मों की लाल सड़न संक्रमण की तुलनात्मक प्रतिक्रिया का आकलन करने और प्ररोह में लाल सड़न टीकाकरण की विधि को परिष्कृत करने पर शोध केंद्रित रहा। इस दौरान लाल सड़न के लिए *डिफरेंशियल होस्ट* की अवधारणा तैयार की गई थी। गन्ने की इन किस्मों का चुनाव लाल सड़न रोग की अलग–अलग प्रतिक्रिया पर निर्धारित की गई थी। इस क्रम में लाल सड़न के डी *आइसोलेट* का टीका लगाकर *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* की प्रतिक्रिया जानने के लिए सात किस्मों के एक सेट का परीक्षण किया गया। चयन के मानदंड थे; शीर्ष की स्थिति, धब्बों की चौड़ाई, धब्बों का रैखिक प्रसार, धब्बों के क्रम की उपस्थिति, केंद्रीय *कोर, नोडल नेक्रोसिस* और इसके प्रसार की प्रवृत्ति के संबंध में धब्बों का प्रकार के आधार पर किस्मों को प्रतिरोधी, मध्यम प्रतिरोधी, संवेदनशील, मध्यम रूप से संवेदनशील और अत्यधिक संवेदनशील के रूप में वर्गीकृत किया गया।

लाल सड़न रोग पैदा करने हेतु *आईआईएसआर* पद्धति टीकाकरण को *प्लग* विधि में संशोधित करके मानकीकृत किया गया। दस किस्मों के सात से आठ माह के पौधों का चयन किया गया और उनमें तीन *नोड्स* और *इंटरनोड्स* को जमीन से लगभग 18 सें.मी. ऊपर *इनोकुलम* में डूबा हुआ नम कपड़े से लपेटा गया। नम स्थिति पैदा करने के लिए *इनोक्यूलेटेड* पौधों के शीर्ष पर 75 *माइक्रोन पॉलीथिन ट्यूबिंग* के टुकड़े से ढका गया। *इनोक्युलेटेड* गन्नों को परिपक्वता पर विभाजित कर संक्रमण की सीमा के लिए मूल्यांकन किया गया।

इस दशक में विषाणु जनित रोगों पर केंद्रित अनुसंधान की शुरुआत भी हुई, विशेष रूप से घासी प्ररोह रोग, पेड़ी का बौना रोग और *मोजेक* रोगों पर अध्ययन किया गया। अध्ययन में यह स्थापित किया गया कि घासी प्ररोह रोग, *अल्बिनो* और नए *क्लोरोटिक* रोग एक ही थे। पौधों की *ऐल्बिनोइड* स्थिति पौधों में उपलब्ध मैंगनीज पर निर्भर थी। घासी प्ररोह रोग पहली बार 1949 में महाराष्ट्र में दर्ज किया गया और देश के कई हिस्सों जैसे महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार, आंध्र प्रदेश, मद्रास, ओडिशा, पंजाब, पश्चिम बंगाल व मध्य प्रदेश में यह पाया गया। इस दौरान सीओ 312, 395, 419, 453, 740, 859, 1138, 1158,बीओ 17, 18, 22, 29 जैसी कई किस्में प्रभावित हुई। घासी प्ररोह रोग को विषाणु *लॉगियुंगिस सकैराई* के माध्यम से संचरित होता और यह विषाणु हर साल संक्रमित सेटों के माध्यम से फैलता है जहां से *एफिड्स* द्वारा प्रसारित होता है। एफिड कालोनियों को प्रयोगशाला में एकत्र किया गया और कटे हुए पत्तों पर गुणित किया गया। *एफिड्स* द्वारा *जीएसडी* के संचरण का प्रयोगशाला और क्षेत्र दोनों स्थितियों में अध्ययन किया गया। एक ततैया लाइसेपलेबस प्रजाति *लॉगियुंगिस सच्चरी* को परजीवी करते पाया गया जो की *लॉगियुंगिस सच्चरी* पर परजीवी की पहली *रिपोर्ट* थी। ततैया को प्रयोगशाला में कटे हुए पत्तों पर अनुरक्षित एफिड कल्चर पर पाला गया ताकि *एफिड* का प्राकृतिक रूप से जैव नियंत्रण पाया जा सके।

कंडुआ कारक *आस्टिलगो सिटामिना* के बड़े पैमाने पर गुणन के तरीके, अकृत विज्ञान का अध्ययन कंडुआ *इनोक्यूलेशन* तकनीकों के मानकीकरण और विभिन्न किस्मों पर कंडुआ कवक संक्रमण के आकलन भी किया गया।

इसी दशक में पंजाब, उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र में पाये जाने वाले चुकंदर के विभिन्न रोगों को भी दर्ज किया गया। चुकंदर में बताई गई प्रमुख समस्याएं *राइजोक्टोनिया सोलानी, स्क्लेरोटियम रॉल्फ्सि, राइजोक्टोनिया बटाटिकोला, सर्कोस्पोरा बेटिकोला, अल्टरनेरिया* प्रजाति, *मैक्रोफोमिना* प्रजाति, *फाइलोस्टिक्टा* प्रजाति और *कर्वुलरिया* थीं।

उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, मद्रास और मैसूर के विभिन्न गन्ना उत्पादक क्षेत्रों से पादप परजीवी सूत्रकृमि की पहचान की गई। जिन प्रमुख सूत्रकृमियों की पहचान की गई उनमें *होपलोलैमस एंगुस्टालैटस, हेलिकोटाइलेंचस एरिथ्रिन, हेलिकोटाइलेंचस नैनस, टायलेनचोरहिन्चस लैटस, प्रेटिलेंचस प्रैटेंसिस, जिफिनिमा सिट्री, लॉन्गिडोरस एलॉन्गेट्स* आदि थे। ये सूत्रकृमि अन्य फसल पौधों जैसे धान, गेहूं, पान, टमाटर काँस से भी जुड़े पाए गए। लिंडेन, टेलोड्रिन, गामा बीएचसी, वापम (सोडियम मिथाइल डाइथियोकार्बामेट) और नेमागन (1,2 डाइब्रोमो–3–क्लोरोप्रोपेन) का उपयोग करके सूत्रकृमि नियंत्रण का भी प्रयास किया गया।

उन्नीस सौ सत्तर के दशक का अनुसंधान परिदृश्य

(1971–1980)

कीट विज्ञान

पश्चिमी उत्तर प्रदेश में पाइरिला महामारी को देखते हुए इस दशक में पाइरिला और इसके परजीवी *एपिपायरॉप्स मेलानोल्यूका* पर गहन अध्ययन किया गया। यह पाया गया कि अप्रैल–मई महीने के दौरान पाइरिला की संख्या अत्यधिक हो जाती है, उसके बाद उच्च तापमान और गर्मी इनकी संख्या को कम कर देती हैं। फिर से, मानसून की शुरुआत के साथ कीट की संख्या बढ़ने लगती है। और इस समय, इसके परजीवी की भी संख्या बढ़ना शुरू हो जाती है जो अगस्त–सितंबर तक अपने चरम पर पहुंच जाती है और अब पूरी तरह से नाशी कीट आबादी को नियंत्रित करने में सक्षम होती है। इसके अलावा पाइरिलोक्सेनोस कॉम्पेक्टस ने *पाइरिला निम्फ* और वयस्कों के 30 प्रतिशत तक आबादी को कम कर दिया। सितंबर के पहले सप्ताह के दौरान, कुछ खेतों में, यह परजीवी 60 प्रतिशत वयस्क पाइरिला को *स्टाइलोपिड* में परिवर्तित कर दिया। परजीवी *एपिपायरॉप्स मेलानोल्यूआ* के बड़े पैमाने पर गुणन के लिए प्रयोगशाला अध्ययन में यह देखा गया कि वयस्कों के विकास में वातावरण आर्द्रता (>65%), खेत में परजीवी की स्थापना के लिए मादा और नर का लिंग अनुपात (2.8:1) आवश्यक है ।

प्ररोह बेधक संक्रमण के आकलन के लिए एक पद्धति विकसित की गई थी। जो सतही संक्रमण स्तर सूचकांक (:प्रकोप) और संयुक्त संक्रमण के बीच संबंध पर आधारित थी। उपोष्ण कटिबंधीय भारत में चोटी बेधक के कारण आर्थिक क्षति के स्तर की पहचान की गई। तीसरी पीढ़ी में 6.48% का संक्रमण बसंतकालीन गन्ने में आर्थिक क्षति के स्तर के रूप में निर्धारित किया गया Y=0.038X (1.325) जहां Y=प्रतिशत तीव्रता और X =प्रतिशत संक्रमण है ।

पाइरिला आबादी के पूर्वानुमान के लिए, शीतकालीन अंडे और *निम्फल* चरणों के साथ एक एकल कारक समीकरण विकसित किया गया : Y= [(Ew-a) + (Ni + mp)] (K-K1-K2)। जहांय Y वयस्कों की संख्या, Ew– शीत कालीन अंडे, a– अंडे सेने की दर, Ni: *निम्फ* की संख्या, mp– कम तापमान के कारण निम्फ मृत्यु दर, K– अगले मौसम के दौरान वयस्कों के प्रकट होने का समय, K1– अंडे की विकास अवधि, K2– *निम्फ* की विकास अवधि।

इस दशक में अन्य कीटों के जैविक नियंत्रण कारकों पर भी जोर दिया गया। विभिन्न स्थानों पर सर्वेक्षण के आधार पर, कीटों और उनके परजीवियों की एक सूची विकसित की गई। उनके जीव विज्ञान, वैकल्पिक मेजबान, प्रयोगशाला पालन *प्रोटोकॉल*, प्रयोगशाला में पैदा आबादी की क्षेत्र प्रभावकारिता आदि पर भी गहन अध्ययन किया गया। इसमें *आइसोटिमा जेवेन्सिस, स्टर्मियोप्सिस इंफेरेंस*, एवं *एस. पैरासिटिका* पर सफलता मिली थी। *टेलेनोमस बेनिफिशियंस, ट्रिसोलकस* प्रजाति की दो प्रजातियों द्वारा अंडा परजीवीकरण के प्रभावों का आकलन किए गए। हालांकि तीनों परजीवी एक दूसरे के साथ महत्वहीन रूप से जुड़े हुए थे, किन्तु *ट्रिसोलकस* प्रजाति की अनुपस्थिति में *टेलीनोमस* प्रजाति अंडा परजीवीकरण की दक्षता में वृद्धि हुई।

परजीवियों के गुणन के लिए, एक नई सामूहिक गुणन तकनीक विकसित की गई जिसे *आईआईएसआर ला* हाइमे पालन पिंजरा कहा गया। इसमें लकड़ी का बड़ा पिंजरा होता है जिसमें 20 छड़ें होती हैं, जिनमें से प्रत्येक में छेद होते हैं, जिसमें मेजबान प्यूपा युक्त *डिस्केड स्ट्रॉ* पाइप के टुकड़े लगे होते हैं। गर्भित मादाओं को परजीवीकरण के लिए पिंजरे में छोड़ दिया जाता है। डिंब ग्रंथि के माध्यम से *डिस्क* को छेदकर, वे मेजबान प्यूपा के पास डिंबोत्सर्जन करते हैं, 2–3 दिनों के बाद छड़ से *स्ट्रॉ* पाइप हटा दिए जाते हैं और वयस्क परजीवी के उद्भव के लिए *पेट्री डिश* में रखे जाते हैं। यह देखा गया कि नई तैयार की गई सामूहिक गुणन तकनीक के परिणामस्वरूप 70–85 प्रतिशत परजीवीकरण हुआ, जो पुराने तकनीक पिंजरे और चिमनी के तरीकों से बेहतर था।

इस दशक में भी संकरित किस्मों का बेधक कीटों के नुकसान के आधार पर चयन का कार्य किया गया। विभिन्न बेधक कीटों के जीव विज्ञान पर अध्ययन जारी रहा। तना बेधक के जीवन चक्र पर तापमान का प्रभाव, सापेक्षिक आर्द्रता आदि को अच्छी तरह से प्रलेखित किया गया। वे सर्दियों के मौसम में गन्ने में ही सुसुप्ता अवस्था में होते हैं। तना बेधक को पेड़ी फसल के माध्यम से नई फसलों को संक्रमित करते देखा गया। यह भी देखा गया कि जिन खेतों में गेहूँ के बाद गन्ने की फसल को लिया गया, वहाँ गन्ने में गुलाबी बेधक का प्रकोप काफी अधिक हुआ।

बेधक कीटों के द्वारा किए गए नुकसान का आकलन, नियंत्रण के तरीके जैसे रोपण का समय, पौधों की आबादी, विभाजित खुराक में नत्रजन–उर्वरक का उपयोग और कीटनाशकों का प्रयोग जैसे, मोनोक्रोटोफॉस @ 0.75 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर, 4 बार 30 दिनों के अंतराल पर, गामा बीएचसी का प्रयोग 1 कि.ग्रा. वास्तविक संघटक प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलने से बेधक कीटों को नियंत्रित करने में सफलता मिली।

गन्ने के घासी प्ररोह रोग के रोगवाहकों पर किए गए अध्ययनों से संकेत मिलता है कि *एफिड्स* की दो प्रजातियां, *मैलानाफिस इंडोसैचरी* और *एम. सच्चरी*, गन्ने पर पाए गए थे। हॉपर को जीएसडी संचारित करने की सूचना पर, एक सर्वेक्षण में हॉपर की आठ प्रजातियों 1. *कोल्ला मिमिका*, 2. *हेकलस* प्रजाति; 3. *ओलियारस होडगार्टी*, 4. *सिकाडेला* प्रजाति, 5. *एक्सिटियनस* प्रजाति, 6. *पैराबोलो क्रालस पोर्स्कटस*, 7. *नेफोटेटिक्सएपिकालिस मोत्शे*, 8. *एन. विरेसेंस* को गन्ने के खेत में और उसके आसपास के खरपतवारों पर से एकत्रित किया गया।

रोग विज्ञान

1970 के दशक के दौरान लाल सड़न पर महामारी विज्ञान अध्ययन जारी रखा गया। इसी क्रम में लाल सड़न (टीका कृत) प्रभावित पौधों में उच्च फिनोलिक मिश्रण की मात्रा दर्ज की गई थी, लेकिन रोग प्रतिरोध के साथ कोई संबंध नहीं स्थापित किया

जा सका। अध्ययन में यह पाया गया कि लाल सड़न का बीजाणु मिट्टी में 30 दिनों से अधिक जीवित रह सकता था और लगभग 60 दिनों तक मिट्टी में दबे हुए संक्रमित गन्ने से, अगली फसल में संक्रमण का खतरा रहता है। यह देखा गया कि मिट्टी से लाल सड़न के प्रारंभिक संक्रमण के लिए न्यूनतम 50 बीजाणु/ग्राम मिट्टी आवश्यक पाई गई। लाल सड़न रोगजनक के प्रयोगशाला में वृद्धि के अंकलन में यह पाया गया कि अधिकतम वृद्धि 25 डिग्री सेल्सियस तापमान और चीनी सांद्रता (1.25 से 20%) में होती है। यह देखा गया कि 1% पेक्टिन युक्त मीडिया में रोगजनक बेहतर तरीके से विकसित होते हैं। लाल सड़न रोगजनक के टीकाकरण के समय पर अध्ययन से संकेत मिलता है कि अगस्त और सितंबर का महीना रोग की दृश्य अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त है। टीकाकरण के स्थान से पता चला कि 65–90% संक्रमण पत्ती के निशान से, 5–45% *रूट प्रिमोर्डिया* के माध्यम से और 5 से 30% *ग्रोथ रिंग* से हुआ। यह भी देखा गया कि नवंबर के बाद लाल सड़न का संक्रमण गन्ने के अंदर सुप्त या स्थानीय रूप में बना रहता है।

अन्य रोगों में गन्ने के पीले मोजेक, *लीफ स्केल्ड*, उकठा पर अध्ययन जारी रहा। पीले *मोजेक* रोग के कारण पेराई योग्य गन्ने की संख्या और गन्ने की उपज में उल्लेखनीय कमी पाई गई। यह रोग गन्ने से मीठे ज्वार, मक्का, *सौरघम हालेपेंस* और *सौरघम इटालिका* में यांत्रिक रूप से भी फैल सकता था इसकी भी पुष्टि की गई। संक्रमित गन्ने के पत्तों से अलग किए गए पीले *मोजेक* विषाणु को सफलतापूर्वक 0.3% *एरकॉर्बिक एसिड*, 0.3% *मर्कैप्टोएथेनॉल* और 0.01 एम *सोडियम डाइईथाइल डाइथियोकार्बामेट्स* और *फॉस्फेट बफर पीएच* 7.0 स्पष्टीकरण, *सोडियम सल्फाइट* और *सोडियम डाइईथाइल डाइथियोकार्बामेट्स* के मिश्रण में शुद्ध कर अलग किया गया और इसकी संक्रामकता को 50% *क्लोरोफॉर्म* के साथ बरकरार रखा गया। गन्ने के सभी रोगों के संक्रमण के बाद अंकुरण, *टिलर*, पेराई योग्य गन्ना की संख्या, ऊँचाई और उपज में उल्लेखनीय कमी देखी गई।

गन्ने के रोगों को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न तरीकों पर अध्ययन की कोशिश की गई जिसमें मिट्टी संशोधन, गर्म हवा उपचार के साथ–साथ रसायनों का प्रयोग किया गया। गन्ना खोई से मिट्टी में संशोधन से लाल सड़न रोग और उकठा पर दमनात्मक प्रभाव पड़ा। 54° सेल्सियस पर 2 घंटे के लिए संक्रमित गन्ने के टुकड़ों का गर्म हवा उपचार से घासी प्ररोह रोगजनित संक्रमण, 54° सेल्सियस पर 5 घंटे या उससे अधिक के लिए लाल सड़न के जनित संक्रमण को समाप्त किया जा सका। किन्तु 54° सेल्सियस पर 4 घंटे का उपचार गन्ने की पत्ती का झुलसा रोग नियंत्रित करने में अप्रभावी था।

एक नई चिकित्सा पद्धति, नम गर्म हवा उपचार (*एमएचएटी*) विकसित की गई। यह उपचार पद्धति लाल सड़न, घासी प्ररोह रोग और पेडी का बौना रोग के लिए गन्ना बीज के उपचार में प्रभावी पाई गई। लेकिन *एमएचएटी मोजेक, लीफ स्कैल्ड* और कंडुआ रोगों के लिए प्रभावी नहीं था। एमएचएटी का 1 घंटे के लिए 51–53 डिग्री सेल्सियस पर नम गर्म हवा उपचार गन्ने के अंकुरण को बढ़ाता है जबकि एक घंटे से अधिक समय तक उपचरित करने से अंकुरण में गंभीर नकारात्मक प्रभाव होता है।

इसी दशक के दौरान बिहार, हरियाणा, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान और उत्तर प्रदेश जैसे देश के विभिन्न हिस्सों से 17 विभिन्न प्रकार के परजीवी सूत्रकृमि *जेनेरा* की पहचान की गई।

उन्नीस सौ अस्सी के दशक में अनुसंधान परिदृश्य (1981–1990)

कीट विज्ञान

इस दशक में बेधक *चिलो ऑरिसिलियस* के जीवन चक्र अध्ययनों में यह बताया गया है कि इस बेधक का प्रकोप अगस्त से शुरू होकर दिसंबर तक अपने चरम पर पहुंचता है और जनवरी तक इसकी संख्या में गिरावट शुरू हो जाती है। गन्ने पर चोटी बेधक (*सिरपोफेगा निवेल्ला*) को आर्थिक क्षति के स्तर के निर्धारण पर अध्ययन में पाया गया कि तीसरी और चौथी पीढ़ी के संक्रमण से गन्ने की उपज में काफी कमी आई है।

पहली बार सर्वेक्षण से पता चला कि *ब्लैक वीविल* गन्ने का कीट है और गन्ने को गंभीर क्षति पहुंचता है। यह क्षति (10–15%) तक आँकी गई। अन्य कीट का प्रकोप पूर्व की भांति ही था। सर्वेक्षणों और विभिन्न प्रयोगों पर *पैरासिटोइड्स* की *रिकॉर्डिंग* और अवलोकन किया गया। पाइरिला अंडे पर एक नया परजीवी *रोपस फुलोवेई टिम्बरलेक* दर्ज किया गया। दीमापुर (नागालैंड) से गन्ने के कीट के रूप में पहली बार *ट्रोकोरोपालस सच्चरी मार्शल*, एक घुन दर्ज किया गया। *स्केल* कीट, *एम. ग्लोमेरेटा* पर पाए जाने वाले तीन *हाइमनोप्टरस* परजीवी, *एस्टीमैचस जैपोनिकसएशमीड* (*फैमरू एन्सीर्टिडे*), *बैट्रीओइडेक्लावा इंडिका* (*फैमरू एफेलिनिडे*) और *एनकार्सिया* प्रजाति (*फैमरू एफेलिनिडे*) के थे।

पाइरिला कीट के लिए गन्ने के कृतकों की जांच से कोसे 8119, 8103, 8021, 7918, 8122 और बीओ 91 को पाइरिला प्रकोप के प्रति मध्यम सहिष्णु होने का सुझाव दिया गया। किस्मों सीओ 1158, कोसे 8118, कोलख 8003, कोह 7802, कोसे 7918, कोजे 77 और कोसे 767 किस्मों ने प्ररोह बेधक प्रकोप के प्रति सहनशीलता पाई गई। सीओ 7321, सीओ 1158 और सीओ 7321, सीओ 1148 किस्म के संयोजन को अन्य की तुलना में कम आक्रमण प्राप्त हुआ।

जैविक नियंत्रण के प्रयासों में स्वदेशी परजीवों का बड़े पैमाने पर पालन और रख–रखाव (*आइसोटिमा जेवेन्सिस* रोह, *कैम्पिलोन्यूरस म्यूटेटर फैबर, स्टर्मियोप्सिस इनफेरेंस टीएनएस*। और विदेशी परजीवी (*पैराथेरेसिया क्लैरिपलपिस वुल्प*) जारी रखा गया। साथ ही उनके क्षेत्र प्रभावकारिता परीक्षण भी जारी रहे। परजीवीकरण का व्यवहार यानी *ओविपोजिशनल*, लार्वा, क्षेत्र स्थापना *पैटर्न* और विभिन्न परजीवियों (*अपांटेल्स, टेलोनोमस, स्टेनोब्राकॉन, इफियालैक्स, राकोनोटस, एलास्मस, टेट्रास्टिकस, स्यैथियस, आइसोटिमा और एपिपायरॉप्स* प्रजाति) के परजीवीकरण की सीमा स्थापित की गयी। एपिपायरॉप्स को

पाइरिला के खिलाफ जैविक नियंत्रण एजेंट के रूप में स्थापित किया गया जबकि *स्टिचोलोटिस मेडागास्का* को *स्केल* कीट के खिलाफ स्थापित किया गया। इस वर्ष के दौरान विभिन्न केंद्रों पर संग्रह के अलावा, बड़े पैमाने पर शिकारी परजीवियों *(स्टिचोलोटिस मेडागासा, एलोरहोगैस पाइरालोफैगस, ब्रैकॉन* प्रजाति, *रेकोनोटस* प्रजाति, *स्टेनोब्राकॉन* प्रजाति, *फारोस्किमनस हॉर्नी, एनाब्रोलेपिस मयूरी, नियोकोकिडेनिसिरियस* प्रजाति, *ट्राइकोग्रामाटोइडिया एल्डाना, एपिपायरोप एफ रौ)* को किसानों के खेतों में *रिलीज* किया गया।

शर्करा फसलों के कीट से जुड़े रोगाणुओं के अलगाव, पहचान और रोगजनकता के अध्ययन से पाइरिला पर *हिर्सुटेला साइड्रेटस* और *एंटोमोफथोरा* प्रजाति के रोगाणु का पता चला। इसी प्रकार विभिन्न बेधकों पर जैसे, गुलाबी बेधक के साथ *प्रोटोजोआ* प्रजाति (*नोसेमा* और *प्लसिया* प्रजाति); बिहार सूंडी पर *एंटोमोफथोरा विरुलेंटा* और प्ररोह बेधक पर कवक *फ्यूजेरियम* प्रजाति, *एंटोमोफथोरा विरुलेंटा, स्यूडोमोनास एरुगिनोसा, बैसिलस स्फेरिकस* और *स्ट्रेप्टोकोकस* प्रजाति से रोगजनकता के प्रमाण मिले।

रासायनिक प्रबंधन कार्यक्रमों के तहत गामा बीएचसी इमल्शन, सेविडोल, एल्डीकार्ब, सिंथेटिक पाइरेथ्रोइड्स जैसे पर्मेथ्रिन, डेकामेथ्रिन के उपयोग की वकालत विभिन्न बेधकों के लिए की गई। जैव नियंत्रण के लिए इस दशक में पहली बार गन्ने में एंटोमोजेनस कवक *मेटारिजियम अनिसोप्लिया* और *ब्यूवेरिया बेसियाना* का प्रक्षेत्र परीक्षण किया गया। इनसे बेधकों और *पायरिला पेरपुसिला* के नियंत्रण पर आशाजनक परिणाम मिले, साथ ही इनका अन्य प्राकृतिक परजीवियों पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ा।

कृन्तकों के प्रबंधन पर किए गए अध्ययनों से पता चला है कि कृन्तकों के संक्रमण का निर्धारण संबंधित क्षेत्रों में कृन्तकों के बिलों की मात्रा से किया जा सकता है। इस फसल में कृन्तकों के रासायनिक नियंत्रण के लिए जिंक फास्साइड *बैटिंग* और उसके बाद *ब्रोमैडियोलोन बैटिंग* को मानकीकृत किया गया।

रोग विज्ञान

इस दशक में उकठा, कंडुआ, लाल सड़न और *लीफ स्कैल्ड* रोगों की किस्मों और महामारी विज्ञान की जांच पर जोर दिया गया। *लीफ स्कैल्ड* रोग के मामले में, बीमारी युक्त गन्ने के अध्ययन ने संकेत दिया कि पत्ती में *प्रोलाइन* सामग्री में वृद्धि हुई है, लेकिन *नोड, इंटरनोड* और अंकुरण में कमी आई जबकि मुक्त अमीनो–एसिड में वृद्धि हुई और पत्ती की पपड़ी से प्रभावित पौधों के *नोडल* और *इंटरनोडल* ऊतकों में भी परिवर्तन दिखा। 4 घंटे के लिए 54 डिग्री सेल्सियस पर नम गर्म हवा के उपचार के साथ *लीफ स्कैल्ड* का अधिकतम रोग नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है। महामारी विज्ञान और गन्ने के कंडुआ रोग के नियंत्रण से पता चला कि – (अ) कंडुआ कवक की गन्ने की कलियों से जुड़ी कवक की छह अलग–अलग प्रजातियां हैं (ब) कंडुआ रोग का संक्रमण के केन्द्रापसारक प्रसार (स) *राइजोस्फीयर* कवक (*फ्यूजेरियम* प्रजाति, *ट्राइकोडर्मा* प्रजाति और एक *नॉन–स्पोरुलेटिंग* प्रजाति) ने कंडुआ के *टेलिओस्पोर* के अंकुरण को प्रभावित किया (द) मिट्टी की नमी के स्तर में वृद्धि के साथ *टेलिओस्पोर* का अंकुरण भी बढ़ा ।

इस दशक में लाल सड़न महामारी विज्ञान के अध्ययन पर ज्यादा प्रगति हुई थी। वार्षिक लाल सड़न पुनरावृत्ति, और द्वितीयक संक्रमण के प्रसार में उनकी भूमिका और लाल सड़न रोगजनक के *नोडल* संक्रमणों के विकास पर अध्ययन से पता चला कि अधिकतम रोग (लाल सड़न) विकास सितंबर में हुआ और न्यूनतम जनवरी में हुआ जिसने रोग पर कम तापमान के प्रभाव का संकेत दिया। लाल सड़न प्रतिरोधी किस्मों में निष्क्रिय संक्रमण का संकेत मिले जो पत्ती के निशान, *रूट प्रिमोर्डियम, ग्रोथ रिंग, बड स्केल* और *नोडल* क्षेत्र में थे और अनुकूल परिस्थिति आने तक वहीं स्थानीय रूप में बने रहे। लाल सड़न रोगजनक़ का फैलाव प्राथमिक *फोकस* के बिंदु से 5.8 मीटर तक हो सकता है किंतु प्राथमिक *फोकस* से केवल 3.6 मीटर की दूरी पर ही पौधों का पूर्ण रूप से सूखने लगते थे। मौसम के बाद फसल के बचे हिस्से में संक्रमण के संभावित स्रोत के रूप में सूखे *एसर बुलाई* संक्रमित गन्ने के छिलके पर पाये गए और इनसे नए पौधों में रोग विकसित हुआ। अनुसंधान से यह भी प्रमाणित हुआ कि हवा से असंक्रमित गुच्छों में संक्रमण फैल सकता है। 10 सें.मी. तक मिट्टी में दबे होने के 2 महीने बाद तक रोगजनक के जीवित रहने का संकेत मिले। जलभराव की स्थिति में भी कवक नम मिट्टी की सतह पर अधिकतम 7–8 महीने तक जीवित रह सकता था। मिट्टी में लाल सड़न रोगजनक कम नमी, विपरीत तापमान और परती अवधि में, लाल सड़न रोगजनक सुरक्षित संरचना बना कर जीवित रहता है।

लाल सड़न के जैव रासायनिक अध्ययनों ने संकेत दिया कि *सी. फाल्केटम* प्रतिरोधी गन्ने की प्रजातियों में *इनवर्टेस* की प्रतिरोध तंत्र में भूमिका पाई गई। *पीपीओ* गतिविधि आमतौर पर स्वस्थ ऊतकों की तुलना में संक्रमित ऊतकों में कम थी। जनवरी में कम तापमान की स्थिति में *पीपीओ* गतिविधि में वृद्धि ने *पीपीओ* गतिविधि और गन्ने में लाल सड़न कवक के खिलाफ प्रतिरोध के बीच सकारात्मक संबंध का संकेत दिया। उच्च रोग के मामले में और रोग विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियों में *पेरोक्साइड* गतिविधि अधिक स्पष्ट थी। रोग के और *पेरोक्सीडेज* गतिविधि संगत प्रतिक्रियाओं में जनवरी में, सितंबर और फरवरी की तुलना में में कम देखी गई और इस प्रकार इसे उच्च रोग विकास से जोड़ा गया। इन अवलोकनों ने उच्च *पेरोक्सीडेज* गतिविधि और रोग संवेदनशीलता के बीच संबंध का संकेत मिला।

लाल सड़न के विभिन्न *आइसोलेट्स* के बीच अध्ययन ने इन कारकों के आकृति विन्यास अंतर प्रदर्शित किया। विभिन्न किस्मों पर लाल सड़न रोगजनकों के *आइसोलेट्स* के बीच विभेदक प्रतिक्रियाएं देखी गईं। *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* के *आइसोलेट्स* के बीच रोगजनक परिवर्तनशीलता के अस्तित्व की संभावना का संकेत दिया। जिसके कारण गन्ने की दस किस्मों

(सीओ 312, सीओ 997. सीओएल 9, सीओ 1336, सीओ1148, सीओ 1158, सीओ 62399, सीओ 767, कोलख 7701 और कोजे 64) पर गन्ने का लाल सड़न होने की प्रतिक्रिया का मूल्यांकन किया गया। इस अवधि के दौरान लाल सड़न रोगजनकों की विभिन्न टीकाकरण विधियों का मानकीकरण किया गया। आईआईएसआर नोडल विधि और कृत्रिम रूप से संक्रमित 10 सें. मी. लंबे गन्ने के डंठल के टुकड़ों को जमीनी स्तर से ठीक ऊपर पहले या दूसरे *नोडल* क्षेत्र में लगाने से आशाजनक परिणाम दिखाई दिए। किसान के खेत में प्रतिरोध और संवेदनशीलता का आकलन करने के लिए, एक समीकरण और ग्रेड विकसित किए गए। 50 से कम मूल्य वाली किस्मों को प्रतिरोधी के रूप में, 51–89 से मध्यवर्ती (मध्यम प्रतिरोधी/मध्यम रूप से अतिसंवेदनशील) और 89 से ऊपर अतिसंवेदनशील के रूप में वर्गीकृत किया गया ।

इस दशक में, रसायनों के माध्यम से लाल सड़न का प्रबंधन हेतु *बेलेटन* @ 0.5 प्रतिशत या *बेविस्टिन* @ 0.5 प्रतिशत के उपयोग के लिए सेट उपचार और ब्लीचिंग पाउडर के मिट्टी के आवेदन के लिए वकालत की गई ।

उन्नीस सौ नब्बे के दशक में अनुसंधान परिदृश्य (1991–2000)

कीट विज्ञान

इस अवधि के दौरान उत्तर प्रदेश, हरियाणा, बिहार, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल में प्लासी बेधक की मामूली घटना देखी गई। कोलख 8001 के पेड़ी पर *ब्लैक बग* की आबादी सबसे अधिक पाई गई। आवधिक अवलोकन में *ब्लैक बग* से अधिकतम नुकसान, अप्रैल और मई के दौरान हुआ जब तापमान 40–43° सें. और 10–37% वायु की आर्द्रता थी। शकरनगर और प्रवरानगर केंद्र में प्रमुख कीट जैसे अगेती चोटी बेधक, चोटी बेधक, पोरी बेधक, गुलाबी बेधक और *स्केल* कीट का मौसमी उतार–चढ़ाव दर्ज किया गया।

नाशी बेधक कीटों के नियंत्रण में संश्लेषित *पाइरेथ्रोइड्स* प्रभावी थे, विभिन्न स्वदेशी और विदेशी परजीवियों का उपयोग करके गन्ना कीट बेधक, पाइरिला और *स्केल* कीट का जैविक नियंत्रण सफल रहा। प्रयोगशाला में अंडों के परजीवियों के उत्पादन के लिए एक दिन पुराने कोर्सयरा के अंडे का प्रयोग सफल रहा और उनमें अधिकतम परजीवीकरण (75.2%) रहा और बरसात के मौसम में भी उच्च परजीवीकरण (56.07 से 90.10%) मिला। प्ररोह बेधक के विरुद्ध *ट्राइकोग्रामा टोइडियाएल्डनी* का सामूहिक प्रजनन और क्षेत्र उपनिवेशीकरण सफल रहा।

प्री–मानसून कीट (दीमक, प्ररोह बेधक और जड़ बेधक) का नियंत्रण गामा एचसीएच से किया गया। गन्ने के कृन्तकों की जांच में कोलख 8005 में चोटी बेधक (43.43%) का अधिकतम प्रकोप देखा गया। हालांकि, कीटनाशक उपचारित भूखंडों में प्रकोप कम था। चोटी बेधक के तीसरे *सी.एम.* के कीट प्रबंधन में अंडे का संग्रह, संक्रमित टहनियों को हटाना और फ्यूराडॉन @ 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर का उपचार का प्रयोग सफल रहा। गन्ना चोटी बेधक के विरुद्ध नीम आधारित कीटनाशक का मूल्यांकन किया गया और नीम मार्क 1% और उसके बाद इकोनीम @ 15 पीपीएम से प्रभावी नियंत्रण पाया गया।

रोग विज्ञान

इस दशक के दौरान, लाल सड़न पर किए गए कार्यों को नीचे दिये हुए बिंदुओ में वर्णित किया जा सकता है :

- उत्तर प्रदेश, हरियाणा, बिहार, आंध्र प्रदेश व पश्चिम बंगाल में लाल सड़न की अलग–अलग वार्षिक तीव्रता देखी गई जो की सुरक्षा सीमा के अंदर ही थी।
- प्रकृति में *कोलेटोट्राइकेटम फाल्केटम* की काफी आनुवंशिक विविधता पाई गई।
- *कोलेटोट्राइकेटम फाल्केटम* के विभिन्न प्रवर्धनों, वार्षिक लाल सड़न पुनरावृत्ति का मिट्टी और फसल अवशेष में विकास और उत्तरजीविता में प्रमुख भूमिका पाई गई।
- इसी दौरान रोगजनक प्रतिक्रिया के आधार पर, *कोलेटोट्राइकेटम फाल्केटम* के *स्ट्रेन* को पहचानने की एक संशोधित प्रणाली विकसित की गई।
- गन्ने के लाल सड़न रोगाणुजनक की *सीरोलॉजिकल* और *बायोकेमिकल* पहचान भी की गई
- मानक प्लग और नोडल विधियों को टीकाकरण और लाल सड़न में *रोगाणुजनक* की आगे की पहचान के लिए मानकीकृत किया गया।
- गन्ना जननद्रव्य के स्क्रीनिंग परीक्षण में एसईएस 182, एसईएस 244 *कोलेटोट्राइकम* फाल्केटम के खिलाफ प्रतिरोधी पाए गए।
- लाल सड़न रोग को कम करने में सोडियम क्लोराइड 10 ग्राम के बाद 15 मिनट के लिए बेलेटन @ 0.5% या बेविस्टिन @ 0.5% के साथ उपचार या ब्लीचिंग पाउडर 10 ग्राम @ मिट्टी में मिलने के बाद 15 मिनट के लिए बाविस्टिन 0.5% के साथ उपचार मृदाजनित रोग के नियंत्रण पर प्रभावी पाए गए।
- लाल सड़न के प्रबंधन में *एमएचएटी* (नम गर्म हवा उपचार) 54°सी पर 4 घंटे के लिए और बुवाई से पहले मिट्टी में ब्लीचिंग पाउडर का प्रयोग काफी प्रभावी था।
- गन्ने के मृदाजनित रोगजनकों के *इनोकुलम* को कम करने में *केमिसोलर थेरेपी* को प्रभावी पाया गया।
- *ट्राइकोडर्मा हर्जियानम* और *चेटोमियम* प्रजाति लाल सड़न रोग के जैविक प्रबंधन में प्रभावी पाए गए

गन्ने के उकठा रोग के अध्ययन में यह पाया गया कि *एक्रेमोनियम* और *फ्यूजेरियम* प्रजाति के कवक रोग के जनक हैं। उकठा प्रभावित पौधे की जड़ की सूक्ष्म जांच से कुछ सूत्रकृमि की उपस्थिति का पता चला। *फ्यूजेरियम मोनिलिफोर्मे* के अध्ययन से पता चला कि संक्रमित पादप अवशेष में यह बीजाणु >6 महीने

तक जीवित रहते हैं और मिट्टी में लगभग >2 साल तक जीवित रहते हैं। एक अन्य अध्ययन में उकठा संक्रमण के स्तर में वृद्धि के साथ बीजाणुओं के अंकुरण के प्रतिशत में कमी का पता चला। यह भी देखा गया कि उकठा प्रतिरोधी किस्मों का प्रतिरोध बार–बार संक्रमण होने से टूटने की आशंका रहती है।

कचरा जलाना, ठूंठों को हटाना, बाविस्टिन (0.1%)के साथ ठूंठों को भिगोना, संक्रमित गुच्छों पर कुछ वनस्पतियों का प्रयोग और सभी उपचारों के संयोजन से कंडुआ का प्रभावी प्रबंधन संभव है। गन्ने के घास प्ररोह रोग के वाहक का पता लगाने के लिए एक विस्तृत अध्ययन किया गया। यह पाया गया कि तीन *लीफ हॉपर* यानी सफेद, भूरा और काला (पहचान नहीं) और *एफिड* गन्ने के घास प्ररोह रोग को प्रसारित करने में सक्षम नहीं थे। किन्तु रोगग्रस्त पौधों से नए पोधों में घासी प्ररोह रोग 50–70% संचारित हुआ।

लीफ स्कैल्ड का छिटपुट प्रकोप मुख्य रूप से हरगाँव, गोला और पलिया की चीनी मिल क्षेत्रों में प्रमुख किस्म को 767 में देखी गई। कोलख 8001 में रोग का प्रकोप 5–10% था। गन्ने के पेड़ी के बौना रोग के जीवाणुजनित होने का प्रमाण भी मिला। इसके अलावा चुकंदर जननद्रव्य की *स्क्रीनिंग* से पता चला कि एलएस–6 और आईआईएसआर कॉम्प.1 *स्क्लेरोशियम* जड़गलन के खिलाफ प्रतिरोधी थे।

सूत्रकृमि विज्ञान

गोरखपुर के पास एक अध्ययन में यह पाया गया कि *टाइलेंचोरिन्चस* प्रजाति की दो प्रजातियाँ की बहुतायत रुद्रपुर–I (6560 / मिली मिट्टी) और रुद्रपुर – II (9660 / मिली मिट्टी) मिट्टी में पाई गई जो कि बहुत अधिक थी। सूत्रकृमि आबादी को एल्डीकार्ब्नीम की खली, गामा बीएचसीएल्डीकार्ब द्वारा नियंत्रित किया गया ।

दो हजार के दशक में अनुसंधान परिदृश्य (2001–2010)

कीट विज्ञान

इस दशक में बेधकों और अन्य नाशी कीटों के नियंत्रण पर विशेष रुझान रहा। विभिन्न फसल प्रणालियों का चोटी बेधक की तीसरी पीढ़ी पर कोई प्रभाव नहीं था हालांकि, तना बेधक पर इसका महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा।

गन्ना फसल में दीमक के खिलाफ नए रसायनों की जैव प्रभावशीलता के मूल्यांकन से पता चला है कि इमिडाक्लोरपिड (64. 87 टन / हे.) से उपचारित खेतों में सर्वाधिक गन्ना उपज दर्ज की गई। इसके बाद कॉन्फिडर (56.80 टन / हे.) अधिक प्रभावी रहा। रस चूसने वाले कीटो जैसे कि, *ब्लैक बग*, मिली बग का सफल नियंत्रण एसिटामिप्रिड (0.03%), पॉलीट्रिन (0.03:), कराटे (0.03%), एंडोसल्फान (0.05%), मार्शल (0.05%) और कैरिना (0.05%) से किया जा सका। गैर–पारंपरिक कीटनाशकों के मूल्यांकन से पता चला कि एनोना (0.02%) गन्ने के कीट ब्लैक बग के चौथे *इंस्टार* लार्वा को 70% तक नियंत्रण करता है लेकिन 100% नियंत्रण के लिए एंडोसल्फान (0.05%) प्रभावी पाया गया। एसिटामिप्रिड के प्रयोगशाला मूल्यांकन से पता चला कि उपचार के 3 दिनों के बाद प्रमुख चूसने वाले कीट *ब्लैक बग* के खिलाफ यह 98.3% तक प्रभावी पाया गया।

गन्ना कीट बेधक, *पायरिला* और *स्केल* कीट का प्रभावी जैविक नियंत्रण विदेशी और स्वदेशी परजीवियों *कोटेशिया फ्लेविप्स, टेलीनॉमस* के माध्यम से किया गया। *यूमाइक्रोसोमा* के उत्पादन और गुणन के लिए तकनीक विकसित की गई। गन्ने के महत्वपूर्ण बेधक कीटों के खिलाफ *कोटेशिया फ्लेविप्स* और *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* प्रभावी थे। गन्ने के चोटी बेधक के परजीवी के रूप में *आइसोटिमा जैवेंसिस* के उत्पादन के लिए तकनीक विकसित की गई। चोटी बेधक कीट के संमरूप दिखने वाले सफेद पतंगों के लिए एक कृत्रिम आहार तैयार किया गया। *टेलिनोमस बेनेफिशयन्स* को पालने में इस पतंगों के आँकड़ों का प्रयोग किया गया।

प्रयोगशाला में तापमान सहनशील प्रभेद उत्पन करने के लिए टी. *किलोनिस* को 28°से से. ±2°से. से अधिक तापमान पर 10 पीढ़ियों तक पाला गया। प्रयोगशाला में 26°से. पर *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* की प्रारम्भिक पीढ़ियों में प्रजनन क्षमता कम पायी गई जो धीरे–धीरे पीढ़ी–दर–पीढ़ी बढ़ते हुए बाद की पीढ़ियों में काफी अधिक पायी गई। तापमान 26 से 28° से. बढ़ जाने के कारण कीट की उम्र तथा उसकी प्रजनन क्षमता में कमी आँकी गई। *ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम* (34 ± 2° से. पर F_{10} पीढ़ियों तक पाला गया) को इन दस पीढ़ियों के लिए *ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम* के होस्ट *कोरसेरा सेफलोनिका* को 26±2° से. पर बनाए रखा गया। इस तापमान (32 ± 2°से.) पर जीवित रहने, उर्वरता और लिंग अनुपात, प्रारंभिक पीढ़ी की तुलना में कम हो गए थे।

पेडी गन्ना की तीन अवस्थायों में कीट समूहों के अध्ययन से विदित हुआ है कि कीटों का प्रकोप पताव बिछाव अवस्था में सबसे ज्यादा था। पतियों को जलाने से तना बेधक, चोटी बेधक तथा जड़ बेधक कीट के प्रकोप में कमी पायी गई। इनके साथ ही गन्ने की पेड़ी फसल मे कीटों के खिलाफ एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन (*आईपीएम*) मापांक (*मॉड्यूल*) विकसित किया गया। अधिकतम बचाव अवस्था में लागतः लाभ अनुपात 1:5.6 आँका गया। हरीनगर चीनी मिल्स लिमिटेड, बिहार, के अंतर्गत गन्ना क्षेत्र में प्लासी बेधक के विरुद्ध एक नियंत्रण अभियान किया गया। जिसमें निम्न कार्य (I) कटाई और केवल स्थानिक क्षेत्रों में फसल की पेराई, (II) प्राथमिक और द्वितीयक पीढ़ी से संक्रमित प्ररोह को हटाना (III) प्रकाश जाल में वयस्क पतंगे का संग्रह शामिल थे। इस अभियान से प्लासी बेधक के संक्रमण को प्रभावी ढंग से रोका जा सका।

गन्ना कृषि–पारिस्थितिकी तंत्र में देखे गए *माइकोआर्थीपोड्स* 4 मुख्य वर्गों के थे जैसे कि कीट, अकारिना, *पौरोपोडा* और *सिम्फिला*। कीट का मुख्य रूप से *ऑर्डर कोलेम्बोला* और *डिप्लुरा* द्वारा प्रतिनिधित्व किया गया, जबकि *अकारिना* में चारों मुख्य समूह *मेसोस्टिग्माटा, क्रिप्टोस्टिग्माटा, प्रोस्टिग्माटा, अस्टिग्माटा* द्वारा प्रतिनिधित्व किया गया। इस

अध्ययन के दौरान, *अकारिना* की लगभग 6, *पौरोपोडा* की 3 और *सिम्फिला* की 3 प्रजातियाँ पाई गईं। बदलती कृषि तकनीकों के संबंध में गन्ने के मृदा में पाये जाने वाले उपयोगी कीट और उनके पारिस्थिति के अध्ययन से पता चला किन्तु, *कोलेम्बोला, डिप्लुरा आर्थ्रोपोड* कीटोंका अधिकता पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा ।

रोग विज्ञान

इस दशक के शोध कार्यक्रम लाल सड़न रोग के महामारी विज्ञान और एकीकृत रोग प्रबंधन के तहत गन्ना जननद्रव्य की तुलना की गई। लाल सड़न रोग की विभिन्न प्राकृतिक परिस्थितियों में अलग–अलग प्रतिक्रिया थी। प्रयोगशाला में शोध से पता चला कि *कोलेटोट्राइकेटम फाल्केटम* के स्पोरुलेटिंग *आइसोलेट, नॉन स्पोरुलेटिंग आइसोलेट्स* की तुलना में अधिक विषाणुजनित थे। मीडिया पर बार–बार कल्चर होने पर रोगजनक का बीजाणुजनन कम हो गया एवं उनमे रोग कारक क्षमता भी घट गई। बारह कवकनाशी रसायनो का प्रयोगशाला में *एसिटिक एसिड* का लाल सड़न के कवक के खिलाफ परीक्षण किया गया। जिसमे बाविस्टिन, बेनफिल, जूम और एसिटिक एसिड ने *सी. फाल्केटम* और *स्पोरिसोरियम सिड्डामेनियम* कवक के *माइसीलियम* विकास पर प्रभावी नियंत्रण दिखाया। ट्राइकोडर्मा ने गन्ने के लाल सड़न और मुरझाने वाले रोगजनकों के खिलाफ अच्छी विरोधी गतिविधि दिखाई।

लगभग 26,000 ऊतक–विशिष्ट ईएसटी का संग्रह, जिनमें से 1069 लाल सड़न के लिए विशिष्ट रूप से विकसित किए गए, *जीनबैंक* में जमा किए गए हैं। इसी दशक में वैज्ञानिकों ने एक *मल्टीप्लेक्स पीसीआर*–आधारित *डायग्नोस्टिक टूल* जिसमें संरक्षित क्षेत्र से *डिजाइन* किए गए तीन प्राइमर जोड़े आर–डीएनए शामिल हैं, का विकास किया गया। जिससे लाल सड़न, कंडुआ और घासी प्ररोह रोग का प्रारंभिक संक्रमण पता लगाया जा सका।

गन्ना मोजेक विषाणु से गन्ना फसल उपज में काफी हानि दर्ज की गई है। स्वस्थ फसल में उपज 76.19 टन/हे. और रोगग्रस्त फसल में 64.99 टन/हे. दर्ज की गई। आंकड़ों से पता चला है कि सीओपीटी में मोजेक का माध्यमिक संक्रमण 14.16% और कोशा 90223 मे संक्रमण 10.13% पाया गया है। गन्ने में मुख्य रूप से एससीएमवी–ए और बी *स्ट्रेन* प्रमुख थे।

गन्ने के घासीय प्ररोह रोग में यह देखा गया कि पौधे की फसल में रोग के द्वितीयक संक्रमण की उपस्थिति बहुत धीमी थी। घासीय प्ररोह संक्रमण और पेड़ी रोग ने गन्ने की किस्म को 1148 में अंकुरण (71.24%) को काफी प्रभावित किया। इसके अतिरिक्त, गन्ना प्रधान क्षेत्रों में पादप परजीवी सूत्रकृमि का सर्वेक्षण और समस्या क्षेत्रों की पहचान की गई। चौदह सूत्रकृमि दर्ज और रिपोर्ट किए गए। इसमे घाघरा घाट और पूर्वी उत्तर प्रदेश क्षेत्र मे *हॉप्लोलैमस इंडिकस* सूत्रकृमि अधिक पाया गया ।

दो हजार दस के दशक में अनुसंधान परिदृश्य (2010–2022)

कीट विज्ञान

कीटों और रोगों के सर्वेक्षण एवं निगरानी हेतु उत्तर प्रदेश और बिहार की चीनी मिलों के अधीनस्थ क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया गया। दर्ज किए गए महत्वपूर्ण कीट अगेती चोटी बेधक (5–25%) और चोटी बेधक (5–10%) थे। अधिकांश क्षेत्रों में लाल सडन रोग पाया गया। हरिनगर चीनी मिल, बिहार के अधीनस्थ क्षेत्र में प्लासी बेधक, *स्केल कीट* और सफेद मक्खी देखी गई। पोरी बेधक का प्रकोप शरद ऋतु में बोई गई फसलों में 70% दर्ज किया गया, जबकि बसंत में बोई गई फसलों में इसका प्रकोप कम था। सिम्भावली चीनी मिल इकाई, चिलवरिया, बहराइच में *आर्मी वर्म* का प्रकोप बड़े क्षेत्र में देखा गया। कुछ इलाकों में, सफेद भृंग (कुरमुला) का संक्रमण 10 से 100% तक होता है। कवर्धा क्षेत्र में गन्ने के खेत *पाइरिला परपुसिला* से बुरी तरह प्रभावित थे साथ ही बड़ी मात्रा में पाइरिला का अंडा परजीवी *टेट्रास्टिकस* भी देखा गया।

चोटी बेधक का गन्ने की प्रजातियों के रूपात्मक लक्षणों में सहसंबद्ध के अध्ययन में पता चला कि, पत्ती की चौड़ाई का चोटी बेधक में काफी सकारात्मक सहसंबंध था, जबकि मध्य–शिरा की मोटाई और पौधे की ऊंचाई का चोटी बेधक के प्रकोप के साथ काफी नकारात्मक सहसंबंध था। जैव रासायनिक मापदंडों के बीच, चीनी की मात्रा सकारात्मक रूप से सहसंबद्ध थी, जबकि प्रोटीनएज अवरोधक गतिविधि, पॉली–फिनोल ऑक्सीडेज और कुल फिनोल चोटी बेधक के प्रकोप से नकारात्मक रूप से सहसंबद्ध थे।

गन्ने में तीन नई दीमक प्रजातियों, *ओडोंटोटर्मस हॉर्नी (वासमैन), ओ. वैष्णो बोस होल्मग्रेन* और *ओ. बेलाहुनिसेन्सिसहोल्मग्रेन* को दर्ज किया गया। दीमक के नियंत्रण के लिए प्रयोग के दौरान क्लोरपाइरीफॉस 20 ईसी और इमिडाक्लोप्रिड 17.78 एसएल के उपचार से उच्चतम गन्ना उपज प्राप्त की गयी। विभिन्न प्रोटोजोआरोधी रसायन जैसे मेट्रोनिडाजोल, एल्बेंडोजोल, ऑर्निडाजोल, टिनिडाजोल, नाइटाजॉक्सानाइड का कृत्रिम आहार में उपयोग करके प्रयोगशाला में दीमक के खिलाफ उनकी जैव–प्रभावकारिता के लिए मूल्यांकन किया गया। इनमें ओर्नीडाजोल और टिनिडाजोल के परिणाम प्रभावी रहे। दीमक के खिलाफ इस्तेमाल किए जाने वाले विभिन्न रासायनिक कीटनाशकों के पर्यावरणीय प्रभाव भागफल (ईआईक्यू) और ईआईक्यू–क्षेत्र उपयोग रेटिंग (ईआईक्यू–एफयूआर) मूल्यों से संकेत मिलता है कि क्लोरेंट्रानिलिप्रोल पर्यावरणीय प्रभाव के संदर्भ में सबसे सुरक्षित कीटनाशक था जिसके बाद इमिडाक्लोप्रिड, बिफेंथ्रिन और क्लोरपाइरीफॉस थे।

पोषक तत्व प्रबंधन और अन्य गैर–कृषि भूमि उपयोगों के संबंध में मृदा आर्थ्रोपोड और गन्ना पारिस्थितिकी तंत्र के *माइक्रोफ्लोरा* की सामुदायिक संरचना का मूल्यांकन किया गया। *माइक्रोआर्थ्रोपोडों मेंमाइट* और *कोलेम्बोला* की संख्या सर्वाधिक

थी। 42 प्रकार के *माइट* और 14 प्रकार के *कोलेम्बोला* पाये गए। कम *एसओसी* भूखंडों (≤0.50) की तुलना में इनकी औसत जनसंख्या (637×10^2 / मीटर^2), उच्च *एसओसी* (>0.70) वाले भूखंड में जनसंख्या अधिक (876×10^2 / मीटर^2) थी। *एफवाईएम* उपचारित भूखंडों में सूक्ष्म *ऑथ्रोपॉड्स* जनसंख्या की वृद्धि दर कम *एसओसी* भूखंडों में 300 प्रतिशत से अधिक थी, जबकि उच्च *एसओसी* भूखंडों में यह 110 प्रतिशत थी। प्रमुख घटक विश्लेषण से पता चला है कि भूमि उपयोग के आकलन के लिए सूक्ष्म *आथ्रोपॉड* आबादी को जैव संकेतक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। मृदा *आथ्रोपॉड्स* पर विभिन्न कीट प्रबंधन उपकरणों के प्रभाव पर अध्ययन से पता चला कि क्लोरेंट्रानिलिप्रोल और मिडाक्लोप्रिड का अध्ययन किए गए जीवों की विविधता और बहुतायत पर कम से कम प्रभाव पड़ा, जबकि क्लोरपाइरीफॉस जीवों की विविधता और मिट्टी के सूक्ष्म *आथ्रोपॉड* की प्रचुरता के लिए अत्यधिक हानिकारक था।

कुरमुला के प्रबंधन के लिए जाखवाला, देवबंद, सहारनपुर में एक प्रक्षेत्र परीक्षण किया गया। जिसमे जैवकारकों, *बैसिलस सेरेस स्ट्रेन डबल्यूजीपीएसबी–2* दूसरों की तुलना में बेहतर उपज और कीट कम क्षति पाई गई। इसके अलावा संशोधित कीट जाल (प्रकाश फेरोमोन) परीक्षण में केवल फेरोमोन या अकेले प्रकाश जाल की तुलना में अधिक प्रभावी पाया गया। यह नव विकसित जाल सफेद भृंग प्रभावित जिले के गांव सहारनपुर, लखीमपुर खीरी (उत्तर प्रदेश) और प्रवरानगर (महाराष्ट्र) में स्थापित किए गए थे। आईआईएसआर–*कॉम्बो इन्सैक्ट ट्रप* का विकास एवं व्यावसायिकरण किया गया। गन्ने में नीलगाय के प्रकोप से बचाने के लिए आईआईएसआर–नीलगाय विकर्षक का विकास एवं व्यावसायीकरण किया गया ।

इस दशक में जैव नियंत्रण कार्यक्रमों में परजीवी *आइसोटिमा जेवेन्सिस, रेकोनोटस रिकरोपोफागे* और *क्राइसोपेरलाकार्निया, ब्लैक बग, डिमोर्फोप्टेरस गिबस* और प्ररोह बेधक के लिए मानकीकृत प्रयोगशाला पालन तकनीक का विकास हुआ। *ग्रीन ट्राइकोकार्ड ट्राइकोग्रामा किलोनिस* के बड़े पैमाने पर गुणन के लिए अधिक कुशल साबित हुए। *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* और *टी. जैपोनिकम* का तापमान सहनशील *स्ट्रेन* विकसित हुआ। अंडा परजीवी *यूमिक्रोसोमा* प्रजाति (काले बग का परजीवी) के पालन कार्य के तहत इसे काले *बग* (*डी. गिब्बस*) के अंडों पर पूरे वर्ष प्रयोगशाला में सफलतापूर्वक पाला गया। गन्ने के बेधकों (प्रारंभिक प्ररोह, पोरी और चोटी बेधक) के प्रबंधन के लिए, अंडापरजीवी *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* का प्रयोगशाला में संवर्धन किया गया किसानों के खेतों में जारी किए गए। जिसके अच्छे परिणाम मिले और जिसे किसानों ने बाद में स्वयं अपनाया था।

विभिन्न *ट्रैप* फसल (सरसों, धनिया, गेंदा, टमाटर, बैंगन, ज्वार, मक्का) के साथ चोटी बेधक, पोरी बेधक और तना बेधक की न्यूनतम प्रकोप देखा गया। ट्रैप फसलों के साथ परजीवी यानी *ट्राइकोग्रामा किलोनिस, टेलेनोमस डिग्नस, कोटेशिया फ्लेविप्स, रेकोनोटस रिकरपोफगे, आइसोटिमा जेवेंसिस* और *स्टेनोब्राकॉन नीसविली* अधिक सक्रिय थे।

रोग विज्ञान

उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से होने वाले गन्ना रोगों का महत्वपूर्ण किस्मों पर सर्वेक्षण किया गया, जिसमें लाल सड़न = 2-80%; कंडुआ = 1–20%; घासीय प्ररोह = 2–35%; *पोक्का बोएंग* = 0–30%; *वाईएलड़ी*–10–40% पाया गया। इसके अतिरिक्त कोसे 98231 में कंडुआ देखी गई। जबकि हरिनगर चीनी मिल, बिहार में लाल सड़न से प्रभावित प्रमुख किस्में कोसे 95422 और जे 88 थीं और मध्य उत्तर प्रदेश में, कोलख 8102, कोशा 767, कोशा 8432 और कोशा 8436 प्रभावित किस्में थीं। भिन्न वर्षो में लाल सड़न और कंडुआ के खिलाफ लगभग 1,000 गन्ना जननद्रव्यों का मूल्यांकन किया गया। जिनमें 334 लाल सड़न प्रतिरोधी, 612 कंडुआ प्रतिरोधी, 270 उकठा प्रतिरोधी थे।

सीएफ 01 के नौ *पैथोटाइप स्ट्रेंस* के व्यवहार में किसी भी बदलाव का पता लगाने के लिए इनको एक साथ को 1148 पर टीका लगाया गया और ज्यादातर मामलों में, रोगजनक क्षमता बने रहने के प्रमाण मिले। सीएफ 01 विषाणु के प्रकारों के मूल्यांकन के लिए निर्दिष्ट गन्ना प्रजातियों को टीका लगाया गया और तीन सप्ताह के बाद पुनः प्राप्त किए गए विषाणुओ को संबंधित गन्ना प्रजातियों पर पुनः टीका लगाया गया। इस प्रयोग से *सीएफ* 01Ng *स्पोरुलेटिंग* प्रकार की पुष्टि हुई थी और यह भी सिद्ध हुआ कि गन्ना प्रजाति लाल सड़न की रोग क्षमता को प्रभावित करता है। मेजबान पौधे ने विषाणु का चयन करने के लिए एक चयनात्मक माध्यम के रूप में कार्य किया जो मेजबान पौधे के प्रतिरोध क्षमता को भंग करने में सक्षम था। यह भी पाया गया कि विषाणुओं के प्रकारों में डीएनए स्तर पर भी भिन्नताएं थी।

2011–13 में नए *आइसोलेट्स* एकत्र किए गए और उनके रोग कारक क्षमता का मूल्यांकन निर्दिष्ट गन्ना प्रजातियों अर्थात को 419, को 975, को 997, को 1148, को 7717, को 62399, कोसी 671, कोशा 64, कोशा 767, कोशा 8436, बीओ 91, खाकाई (*एस. साइनेंस*) और एसईएस– 594 (*एस. स्पानटेनियम*) पर किया गया। सभी *आइसोलेट्स* ने पहले से ही पहचाने गए *सी. फाल्कटम पैथोटाइप्स सीएफ* 01, *सीएफ* 03, *सीएफ* 07 और *सीएफ* 10 के साथ निकटता दिखाई। इसलिए, यह कहा जा सकता है कि इस क्षेत्र में किसी भी नए लाल सड़न रोग कारक का कोई उद्भव नहीं हुआ। किंतू 2019 में को 0238 *आइसोलेट्स* का विशिष्ट *विरुलेंस* के प्रमाण मिले जो वर्ष 2021 में *सीएफ* 13 के रूप में प्रमाणित हुआ। यह प्रकार को 0238 की लाल सड़न रोग के लिए प्रतिरोधकता को भंग करने में सक्षम हुआ।

दोहरे संवर्धन अध्ययनों से पता चला है कि *ट्राइकोडर्मा* और *एस्परजिलस* प्रजातियों में लाल सड़न के खिलाफ रोगजनकविरोधी गुण होते हैं। उपोष्ण कटिबंधीय भारत के गन्ना कृषि–पारिस्थितिकी तंत्र से *ट्राइकोडर्मा आइसोलेट्स* को अलग करने, उनकी गणना करने और उन्हें चिह्नित करने के लिए अध्ययन किए गए। गन्ना *राइजोस्फीयर* से 72 *ट्राइकोडर्मा*

आइसोलेट्स चिह्नित किए गए थे, जिन्हें शुद्ध किया गया और विभिन्न तापमानों (25°, 30°, 35° और 40° सें.) पर विकास दर सहित कॉलोनी के लक्षणों के लिए आकलन किया गया। *आइसोलेट्स* में कॉलोनी में काफी विविधता पाई गई। अधिकांश *आइसोलेट्स* के लिए उपयुक्त तापमान 25° से 30° सें. के बीच रहा। *इन विट्रो* और *इन विवो* विधियों में *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* के खिलाफ उनकी विरोधी गतिविधि के लिए दस चयनित *आइसोलेट्स* की जांच की गई। *कल्चर फिल्ट्रेट्स* को प्रयोगशाला में *सी. फाल्केटम* वृद्धि को कम करने में आशाजनक परिणाम मिले। *आइसोलेट एसटीआर*–52 में 67% तक अवरोध दर्ज किया गया। मूल्यांकन किए गए 61 कुलीन चयनों में से 33 चयन लाल सड़न के लिए प्रतिरोधी थे और 28 चयन लाल सड़न के लिए अतिसंवेदनशील थे। कंडुआ के खिलाफ मूल्यांकन के लिए रोपण के समय गन्ना बीजों का *डिप इनोक्यूलेशन* किया गया। इस प्रयोग में 61 *जीनोप्रारूपों* में से 34 प्रतिरोधी थे और 27 अतिसंवेदनशील थे। तीन जीनप्रारूपों में उकठा का प्रकोप देखा गया। इक्कीस *ट्राइकोडर्मा हर्जियानम आइसोलेट्स* में से तीन *आइसोलेट्स एसटीआर*–64, *एसटीआर*–83 और *एसटीआर*–126 ने *चिटिनेज* और *सेल्युलेज* के उच्च उत्पादन का प्रदर्शन किया। *जिनका टैल्क* फॉर्मूलेशन तैयार किया गया और लाल सड़न के खिलाफ इस्तेमाल किया गया। जिसके परिणामस्वरूप मिट्टी के विभिन्न अनुप्रयोग का गोबर की खाद संयोजनों के तहत लाल सड़न रोग में काफी कमी (29.5–56.3%) हुई। *ट्राइकोडर्मा* की एसटीआर–64, एसटीआर–83 और एसटीआर–126 *एफवाईएम* के साथ संयोजन में गन्ने के अंकुरण (7.0 –17.6%), गन्ना लंबाई, उपज (20%) और पेराई योग्य गन्नों की संख्या में वृद्धि हुई है।

वाईएलडी के लिए अतिसंवेदनशील किस्मों के साथ–साथ 14 जीनप्रारूपों का मूल्यांकन किया गया। सभी जीनप्रारूपों में रोग की आक्रामकता 10 से 40% के बीच तक थी। थ्रिप्स, *फुलमेकिओला सेराटा* का संक्रमण *वाईएलडी* प्रभावित पौधों पर 14–65 थ्रिप्स/10 पौधा था। *वाईएलडी* से प्रभावित नमूने 19 जीनप्रारूपों के दूसरे *सेट* से भी एकत्र किए गए थे। लगभग 750 बीपी एम्पलीकॉन्स का पीसीआर प्रवर्धन चार जीनप्रारूपों अर्थात को 1148, कोशा 510, कोशा 91230 और कोशा 90269 से प्राप्त किया गया। *वाईएलडी* संक्रमित गन्ना जीनप्रारूप कोसे 510 (एसीसी. एमएन 913611) से पृथक *फाइटोप्लाज्मा*, गन्ने की सफेद पत्ती *फाइटोप्लाज्मा* (*एससीडबल्यूएलपी*) के साथ निकटता से जुड़ा हुआ है, जिसे भारत में गन्ने में सफेद पत्ती रोग का कारण माना जाता है। इसके अलावा, कोशा 510 से उत्पन्न होने वाला *फाइटोप्लाज्मा आइसोलेट* (*एससीडबल्यूएलपी*)–चीन से निकटता से संबंधित है जो फाइटोप्लाज्मा के 16 एसआरएक्सआई–बी उपसमूह से संबंधित है और 75% पहचान साझा करता है। इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकाला गया कि गन्ने को संक्रमित करने वाले *फाइटोप्लाज्मा* अधिक विविध हैं, और बड़ी संख्या में *फाइटोप्लाज्मा आइसोलेट्स* की अनुक्रम जानकारी की पीढ़ी की आवश्यकता है।

लाल सड़न रोगजनक की *जीनोम* अनुक्रमण के लिए प्रयास आरंभ हुआ एवं *सीएफ* 01 को को 1148 से एकत्रित करके *सीएटीबी* तकनीक का प्रयोग कर शुद्ध *डीएनए* एकत्रित किया गया। बाद में *पैथोटाइप* (*सीएफ* 08) *जीनोम* को *कोडिंग* की गई। इसका 97.24% *जीनोम* अनुक्रमण में शामिल किया गया और कुल 18,635 प्रोटीन–कंटिग जीनों की भविष्यवाणी की गई तथा *असेंबली* के बाद कुल 238 कोडिंग देखी गई।

निष्कर्ष

गत 70 वर्षों के दौरान गन्ना कीटों और रोग संबन्धित अध्ययनों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। ये महत्वपूर्ण उपलब्धियां शोधकर्ताओं द्वारा संबंधित अनुसंधान और विकास प्रयासों के कारण संभव हो सकी हैं। गन्ना कीट विज्ञान में उल्लेखनीय अनुसंधान योगदान में अगेती प्ररोह बेधक, तना बेधक, पोरी बेधक, पाइरिला, दीमक का नियंत्रण शामिल है। *एपिरिकेनिया मेलानोलुका* द्वारा *पाइरिला* का, *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* द्वारा पोरी बेधक का, *ग्रैनुलोसिस वायरस* और *ट्राइकोग्रामा टोइडिया एल्दानी* द्वारा चोटी बेधक का जैविक नियंत्रण की महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं। पाइरिला के खिलाफ *एंटोमोपैथोजेन्स मेटारिजियम एनिसोप्लिया* का उपयोग, बेधकों और *ब्लैक बग्स* के खिलाफ *ब्यूवेरिया बेसियाना* और चोटी बेधक के नियंत्रण के लिए *स्टर्मियोप्सिस इन्फेरेंस* भी कुछ उल्लेखनीय शोध योगदान हैं।

गन्ने में कीट पीड़क प्रबंधन अध्ययनों ने महत्वपूर्ण गन्ना कीटों के लिए प्रबंधन रणनीतियों का विकास हुआ। तना बेधक संक्रमण के आकलन के लिए एक पद्धति विकसित की गई जो सतही संक्रमण स्तर सूचकांक (% प्रकोप) और संयुक्त संक्रमण के बीच संबंध पर आधारित था। उपोष्ण कटिबंधीय भारत में चोटी बेधक के कारण आर्थिक क्षति के स्तर की पहचान की गई। पाइरिला आबादी के निर्धारण के लिए भी एक एकल कारक समीकरण विकसित की गयी।

बेधकों, पाइरिला व ऊनी माहू आदि के लिए परजीवियों और परभक्षी कीटों की पहचान, उनको सतत खेतों में जारी करना, *ट्राइकोकार्ड्स* का उपयोग और सुरक्षा के माध्यम से जैव नियंत्रण सहित एकीकृत प्रबंधन (*आईपीएम*) अनुसूची विकसित की गई। बेधकों के खिलाफ लार्वा परजीवी कोटेशिया, अंडा परजीवी *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* @ 50,000/हेक्टेयर जुलाई से अक्टूबर तक 10 दिनों के अंतराल पर छोड़ने से बेधकों की घटनाओं में 40–90: की कमी दर्ज की गई। *दीफा एफिडिवोरा* @ 1,000 लार्वा/हेक्टेयर या *माइक्रोमस इगोरोटस* @ 2,000 लार्वा/हेक्टेयर 15 दिनों के अंतराल (अगस्त से अक्टूबर) पर छोड़ने से ऊनी माहू का प्रभावी नियंत्रण हुआ। 2002 में इस कीट के प्रकोप के दौरान महाराष्ट्र, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड के आसपास के क्षेत्रों में कीट को नियंत्रित करने में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई थी। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश राज्यों में पाइरिला के प्रकोप का प्रबंधन करने के लिए *एपिरिकेनिया मेलानोलुका* @ 4000–5000 कोकून / हेक्टेयर की सुरक्षा और पुनर्वितरण के माध्यम से पाइरिला का जैव

नियंत्रण सफलतापूर्वक किया जा सका। उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र में चीनी मिल अधीनस्थ क्षेत्रों में लगभग 200 गांवों में प्रकाश (बैटरी/सौर ऊर्जा संचालित) और फेरोमोन को मिलाकर एक पर्यावरण के अनुकूल जाल (*आईआईएसआर–कॉम्बो ट्रैप*) का सफलतापूर्वक प्रदर्शन किया गया एवं इसका उपयोग करते हुए सफेद कुरमुल्ला और बेधकों का प्रबंधन किया गया। इस प्रौद्योगिकी का व्यावसायीकरण और ट्रैप के बड़े पैमाने पर निर्माण का लाइसेंस *मेसर्स फाइन ट्रैप्स लिमिटेड*, महाराष्ट्र एवं मेसर्स माइक्रोप्लेक्स, महाराष्ट्र को दिया गया। गन्ने में नीलगाय के प्रकोप से बचाने के लिए आईआईएसआर–नीलगाय विकर्षक (आईआईएसआर–ब्लू बुल रेपेलेंट) का विकास किया गया एवं व्यावसायिकरण के लिए *मेसर्स एसकेआर एग्रोटेक*, महाराष्ट्र को तकनीक हस्तांतरित की गयी।

कृन्तकों के प्रबंधन पर किए गए अध्ययनों से पता चला है कि कृन्तकों के संक्रमण का निर्धारण संबंधित क्षेत्रों में कृन्तकों के बिलों की मात्रा से किया जा सकता है। इस फसल में कृन्तकों के रासायनिक नियंत्रण के लिए *जिंक फास्फाइड बैटिंग* और उसके बाद *ब्रोमैडियोलोन बैटिंग* को मानकीकृत किया गया।

इस फसल में महत्वपूर्ण रोगों के प्रबंधन के लिए कई रणनीतियाँ विकसित और परिष्कृत की गईं। मिट्टी में लाल सड़न रोगजनक़ की उत्तरजीविता को स्पष्ट किया गया। लाल सड़न के लिए गन्ने की किस्मों की *ग्रेडिंग* के लिए मानदंड तैयार किया गया है। प्रारंभिक अवस्था में लाल सड़न की आशंका वाले पौधों को खत्म करने की तकनीक को मानकीकृत किया गया। 13 अंतरों के आधार पर लाल सड़न रोगजनक़ों के *पैथोटाइप* की पहचान की गई। सीएफ 11 और 13 को *आईआईएसआर* द्वारा उपोष्ण कटिबंधीय भारत में एक नए रोग के रूप में *रिपोर्ट* किया गया। गन्ने की किस्मों को लाल सड़न प्रतिरोध के खिलाफ जांच के लिए लाल सड़न रोग जनन हेतु टीकाकरण के लिए एक टीका विकसित किया गया। व्यापक अध्ययनों से पता चला है कि लाल सड़न से संक्रमित 2% गन्ना भी लाल सड़न रोग की महामारी का कारण बन सकता हैं।

संस्थान ने अन्य गन्ना रोगों जैसे कंडुआ पर भी उनके प्रबंधन और नियंत्रण आदि के लिए महत्वपूर्ण अनुसंधान योगदान दिए। कंडुआ की महामारी विज्ञान पर अध्ययन एवं कलियों और प्ररोह के विभज्योतक के अंदर 4 घंटे के भीतर कंडुआ कवक के निष्क्रिय संक्रमण का शीघ्र पता लगाने के लिए एक *स्टेनिंग* तकनीक विकसित की गई थी। लाल सड़न और कंडुआ रोगजनक का पता लगाने के लिए *पीसीआर* आधारित *डायग्नोस्टिक किट* विकसित किए गए, जो गन्ने के स्वस्थ बीज का पता लगाने में उपयोगी है। लाल सड़न रोग की वंशानुक्रम, सक्रियता की अवधि और व्यवहार्यता, रोगजनक के प्रवेश के लिए यंत्र का विकास किया गया। उकठा के प्रेरक जीवों को *एक्रेमोनियम* प्रजाति का होना निर्धारित किया गया। अध्ययन से घासीय प्ररोह रोग का कारक *माइक्रोप्लाज्मा* (*एमएलओ*) का पता चला जो कि गन्ने के ऊतकों में *अल्ट्रा–स्ट्रक्चरल* परिवर्तन और *क्लोरोप्लास्ट, क्लोरोफिल*, संवहनी बंडलों के परिवर्तन अभिविन्यास, *जाइलम*, बीज ट्यूब, साथी कोशिकाओं अतिवृद्धि, *हाइपरप्लासिया* और पत्तियों में *स्क्लेरेन्काइमेटस* कोशिकाओं के *लिग्निफिकेशन* से जुड़ा है। पहली बार घासीय प्ररोह रोग के *फाइटोप्लाज्मा* को प्रसारित करने के लिए एक कीट–वाहक के रूप में *लीफ हॉपर* (*डेल्टोसेफालस वल्गेरिस*) की स्थापना की गई।

गर्म हवा उपचार और वातित भाप चिकित्सा बीजजनित रोगों को नियंत्रित करने में सफलता पर आधारित नम गर्म हवा उपचार इकाई को त्रिस्तरीय बीज उत्पादन कार्यक्रम में बीज संक्रमणीय रोगजनकों को खत्म करने के लिए विकसित किया गया। यह रोग प्रबंधन के क्षेत्र में इस संस्थान की एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। इसमे नाभिकीय अथवा प्रजनक बीज गन्ने को ढाई घंटे के लिए 54° सेल्सियस और 95–99% आर्द्रता पर नम गर्म हवा उपचार (*एम एच ए टी*) के अधीन किया जाता है।

जनसंख्या गतिकी से गन्ने में सूत्रकृमि का प्रबंधन करने में काफी योगदान रहा। सूत्रकृमि पर किए गए अध्ययनों से यह पता चला कि गन्ना आधारित फसल चक्रण (मक्का–गेंदा और धान–सरसों) संयोजन से सूत्रकृमि की आबादी में कमी आई। मृदा प्रणाली में सूत्रकृमि के गुणन से उकठा की घटना में वृद्धि पाई गई। सूत्रकृमि का कवक के साथ जुड़ाव गन्ने की फसल को प्रभावित करता है और इसे खेत के एकल रोपण से पूर्व उपचार द्वारा कुछ हद तक कम किया जा सकता है।

भविष्य के लिए अनुसंधान परिदृश्य

जलवायु परिवर्तन के कारण कीटों की गतिशीलता में परिवर्तन एक चिंता का विषय है। विलंबित मानसूनी वर्षा और प्रचलित उच्च तापमान के कारण रोग और कीटों की घटनाओं/प्रकटन में परिवर्तन हुआ है। अधिकांश गन्ना उत्पादक क्षेत्रों में *वाईएलडी, ग्रासी शूट* रोग की बढ़ती घटनाएं चिंता का विषय हैं। इन जैविक दबावों के प्रबंधन के लिए जैविक नियंत्रण रणनीतियों सहित एक एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

भू–सूचना प्रणाली (*जीआईएस*) का उपयोग आँकड़ों के उचित प्रलेखन, कीटों के निदान और रोगजनक़ समस्याओं आदि में सहायता कर सकता है और हमें स्थायी उच्च गन्ना उत्पादकता के लिए स्थान विशिष्ट समाधान और उनके समय पर प्रयोग करने में मदद करेगा। कृषि की निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में कुशल और समय पर हस्तक्षेप के लिए सूचना प्रौद्योगिकी और कृत्रिम बुद्धिमत्ता पर आधारित सूचना का हस्तांतरण महत्वपूर्ण है। इस मंच को किसान, शोधकर्ता, नीति नियोजक और मिल मालिक साझा कर गन्ना कृषि को नई ऊँचाइयों पर ले जा सकते हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित गन्ना कृषि यंत्र : 70 वर्षों का सतत प्रयास

अखिलेश कुमार सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना भारत की एक प्रमुख नगदी फसल है, जिसे 75 से 90 सें.मी. की दूरी पर पंक्तियों में बोया जाता है। यह एक दीर्घकालिक फसल है जो 8 से 18 महीने तक खेत में रहती है। वर्तमान में कृषि कार्यों में मशीनों का उपयोग दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। विभिन्न कृषि कार्यों को यंत्रों द्वारा सम्पन्न करने से न केवल श्रम, समय एवं धन की बचत होती है। अपितु कार्यों के समय पर सम्पन्न होने से उत्पादकता में भी वृद्धि होती है। गन्ने की खेती हेतु विभिन्न सस्य क्रियाओं जैसे बुवाई के लिए खेती की तैयारी, गन्ने की बुवाई, निराई–गुड़ाई एवं कटाई के लिए आधुनिक कृषि यंत्रों की आवश्यकता होती है। बुवाई के लिए खेत की तैयारी हेतु मिट्टी पलटने वाला हल, *कल्टीवेटर, डिस्क हैरो* एवं पटेला तथा *लेवलर* का उपयोग वांछनीय है। खेत की तैयारी हेतु *रोटावेटर* का प्रचलन तीव्र गति से बढ़ रहा है।

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ का कृषि अभियंत्रण विभाग पिछले 70 वर्षों से संस्थान के स्थापना वर्ष 1952 से गन्ने की खेती के उपयोग हेतु विभिन्न कृषि यंत्रों के अनुसंधान एवं विकास में संलग्न है। विभाग द्वारा गन्ने की खेती हेतु सस्य क्रियाओं जैसे गन्ने की बुवाई, निराई–गुड़ाई, मिट्टी चढ़ाने का कार्य, कीटनाशकों का छिडकाव, कटाई एवं पेड़ी प्रबंधन हेतु कई कृषि यंत्रों का विकास किया गया है। प्रस्तुत लेख में संस्थान द्वारा विकसित कुछ प्रमुख कृषि यंत्रों का संक्षिप्त विवरण तथा उनकी उपयोगिता के बारे में जानकारी दी गयी है। वर्तमान में ट्रैक्टर चालित कृषि यंत्रों का प्रचलन बढ़ रहा है। इसलिए प्रस्तुत लेख में मुख्य ध्यान ट्रैक्टर चालित कृषि यंत्रों पर दिया गया है। संस्थान द्वारा विकसित कृषि यंत्रों के प्रयोग से समय एवं श्रम की बचत होती है तथा लागत में भी कमी आती है।

गन्ना बुवाई यंत्र

गन्ने की बुवाई हेतु विशेष कृषि यंत्रों की आवश्यकता होती है जिसके लिए संस्थान ने मुख्यतः दो प्रकार के यंत्र विकसित किए हैं। प्रथम गन्ना टुकड़ा कटाई एवं बुवाई के लिए अलग–अलग कृषि यंत्र एवं द्वितीय बुवाई के लिए समायोजित कृषि यंत्र जिसे *कटर प्लांटर* कहा जाता है।

बीज हेतु गन्ने के टुकड़े की कटाई एवं गन्ना बुवाई *सेमी–आटोमेटिक* यंत्र

बीज हेतु गन्ने के टुकड़े की कटाई यंत्र को ट्रैक्टर के *पुली* अथवा बिजली एवं इंजन से चलाया जा सकता है। इस यंत्र की मदद से गन्ने को 35 सें.मी. लंबे टुकड़ों में काटा जाता है। इस यंत्र को चलाने में एक साथ 4 आदमियों की आवश्यकता होती है तथा 3 घंटे में एक हेक्टर की बुवाई के लिए गन्ने के टुकड़े काटे जा सकते हैं।

गन्ना बुवाई *सेमी आटोमेटिक* यंत्र की मदद से कटे हुये गन्ने की बुवाई की जाती है। इस यंत्र की मदद से खेत में कूँड़ बनाकर कटे हुये बीज के टुकड़ों को डाला जाता है तथा साथ में खाद, दवा डालने एवं गन्ने के टुकड़ों को मिट्टी से ढकने के कार्य को सम्पादित किया जाता है। इस यंत्र को ट्रैक्टर से चलाया जाता है। इस यंत्र के साथ गन्ना बुवाई में 4 आदमियों की आवश्यकता होती है जिनकी मदद से एक दिन में लगभग 1.2 हेक्टर गन्ने की बुवाई की जा सकती है। इस यंत्र में बीज टुकड़े डालने का कार्य करने वाले व्यक्ति की दक्षता पर यंत्र की कुशलता निर्भर करती है।

गन्ना बुवाई का समायोजित यंत्र (*शुगरकेन कटर प्लांटर*):

इस यंत्र को 35 अथवा अधिक अश्व शक्ति के ट्रैक्टर से चलाया जाता है तथा इस यंत्र की सहायता से गन्ने के बीज के टुकड़ों की भी कटाई की जाती है एवं गन्ने की बुवाई से अन्य कार्य, जैसे कूँड़ बनाना, गन्ने के टुकड़ों को कूँड़ में डालना, खाद एवं दवा डालना तथा कूँड पर मिट्टी ढक कर दबाना, एक साथ संपादित किए जाते हैं। संस्थान में कई प्रकार के *कटर प्लांटर* का विकास किया गया है। जैसे–

- ट्रैक्टर चालित दो पंक्तियों का गहरी नाली गन्ना बुवाई यंत्र
- ट्रैक्टर चालित तीन पंक्तियों का गन्ना बुवाई यंत्र
- ट्रैक्टर चालित ट्रेंच विधि का गन्ना बुवाई यंत्र
- ट्रैक्टर चालित गड्ढा खुदाई यंत्र (*रिंग पिट डिगर*)

दो पंक्तियों का गन्ना बुवाई यंत्र में गहरी कूँड़ खोदने के लिए विशेष रूप से अभिकल्पित किये हुए दो *फरोवर* लगे होते हैं। इस यंत्र की सहायता से गन्ना बुवाई के सारे कार्य जैसे कूँड़ खोदना, गन्ने के टुकड़े काटना, कटे हुये टुकड़े को कूँड़ में डालना, खाद एवं दवा को कूँड़ में डालना तथा टुकड़ों को मिट्टी से ढकना, एक साथ संपादित किए जाते हैं। गन्ने के टुकड़े काटने के लिए ट्रैक्टर के *पी.टी.ओ.* से शक्ति हस्तांतरण किया जाता है। इस यंत्र द्वारा चार व्यक्ति की

तीन पंक्तियों का गन्ना बुवाई यंत्र द्वारा एक साथ तीन पंक्तियों में गन्ना बुवाई के सारे कार्य संपादित किए जाते हैं। इस यंत्र में गन्ने के टुकड़े कटाई की इकाई को शक्ति हस्तांतरण जमीन पर चलने वाले पहिये से किया जाता है। इस यंत्र को 45 अथवा अधिक अश्व–शक्ति के ट्रैक्टर से चलाया जा सकता है। इस यंत्र की सहायता से लगभग 4 घंटे में एक हेक्टर गन्ने की बुवाई की जा सकती है। इस यंत्र का प्रयोग करने से गन्ना बुवाई कार्य की लागत में लगभग 60 प्रतिशत तक की बचत की जा सकती है। *ट्रेंच* विधि के गन्ना बुवाई यंत्र की सहायता से एक जोड़ी पंक्तियों में 30 सें.मी. की दूरी पर गन्ना बुवाई के सारे कार्य संपादित किए जाते हैं। इस यंत्र को 35 अथवा अधिक अश्व–शक्ति के ट्रैक्टर से चलाया जाता है। इस यंत्र की गन्ना टुकड़ा कटाई इकाई का संचालन ट्रैक्टर *पी.टी.ओ.* से किया जाता है। इस यंत्र की भी कार्यक्षमता दो पंक्तियों के गन्ना बुवाई यंत्र जैसी ही होती है।

गड्ढा खुदाई यंत्र

इस यंत्र का उपयोग 30 सें.मी. व्यास के लगभग 25 से 30 सें.मी. गहरे गड्ढे खोदने के लिए किया जाता है। खुदे हुये गड्ढे में गन्ने की बुवाई की जाती है। इस यंत्र की मदद से एक बार में दो गड्ढे खोदे जाते हैं। इस यंत्र की सहायता से एक घंटे में लगभग 150 गड्ढे खोदे जा सकते हैं। इसे 45 अथवा अधिक अश्व–शक्ति के ट्रैक्टर से चलाया जा सकता है।

गन्ना सहफसली बुवाई यंत्र

वर्तमान मे गन्ने की खेती को और लाभकारी बनाने हेतु गन्ने के साथ अन्य फसलों की सहखेती का प्रचलन बढ़ रहा है। गन्ने के साथ सहफ़सली खेती करने में व्यावहारिक कठिनाई इसकी बुवाई है जो अत्यधिक श्रम–साध्य होने के साथ कठिन होती है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए गन्ने के साथ सहफ़सली बुवाई यंत्रों का विकास किया गया है। गन्ने के साथ सहफ़सली बुवाई हेतु भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा निम्नलिखित कृषि यंत्रों का विकास किया गया है :

1. मेड़ शैय्या बुवाई यंत्र
2. गहरी नाली गन्ना सह मेड़–शैय्या फसल बुवाई यंत्र
3. गहरी नाली गन्ना सह आलू बुवाई यंत्र
4. ट्रेंच विधि गन्ना सह आलू बुवाई यंत्र

मेड़ शैय्या बुवाई यंत्र भी ट्रैक्टर चालित यंत्र है जिसकी सहायता से नाली सिंचाई मेड़ शैय्या बुवाई विधि के अन्तर्गत मेड़ शैय्या पर गेहूँ अथवा अन्य दलहनी सहफसलों की बुवाई की जाती है। यंत्र दो मेड़ शैय्याओं के बीच नालियाँ बनाता जाता है जिसे सिंचाई के लिए प्रयोग किया जाता है। यंत्र एक साथ तीन नालियाँ एवं दो मेड़ शैय्याएं बनाता है। नालियों के बीच 80 सें.मी. की दूरी रखी जाती है तथा दो नालियों के बीच मेड़ शैय्या पर सहफसल की दो–तीन पंक्तियों की बुवाई होती है। गन्ने की बुवाई फरवरी–मार्च में, सिंचाई उपरांत नालियों में गन्ने के बीज के टुकड़े डालकर पैरों से दबाते हुये, बाद में की जाती है। इस यंत्र की कार्य–क्षमता 0.35 से 0.40 हेक्टेयर/घंटा है अर्थात लगभग 2.5 हेक्टर खेत की बुवाई एक दिन (8 घंटा) में की जा सकती है। हाथों से नाली एवं मेड़–शैय्या बनाकर इस विधि में गन्ना एवं सहफ़सली की बुवाई एक बहुत ही कठिन, श्रम–साध्य एवं खर्चीली प्रक्रिया है इसलिए इस विधि को केवल कृषि यंत्रों का प्रयोग करके ही किया जा सकता है।

गहरी नाली गन्ना सह मेड़ शैय्या फसल बुवाई यंत्र द्वारा नाली सिंचाई मेड़ शैय्या बुवाई विधि के अन्तर्गत मेड़ शैय्या पर गेहूँ अथवा अन्य सहफसल की बुवाई के साथ–साथ दो मेड़–शैय्याओं के मध्य नाली में गन्ने की बुवाई भी साथ–साथ सम्पन्न की जाती है। यंत्र एक साथ दो नालियाँ एवं दो मेड़ शैय्याएँ (1+)+)) बनाता है। नालियों के मध्य 75 सें.मी. की दूरी होती है। नालियों में गन्ने की बुवाई होती है तथा नालियों के मध्य मेड़–शैय्याओं पर सहफसल की दो पंक्तियों की बुवाई की जाती है। इस यंत्र की कार्य–क्षमता 0.2 हेक्टर/घंटा है अर्थात लगभग 5 घंटे में एक हेक्टर की बुवाई इस यंत्र से की जा सकती है। इस यंत्र का प्रयोग करने से बुवाई लागत में 60 प्रतिशत से अधिक की कमी आती है।

गहरी नाली गन्ना–सह–आलू बुवाई यंत्र

गन्ने के साथ सहफसल के रूप में आलू एक लाभदायक फसल है। संस्थान ने एक ट्रैक्टर चालित गन्ना–सह–आलू बुवाई

यंत्र का विकास किया है जिसकी सहायता से गन्ने की दो पंक्तियों को 75 सें.मी. की दूरी पर नालियों में बोते हैं तथा दो गन्ने की पंक्तियों के मध्य एक पंक्ति आलू की बोते हैं।

ट्रेंच विधि गन्ना–सह–आलू बुवाई यंत्र द्वारा *ट्रेंच* विधि में गन्ने की बुवाई तथा साथ में दो *ट्रेंच* के बीच में मेड़ पर आलू की बुवाई एक ही साथ संपादित हो जाती है। गन्ने की बुवाई 30 सें.मी. की दूरी पर *ट्रेंच* में की जाती है तथा दो *ट्रेंच* के बीच में दो आलू की दो पंक्तियों की बुवाई होती है।

खरपतवार निकालने का यंत्र:

खरपतवार निकालने के लिए ट्रैक्टर चालित व *टाइन* को मुख्य *फ्रेम* के उपर आवश्यकतानुसार व्यवस्थित किया जाता है। यदि सीधे *शावेल* की जगह *स्वीप शावेल* लगा दिया जाय तो गुड़ाई कार्य की गुणवत्ता बढ़ जाती है। गन्ने की निराई–गुड़ाई एव खड़ी फसल में खाद डालने के लिए एक नए यंत्र (*शुगरकेन मैनेजर*) का विकास किया गया है।

इंजन चालित खरपतवार यंत्र का भी विकास किया गया है। यह यंत्र गन्ने की दो पंक्तियों के बीच में चलता है। जिससे यदि गन्ने बड़े भी हों तो इस यंत्र से निराई–गुड़ाई की जा सकती है। इस यंत्र की मदद से दिन में लगभग 2 से 2.5 हेक्टर गन्ने की गुड़ाई की जा सकती है।

मिट्टी चढ़ाने का यंत्र

गन्ने में मिट्टी चढ़ाने के दो लाभ हैं। प्रथम यह गन्ने को गिरने से बचाता है तथा द्वितीय यह अलाभकारी कल्लों को निकलने से रोकता है। गन्ने में मिट्टी चढ़ाने के लिए संस्थान द्वारा एक ट्रैक्टर चालित यंत्र बनाया गया है। जिसकी मदद से दो पंक्तियों में एक साथ मिट्टी चढ़ाने का कार्य संपादित किया जाता है। इस यंत्र में *रिजर* के पंखों को चौड़ा कर देते हैं तथा *फ्रेम* की ऊंचाई बढ़ा देते हैं जिससे जमीन से यंत्र का *क्लियरेंस* बढ़ जाता है। इस यंत्र की मदद से दिन भर में 2 से 2.5 हेक्टर खेत की मिट्टी चढ़ाई जा सकती है।

गन्ना कटाई यंत्र

संस्थान द्वारा ट्रैक्टर चालित गन्ना कटाई यंत्र का विकास किया गया है जिसकी सहायता से दो पंक्तियों का गन्ना एक साथ काटा जा सकता है। परंतु इस यंत्र द्वारा गन्ना कटाई करने पर ये देखा गया है कि कटे गन्ने एक दूसरे के साथ गुत्थम गुत्था हो जाते हैं जिससे अगोलों एवं पत्तियों की छिलाई में काफी कठिनाई होती है। इस समस्या को दूर करने के लिए प्रयास हो रहे हैं।

पेड़ी प्रबंधन यंत्र

गन्ने की अच्छी पेड़ी लेने के लिए आवश्यक है कि गन्ने के ठूँठ को जमीन की सतह से काटा जाय। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए संस्थान द्वारा ट्रैक्टर चालित एक एवं दो पंक्तियों के ठूँठ कटाई यंत्र (*स्टबल शेवर*) का विकास किया गया है। इस यंत्र की मदद से गन्ने के ठूँठ की जमीन की सतह से कटाई के साथ–साथ गन्ने की दो पंक्तियों के बीच की जगह में गुड़ाई एवं उचित मात्रा में खाद गिराने का कार्य भी संपादित किया जाता है। एक पंक्ति वाले यंत्र की कार्य क्षमता 1.5 हेक्टर प्रति दिन एवं दो पंक्तियों वाले की क्षमता 3.0 हेक्टर प्रति दिन है।

संस्थान ने अभी हाल में तवेदार पेड़ी प्रबंधन यंत्र (*डिस्क आर.एम.डी.*) का विकास किया है जिसकी मदद से गन्ना कटाई के उपरांत ठूँठ की कटाई, पुरानी जड़ों की कटाई, जड़ों के पास खाद का प्रयोग जैसे कार्य एक साथ संपादित होते हैं जो अच्छी पेड़ी की फसल लेने के लिए आवश्यक है। इस यंत्र की कार्य–क्षमता कटाई उपरांत खेत में मौजूद पत्तियों से प्रभावित नहीं होती। इसलिए इस यंत्र का प्रयोग करने के लिए कटाई उपरांत पत्तियों को निकालने की आवश्यकता नहीं होती। इस यंत्र की कार्य–क्षमता 2 से 2.5 हेक्टर प्रतिदिन है।

उपर्युक्त वर्णित गन्ना कृषि यंत्र काफी उपयोगी एवं लाभकारी है। इन कृषि यंत्रों को उपयुक्त रख–रखाव द्वारा एवं सही तरीके से प्रयोग करके गन्ने की खेती को और लाभकारी बनाया जा सकता है। इन यंत्रों का किसानों के खेतों में सफल परीक्षण किया जा चुका है। इन यंत्रों की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु संस्थान ने देश के कई कृषि यंत्र निर्माताओं से सहमति–पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं तथा कई कृषि यंत्र निर्माता इन यंत्रों का निर्माण कर रहे हैं तथा कृषक भाइयों को उपलब्ध करा रहे हैं। इन यंत्रों का अधिक से अधिक प्रयोग कर कृषक भाई गन्ने की खेती को और लाभकारी बना सकते हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ने की पादप कार्यिकी एवं जैव–रसायन में शोध एवं उपलब्धियां

राजीव कुमार, आस्था सिंह, अनम, राजेन्द्र कुमार सिंह, राम सँवारे एवं पुष्पा सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पादप कार्यिकी एवं जैव रसायन विभाग की शुरुआत कार्यिकी अनुभाग के रूप मे सितंबर,1958 में हुई और बाद में यह एक पूर्ण संभाग बन गया। संभाग की प्रमुख गतिविधियों में अंकुरण में सुधार एवं तीव्रता, जैविक और अजैविक तनावों के दौरान जैव रासायनिक और आण्विक तंत्र को समझना, रसायनिक परिपक्वक का उपयोग करके शर्करा की मात्रा को बढ़ाना, बीज गुणन क्षमता एवं अधिक उपज के लिए तकनीकियों का विकास, शर्करा चयापचय, जैव–इथेनॉल और कटाई उपरांत शर्करा हास का नयी चयापचयी अभियांत्रिकी का अंतर्वेशन के द्वारा प्रबंधन, स्रोत ऊतक एवं उपभोक्ता ऊतक गतिकी का व्याख्यान एवं वंशाणु (जीन) अंक्तिक आण्विक चिन्हक जो कि शर्करा चयापचयी किण्वकों एवं अन्य कार्यिकी विशेषता में संलग्नित होते हैं, का विश्लेषण प्रमुख हैं।

विभाग की सात दशकों की शोध उपलब्धियों का सारांश निम्नवत है:

अंकुरण

बीटा–फ्रक्टो–फुरानोसिडेज की भूमिका

अंकुरण के दौरान गन्ने की तीन कलिका के टुकड़ों और कलिकाओं में *β–फ्रक्टो–फुरानोसिडेज (एसिड* विघटक) की क्रियाविधि का निर्धारण अंकुरित हो रहे अंग में करने से *β–फ्रक्टो–फुरानोसिडेज* गतिविधि में तेजी से वृद्धि देखी गई। इससे *बीटा–फ्रक्टो–फुरानोसिडेज* का अंकुरण में एक संभवतः भूमिका का अनुमान लगाया गया, जोकि गन्ने के अंकुरण को नियंत्रित करने वाले प्रमुख चयापचय कारकों में से एक है।

आरएसडी प्रभावित गन्ने की कलिकाओं में विघटक गतिविधि एवं अंकुरण पर *एमएचएटी* का प्रभाव

गन्ने की किस्मों बीओ 3 और सीओ 1158 के *आरएसडी* प्रभावित टुकड़ों (4 या 5 कलिकाओं) को आर्द्रता तापमान नियंत्रित इकाई में आर्द्रता (95%) के साथ 4 घंटे के लिए 54° सेल्सियस पर उपचारित किया गया और बाद में नर्सरी कलिकाओं में लगाया गया। इसके परिणामस्वरूप बेहतर अंकुरण हुआ और उपचारित कलिका भी अनुपचारित की तुलना में पहले अंकुरित हुईं। उपचारित कलिकाओं में एक उच्च अम्ल विघटक गतिविधि देखी गई, जबकि अनुपचारित कलिकाओं में किण्वक गतिविधि पूरी तरह से अनुपस्थित थी। अनुपचारित कलिकाओं में एक कम तटस्थ विघटक गतिविधि देखी गई, जो उपचारित कलियों में अनुपस्थित थी।

पौधे के विकास नियामक *ट्राईकॉन्टानोल* अनुप्रयोग से गन्ने की कलिकाओं में किण्वक गतिविधि में परिवर्तन

अनुप्रयोगित कलिकाओं (0.5% *ट्राईकॉन्टानोल*) में शर्करा का तेजी से संग्रहण और उच्च स्तर की अपचायक शर्करा को प्रदर्शित किया। अम्ल विघटक, एमाइलेज और स्टार्च फास्फोराइलेज की गतिविधि ने अनुप्रयोगित कलिकाओं में उल्लेखनीय वृद्धि दिखाई, जबकि पेरोक्सीडेस और आई.ए.ए ऑक्सीडेज ने अपनी विशिष्ट गतिविधि में मामूली परिवर्तन दर्ज किया। *ट्राईकॉन्टानॉल* अनुप्रयोगित कलिकाओं ने जल अनुप्रयोगित नियंत्रण की तुलना में बेहतर अंकुरण दिखाया।

अंकुरण पर रसायनिक संरूपण का प्रभाव

रिसोरसिनॉल (0.1%) अनुप्रयोगित सेट मे रोपण के 7 दिन बाद 13% अंकुरण देखा गया। रोपण के 30 दिनों के बाद विभिन्न रसायनिक संरूपण में अंकुरण इस प्रकार था। नियंत्रण (25%), जल उपचारित नियंत्रण (64%), सहकिण्वक का मिश्रण (100 पीपीएम), अनुप्रयोगित सेट (74%) और फॉस्फेट का मिश्रण (100 पीपीएम) 68%। इस अवधि को कम करके, प्रारम्भिक शाखा वृद्धि और पत्तियों का विकास हुआ। जिसके कारण नियंत्रण 0.3 की तुलना में रोपण के 70–75 दिनों बाद में लगभग 1 की एल.ए.आई. प्राप्त हुई। इससे गन्ने का औसत भार भी अधिक हुआ।

जैव विघटक विश्लेषण

अम्ल और उदासीन विघटक के जैव रसायनिक विश्लेषण ने स्पष्ट रूप से गन्ने की उपज और शर्करा की मात्रा के आपस में संबंध का संकेत दिया और परिपक्वता के दौरान किण्वकों के लोप होने का संबंध उच्च शर्करा मात्रा से था, जबकि किण्वकों की सततता कम शर्करा मात्रा से जुड़ी पाई गई। सितंबर से विघटक गतिविधि में तेज गिरावट देखी गई, जो परिपक्वता चरण की शुरुआत का संकेत देती है। किण्वक गतिविधि ने उच्च शर्करा किस्मों में निम्न स्तर बनाए रखा और यह जनवरी के अंत में लोप हो गया, जबकि कम शर्करा किस्मों में विघटक गतिविधि ने नवंबर से फिर से बढ़ती प्रवृत्ति दर्ज की और गतिविधि जनवरी तक उच्च बनी रही।

एमाइलेज और फॉस्फोरिलेज

छह उच्च शर्करा किस्मों और छह कम शर्करा किस्मों के समान प्रबंधन के तहत उगाए गए। रोपण के 40 दिनों के बाद पत्तियों की एमाइलेज और फॉस्फोराइलेज के अध्ययन ने सुझाव दिया कि गन्ने में उच्च शर्करा वंशाणु प्रारूप के चयन के लिए

फॉस्फोराइलेज, एमाइलेज और अम्ल विघटक गतिविधियों जैसे पत्तेदार किण्वक उपयोगी जैव रसायनिक मापदंड हो सकते हैं।

$14CO_2$ समावेशन के आधार पर शर्करा संश्लेषक किण्वक आकलन

प्रकाश संश्लेषण और शर्करा संश्लेषण की मूल क्षमता उच्च और निम्न शर्करा किस्मों में समान रहती है और यह पत्तेदार अम्ल विघटक की गतिविधि है जो शायद यह निर्धारित करती है कि किस्म उच्च या निम्न शर्करा प्रकार होगा या नहीं।

देर से बोए गए गन्ने में पत्तेदार किण्वक पर इथेफॉन का प्रभाव

देर से बोए गए गन्ने में, इथेफॉन (500 मि.ग्रा./ली) के अनुप्रयोग मे पर्ण ऊतकों में एमाइलेज, पेरोक्सीडेज, विघटक और *नाइट्रेट रिडक्टेस* (सजीवित तंत्र में) की गतिविधियों मे फेरबदल पाया गया। सजीवित तंत्र मे एन.आर. गतिविधि में इथेफॉन से अनुप्रयोगित सभी किस्मों में तेज वृद्धि देखी गई। हालांकि, किण्वक गतिविधि में अधिकतम प्रेरण कोजे 64 किस्म में दर्ज किया गया था। कोजे 64 और बीओ 91 की किस्मों में उच्च *नाइट्रेट रिडक्टेज* (एनआर) गतिविधि 120 घंटे तक देखी गई, जबकि वंशाणु प्रारूप को 1158 में किन्वयक गतिविधि 48 घंटों के बाद घटने लगी। यह संभवतः अनुप्रयोगित इथेफोन से संबन्धित किस्मों के बीच आनुवंशिक अंतर के कारण था। परिणामों ने इथेफोन अनुप्रयोग के बाद कई किण्वकों की गतिविधि में कई गुना वृद्धि का संकेत दिया, हालांकि विघटक गतिविधि में मामूली गिरावट देखी गई।

बावक और पेड़ी फसलों में सजीवित तंत्र नाइट्रेट रिडक्टेज गतिविधि

सजीवित तंत्र में *नाइट्रेट रिडक्टेज* गतिविधि बावक गन्ने से संबंधित पेड़ी की तुलना में पौधे की फसल के पत्ती की सतह में अधिक थी। यह पेड़ी की फसल की तुलना में नाइट्रेट का कुशल घटाव और पौधे की फसल द्वारा इसके उपयोग के कारण हो सकता है। मृदा में डाले गए प्रोटीन और कुल नाइट्रोजन की मात्रा बावक फसल में, पेड़ी फसल से ज्यादा होती है। सभी स्तरों पर, बावक फसल में लगातार उच्च *नाइट्रेट रिडक्टेज* गतिविधि दर्ज की गई, जो कि एक पेड़ी फसल की तुलना में ज्यादा होता है। *एन.आर.ए.* समान स्तर के लिए, एक पेड़ी के पौधे को बावक फसल की तुलना में अधिक नाइट्रेट नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है।

शीतकालीन प्रादुर्भावित पेड़ी मे अल्प ठूंठ कलिका का अंकुरण

कम तापमान पर ठूंठ कलिका का कम अंकुरण शर्करा के कम स्तर, अम्ल विघटक की कम गतिविधि, आईएए और कुल फिनॉल के उच्च संचय से जुड़ा हुआ पाया गया। ऐसा लगता है कि कम तापमान संभवतः कुछ चयपचय के चयापचय/स्थानांतरण जो कि उनके अंकुरण के लिए आवश्यक होती है, में हस्तक्षेप करते हैं। दूसरी ओर, ऑक्सीकारकरोधी किण्वकों की उच्च गतिविधियों, जैसे कि केटेलेस और पेरोक्सीडेज ने ठूंठ कलिकाओं को ऑक्सीकारक क्षतियों से बचाया हो, और कम तापमानजनित तनाव के तहत भूमिगत ठूंठ कलिकाओं की निष्क्रियता को बनाए रखने के लिए जिम्मेदार हो सकता है।

रसायनिक संरूपण के माध्यम से ठूंठ की कलिका के अंकुरण में सुधार

कई संरूपण में से, विटामिन (500 मिलीग्राम/ली), पोटेशियम नाइट्रेट (0.1%), फाइव फॉस (100 मिलीग्राम/ली) युक्त सबसे प्रभावी संरूपण ने 34.5% अधिक टीमैक्स, 64.7% अधिक *एनएमसी* और 73.5 उच्च गन्ना उपज दिया। अनुपचारित जांच (46.0%) की तुलना में कैल्शियम, पोटेशियम और मैंगनीज के अनुप्रयोग से ठूंठ कलिका के अंकुरण में क्रमशः लगभग 64.3, 73%, और 68.7% की वृद्धि हुई। प्रति ठूंठ किल्लों की संख्या नियंत्रण की तुलना में क्रमशः 157%, 57% और 85.7% कैल्शियम, पोटेशियम और मैंगनीज उपचार में अधिक थी। अंकुरित कलिकाओं में उच्चतर अपचायक शर्करा और अम्ल विघटक गतिविधि और आईआईए और कुल फिनॉल की मात्रा पायी गयी।

अंतरालित प्रतिरोपण तकनीक

अंकुरण की दक्ष कार्यिकी समझ के आधार पर, किल्ले निकलने की प्रक्रिया या अंतर और अंतरा पादप प्रतिस्पर्धा एक वैज्ञानिक फसल प्रबंधन प्रक्रिया, अंतरालित प्रतिरोपण तकनीक (*एसटीपी*) विकसित की गई है जो कीमती गन्ना बीज सामग्री को बचाती है। उच्च गन्ना संख्या को पेराई योग्य गन्नों की संख्या सुनिश्चित करती है साथ में एक समान फसल सघन और उच्च औसत गन्ना वजन के साथ यह गन्ना बीज के तेजी से गुणन के लिए भी एक वरदान रहा है।

कलिका चिप तकनीक

गन्ने की बीज की मात्रा को कम करने और बीज की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए एक विकल्प यह होगा कि गन्ने से कर्तित सहायक कलिकाओं को लगाया जाए, जिसे कलिका चिप्स के नाम से जाना जाता है। गन्ना कृषि में कलिका चिप्स का उपयोग दो तरीकों से किया जा सकता है: 1) कलिका चिप से निकले हुए पौधे और 2) संपुटित और सीधी रोपण।

पारंपरिक पद्धति की तुलना में उच्च बीज गुणन दर (1:60); पारंपरिक प्रणाली की तुलना से अच्छी पौधों की संख्या का इष्टतमीकरण (1:10), उच्च गन्ना ऊँचाई (2.5 मीटर), वजन (2.0 कि.ग्रा.), प्रति थान पेराई योग्य गन्ने की संख्या (5 एनएमसी/थान) और उच्चतर उपज (लगभग 120 टन/हेक्टेयर) हो सकती है। पारंपरिक प्रणाली में 30–35% की तुलना में उच्च कली अंकुरण (90%) कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं जिन्हें कलिका चिप तकनीकी का उपयोग करके माना जाता है। इस तकनीक ने बीज

अनुप्रयोग और इसके परिवहन को आसान और किफायती बनाने की तुलना में 80% बीज सामग्री को भी बचाया है।

किल्लों की वृद्धि और मृत्यु दर

गन्ने की उपज क्षमता में किल्लों की संख्या का महत्वपूर्ण योगदान होता है लेकिन किल्लों की मृत्यु दर (50–60%) और गन्ने के कम वजन से पेड़ी की समग्र उत्पादकता कम हो जाती है। इसे सुधारने के लिए इंडोल–3–एसिटिक एसिड, किनेटिन (6–*फुरफ्यूरिल एमिनो प्यूरीन*) और जिबरेलिक अम्ल (जीए$_3$) (100 पी.पी.एम.), पेड़ी के निकलने के 30 दिन बाद पत्तियों पर (5 मि.ली./पौधा) किया गया। विकास नियामक की प्रतिक्रिया का अध्ययन वृद्धि, विकास, प्रकाश संश्लेषित पदार्थ की मात्रा और गन्ने के वजन पर किया गया था। काइनेटिन का अनुप्रयोग कलिका मृत्यु दर को 10% तक कम करने और गन्ने के वजन में 30% की वृद्धि करने में प्रभावी था। यह देर से निकलने वाले किल्लों के उत्पादन को भी काफी कम कर देता है। काइनेटिन अनुप्रयोग ने प्रोटीन, क्लोरोफिल (क्लो ए और क्लो बी) की मात्रा में सुधार किया, *लिपिड* के ऑक्सीकरण को कम किया और *लीफ* सतह में घुलनशील कार्बोहाइड्रेट में सुधार किया, जिससे किल्लों के अस्तित्व में मदद मिली।

शीत और बसंत ऋतु में बोई गई फसलों ने संकेत दिया कि जल्दी बनने वाले किल्लों ने बाद के चरण के किल्लों की तुलना में पेराई योग्य गन्ना निर्माण में अधिक योगदान दिया। हालांकि, गर्मियों में बोई जाने वाली फसलों से पेराई योग्य गन्ना, कम निष्कर्षण प्रतिशत, कम *ब्रिक्स* और शर्करा: दर्ज किया गया, जो शरद ऋतु और बसंत में बोई गई फसलों की तुलना में कम है।

कार्यिकी दक्षता में सुधार

फसल वृद्धि और परिपक्वता के बाद के चरण में जीए अनुप्रयोगो के साथ स्रोत और उपभोक्ता शक्ति में सुधार दर्ज किया गया था। जीए के उपचार से नियंत्रण की तुलना में पत्ती के क्षेत्रफल/गन्ना में 30, 28, 33, 38 और 36.5% की वृद्धि पायी गई। दिसंबर, जनवरी, फरवरी, मार्च और अप्रैल के महीनों में पत्ते के जैव भार/गन्ना में क्रमशः 38, 39, 40, 36 और 38% की वृद्धि हुई थी। गन्ना रस का वजन/गन्ना 28, 27, 12, 20 और 63% की वृद्धि क्रमशः दिसंबर, जनवरी, फरवरी, मार्च और अप्रैल के महीनों में हुई और अवकारी शर्करा प्रतिशत में 14, 11, 3, 14 की कमी दिसंबर, जनवरी, फरवरी और मार्च लेकिन अप्रैल के महीने में 28% की वृद्धि हुई। दिसंबर, जनवरी और अप्रैल के महीनों में रस की शुद्धता% 11, 14 और 67% घट गई, लेकिन फरवरी के महीने में 13.5% की वृद्धि हुई। ब्रिक्स% में क्रमशः 1, 3, 4, 5 और 3% की वृद्धि दिसंबर, जनवरी, फरवरी, मार्च और अप्रैल के महीनों में जीए अनुप्रयोगों से हुई। लगभग एक समान एमाइलेज की गतिविधि 0.338±0.22 मिलीग्राम विघटित/घं/ता.व. स्टार्च अम्लविघटक विशिष्ट गतिविधि 0.012±0.002 मा.मोल/मिलीग्राम प्रोटीन/मिनट थी और शर्करा सिंथेज 573± 22 ने. मोल शर्करा संश्लेषित/मिनट/ग्रा ता.व. जीए अनुप्रयोगित पत्ते के सतह में पाया गया था, जहां नियंत्रण में यह क्रमशः 224 मिलीग्राम विघटित/घं./ग्रा.ता.व., 0.044±0.002 मा.मोल/मिलीग्राम प्रोटीन/मिनट और 110±11.5 ने.मोल शर्करा संश्लेषित/मिनट/ग्रा.ता.व., एमाइलेज, अम्ल विघटक और शर्करा सिंथेज पाया गया। ये तीन किण्वक स्रोत ऊतकों से विकासशील उपभोक्ता ऊतकों तक प्रकाश सन्स्लेषण के आवागमन को नियंत्रित करते हैं।

पेड़ी पर अध्ययन

गन्ने की शुरुआती वृद्धि और किल्लों के निकलने की अवस्था के दौरान कलिकाओं में विशिष्ट जैव रसायनिक परिवर्तन देखे गए। किल्लों के बहुगुणन चरण के दौरान पर्ण एंजाइमों, जैसे नाइट्रेट रिडक्टेज, अम्ल विघटक, स्टार्च फॉस्फोरिलेज और पेरोक्सीडेज की गतिविधि में वृद्धि हुई। वानस्पतिक विकास चरण के दौरान पर्ण नाइट्रेट रिडक्टेस की गतिविधि में वृद्धि हुई, लेकिन शर्करा संचय चरण या परिपक्वता की शुरुआत के साथ तेजी से गिरावट पायी गयी। जो कि अंकुरण चरण की तुलना में अधिक थी। पानी की कमी के तनाव ने पर्ण और पोरों के किण्वक की गतिविधि को संशोधित किया जिसने शायद शर्करा चयापचय और भंडारण ऊतक में इसके फलस्वरूप संचय को प्रभावित किया। पादप वृद्धि नियामक का अनुप्रयोग जैसे कि इथ्रेल (2–क्लोरो एथिल फॉस्फोनिक एरिड) गन्ने के टुकड़े के अंकुरण और किल्लों के बहुगुणन में सुधार करता है।

चिन्हित किए गए गंधक का उपयोग करके यह प्रदर्शित किया गया कि पेड़ी उगने के 85–90 दिनों के बीच, ठूंठ की जड़ों ने मिट्टी में डाले गए गंधक का लगभग 1.5% हिस्सा ले लिया और इसे गन्ने के विकासशील प्ररोहों में स्थानांतरित कर दिया। पौधे गन्ने की छाँटी गई जड़ों में मैंगनीज का उदग्रहण अधिक था जबकि पेड़ी फसलों की छाँटी गई जड़ों में जस्ते का उदग्रहण अपेक्षाकृत अधिक था। गन्ने में पॉटेशियम उदग्रहण (86 रुबीडीयम द्वारा अनुमानित) अध्ययनों से संकेत मिलता है कि पेड़ी फसल से जुड़ी जड़ें पॉटेशियम उदग्रहण में अपेक्षाकृत कम कुशल होती है।

गन्ना की पेड़ी फसलों में उपज में गिरावट के कारण

उपोष्ण क्षेत्रों में वृहद वृद्धि अवस्था के दौरान पेड़ी विकसित जड़ों की सतह में परिवर्तन पोषक तत्वों के अधिग्रहण और गन्ने की फसल में वृद्धि में बाधा उत्पन्न करते हैं। बेंजीन छल्लों के कार्बन से बंधे नाइट्रोजन के एक महत्वपूर्ण (> 66%) अंश को उन्नत ठोस–अवस्था *एन.एम.आर.* द्वारा वृद्धि चरण के दौरान एक पेड़ी विकसित जड़ों की सतह से निकाले गए ह्यूमिक अम्ल अंश में पाया गया था। अधिकांश बेंजीन छल्लों से बंधे नाइट्रोजन एनिलाइड नाइट्रोजन है। बेंजीन छल्लों के कार्बन से बंधे नाइट्रोजन को कम जैव–उपलब्ध होने के लिए जाना जाता है, *एन.एम.आर.* द्वारा विकसित जड़ों की सतह के ह्यूमिक अंश में

पाए गए एनिलाइड नाइट्रोजन की महत्वपूर्ण अधिकता ने गन्ना पेड़ी फसलों की उपज में गिरावट को दर्शाया।

शर्करा चयापचय और वंशाणु अभिव्यक्ति विश्लेषण

शर्करा चयापचयी किण्वक की अभिव्यक्ति को संशोधित करना और शर्करा चयापचयी वंशाणु की वंशाणु विश्लेषण

गन्ने में शर्करा की मात्रा में सुधार करने के लिए, किण्वक प्रभावकों का पर्ण अनुप्रयोग द्वी–संयोजक धनायन (मैंगनीज$^{++}$, मैग्नीशियम$^{++}$) और पादप वृद्धि नियामकों (जीए और इथ्रेरेल) का प्रयोग परिपक्व अवस्था से पहले किया गया। परिणामों ने संकेत दिया कि किण्वक प्रभावकों के पर्ण अनुप्रयोग द्वारा शर्करा की मात्रा, सी.सी.एस., शा/ज अनुपात और कम अवकारी शर्करा की मात्रा देखी गयी। एस.ए.आई. की विशिष्ट गतिविधि में कमी आई जबकि मैग्नीशियम$^{++}$और मैंगनीज$^{++}$के अनुप्रयोग से सु.प.सि. और सु.सि. में वृद्धि हुई। किण्वक प्रभावकों के कारण *एस.ए.आई., एस.पी.एस* और *एसएस* किण्वक गतिविधि में परिवर्तन को सत्यापित करने के लिए प्रतिलेख (*एम.आर.एन.ए.*) अभिव्यक्ति स्तरों का अध्ययन किया गया और पाया गया कि एस.एस. और एस.ए.आई. प्रतिलेख (*एम.आर.एन.ए.*) स्तर और किण्वक गतिविधियाँ एक दूसरे के साथ सीधे सहसंबद्ध थीं।

शर्करा के वंशाणु(ओं) का अकल्पित समय पीसीआर विश्लेषण

एस.पी.एस., एस.एस., एस.ए.आई. और *सी.डब्ल्यू.आई* वंशाणुओ के प्रवर्धन आलोख और विघटन (पिघलने) वक्र ने प्रारूप किए गए। *आरटी–पीसीआर* प्राइमरों के परिभाषित प्रवर्धन और उचित प्रतिक्रिया स्थितियों का संकेत दिया। अकल्पित समय *पीसीआर* आंकड़ों ने घुलनशील अग्ल विघटक (अभिव्यक्ति में शुरुआती गिरावट) के शुरुआती निषेध को दर्शाया। शीर्ष भाग में पौधे की वृद्धि के बाद के चरण में *सी.डबल्यू.आई.* वंशाणु अभिव्यक्ति उच्च थी, जबकि गन्ने के निचले हिस्से में फसल की परिपक्वता के शुरुआती महीने में यह उच्च थी। गन्ने के ऊपर और नीचे दोनों भागों में *सी.डबल्यू.आई.*की अभिव्यक्ति अधिक थी जो फसल की परिपक्वता के साथ केवल शीर्ष भाग में काफी गिरावट आई है। अकल्पित समय *पीसीआर* वंशाणु अभिव्यक्ति ने सुक्रोज संचय में गन्ना के टुकड़ो में *एस.पी.एस., एस.एस., एस.ए. आई.* और *सी.डब्ल्यू.आई.* की विभेदक विशेष समय या भाग में अभिव्यक्ति का प्रकाशित किया गया और पाया गया कि सामान्य तौर पर, शर्करा संश्लेषण वंशाणु की अभिव्यक्ति कम शर्करा की तुलना में उच्च शर्करा जमा करने वाली किस्म में लंबे समय तक अधिक थी।

गन्ना में शर्करा–मात्रा में सुधार के लिए स्रोत–उपभोक्ता संकेत की गतिशीलता– एक नई पहल

शर्करा के संचय को विनियमित करने वाले प्रतिलेखन (*एम. आर.एन.ए.*) कारकों की पहचान करना; स्रोत–उपभोक्ता संबंध के उतार–चढ़ाव को कम करने के लिए प्रतिक्रिया अवरोध अध्ययन; पत्ती वंशाणु अभिव्यक्ति स्वरूप के साथ जैव–कार्यिकी परिवर्तन; यदि उपभोक्ता उत्तकों की शक्ति स्रोत गतिविधि को नियंत्रित करती है, तो संकेत को कैसे ले जाया जा रहा है और संभावित संकेत अणु, हेक्सोज (अब तक रिपोर्ट किए गए) के अलावा और अंत में सूखे, *ए.बी.ए.* संकेतन और लिग्निन जैव–संश्लेषण से संबंधित वंशाणु जैसे अन्य भौतिक–जैव कार्यिकी–रासायनिक प्रतिक्रियाओं के वंशाणु कैसे हैं। कोशिका भित्ति चयापचय और एक्वापोरिन शर्करा संचय पर नियामक नियंत्रण रखते हैं।

वंशाणु–चिन्हित किए गए आण्विक चिन्हक का विकास और उसकी उपयोगिता

लगभग 2.5 लाख *सैकरम ऑफिसिनेरम ई.एस.टी.* अनुक्रम का उपयोग करते हुए इसके तुलनात्मक विश्लेषण के साथ–साथ ज्वार और जौ के *ई.एस.टी.* और चावल का सम्पूर्ण वंशाणु अनुक्रम, 3425 नवीन वंशाणु–चिन्हित चिन्हक–अर्थात् संरक्षित–*इंट्रोन स्कैनिंग प्राइमर्स* (*सी.आई.एस.पी.*) – *वेब प्रोग्राम* का उपयोग करते हुए *जी.एम. प्रोस्पेक्टर* विकसित किया गया है। चावल *ऑर्थोलॉग* टिप्पण परिणामों ने व्यक्त प्रोटीन के साथ 1096 अनुक्रमों के समरूपता का संकेत दिया, 491 काल्पनिक प्रोटीन के साथ। शेष 1838 प्रकृति में विविध थे। नमूनों के विविध पैनल में कुल 367 प्राइमर–जोड़े का परीक्षण किया गया। आंकड़ो से ज्ञात हुआ कि 41% बहुरूपी पट्टी के प्रवर्धन को इंगित करता है जिससे गन्ने की किस्मों और सैकरम प्रजातियों के एक श्रेणी के साथ 0.52 पी.आई.सी. और 3.50 एम.आई. हो जाते हैं। विकसित वंशाणु–चिन्हित *सी.आई.एस.पी.* चिन्हक ने गन्ने की किस्मों के साथ काफी तकनीकी कार्यक्षमता का प्रदर्शन किया।

अजैविक और जैविक तनाव अध्ययन

गन्ने की किस्मों की वृद्धि और रस की गुणवत्ता पर सिंचाई जल के आयनिक घटकों का प्रभाव

सोडियम, क्लोराइड, फ्लोराइड और नाइट्रेट आयनों ने गन्ने की वृद्धि और प्रकाश संश्लेषक के वितरण को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया। क्लोरोफिल मात्रा, पौधे की लंबाई, पत्ती क्षेत्रफल, पत्ती संख्या और पत्ती अनुपात हैं, *आर.जी.आर.*, और *एन.ए.आर.* का मूल्यांकन सभी लवणता स्तरों पर काफी कम था। सिंचाई के पानी में फ्लोराइड की मात्रा में वृद्धि के साथ कैटेलेज, पेरोक्सीडेज और एटीपेज की विशिष्ट गतिविधियों में वृद्धि हुई है। तनावग्रस्त पौधों में नियंत्रण की तुलना में कुल प्रकाश संश्लेष्य भंडारण दर काफी कम थी और लवणता के स्तर में वृद्धि के साथ कमी में वृद्धि हुई। अन्य पौधों की तुलना में जड़ें अधिक मात्रा में क्लोराईड और सोडियम$^{+}$दोनों जमा करती हैं। लवणता ने पत्ती सतह में पोटेशियम की मात्रा में कमी को भी प्रेरित किया। हालांकि, इसने जड़ के वजन को साथ–साथ तन्तु की मात्रा को भी बढ़ाया। नाइट्रेट की मात्रा में वृद्धि से किण्वकों की विशिष्ट गतिविधियां और रस की गुणवत्ता भी प्रभावित हुई।

कम तापमान तनाव

शीतकालीन प्रार्दुभावित विकसित पेड़ी में, भूमिगत कलिकाओं का अंकुरण कम तापमान से पीड़ित होता है, जबकि गर्मियों में यह उच्च तापमान से ग्रस्त होता है, फलस्वरूप, वृद्धि और उपज में कमी आती है। इथ्रेल+यूरिया के संयुक्त प्रयोग से कम और उच्च तापमान में कलीकाओं के अंकुरण में लगभग 8–10% की वृद्धि पायी गयी। *आई.ए.ए. ऑक्सीडेज* और *पेरोक्सीडेज* की कम गतिविधियों के साथ–साथ ट्रिप्टोफैन और जिंक की मात्रा में वृद्धि इथ्रेल अनुप्रयोगित प्रेरण से हुआ। इथेफॉन अनुप्रयोग ने ठूंठ की कलिकाओं की कोशिका झिल्ली की स्थिरता को भी बढ़ाया, जिससे सर्दी और गर्मी के महीनों के दौरान अंकुरण की प्रक्रिया तेज हो गई।

सुक्रोज स्थिरीकरण और एक कलिका गन्ने के टुकड़े की कलियों और जड़ पत्ते क्षेत्र में *आई.ए.ए.* के संचय के कारण द्रुतशीतन तापमान पर कली के अंकुरण का दमन हुआ। पोटैशियम, जिंक और इथ्रेल ने निम्न तापमान तनाव प्रेरित जैव रासायनिक परिवर्तनों को नियंत्रित किया और कम तापमान पर कलियों के अंकुरण में 80, 50 और 40% सुधार किया।

जल भराव

पर्ण किण्वकों और जलभराव वाले गन्ने के पौधे में जैव रासायनिक परिवर्तनों का अध्ययन किया गया और परिणामों ने सभी किस्मों (को 419, बी–41242 और को 1148) में कुल नाइट्रोजन में उल्लेखनीय कमी का संकेत दिया है, *आर.एन.ए.* मात्रा में वृद्धि हुई है, जबकि पर्ण विघटक (अम्ल और उदासीन) की विशिष्ट गतिविधि में काफी वृद्धि हुई, जबकि एमाइलेज गतिविधि में मामूली कमी आई।

भारी धातु विषाक्तता

10 पीपीएम पर भारी धातुओं जैसे कि क्रोमियम, लेड और निकेल ने *एस्कॉर्बेट, पेरोक्सीडेज, ग्लूटाथियोन रिडक्टेस* गतिविधियों और *एम.डी.एच.* मात्रा को कम करती है, जिससे पत्ती की क्षेत्रफल, किल्लों की संख्या, छल्लों एवं पोरों की संख्या, और गन्ने की ऊँचाई को प्रभावित करने वाले क्लोरोफिल और प्रकाश संश्लेषक दरों को कम करके विषाक्तता पैदा हुई। क्रोमियम, लेड और निकेल अनुप्रयोग से पेराई योग्य गन्ने का वजन 20, 15 और 10% कम हो गया। सूक्ष्म पोषक तत्वों विशेष रूप से लौह और जस्ते की उपलब्धता कम हो गई थी। विषाक्तता के कारण शर्करा:, गन्ने के रस के वजन और शुद्धता: में कमी आई। 30 प्राइमरों के साथ जीनोमिक डीएनए के *आर.ए.पी.डी.* प्रोफाइल ने 30 *पी.पी.एम. क्रोमियम* और निकेल के साथ अनुप्रयोगित सहिष्णु किस्म में अतिरिक्त छल्लों की उपस्थिति दिखाई।

गन्ने पर चने के ऐलीलोपैथिक प्रभाव

काले चने की अंत:फसल से गन्ने के वजन और गन्ने की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इससे गन्ने की पत्ती क्षेत्रफल, *आर.जी.आर.* और *एन.ए.आर.* में कमी आई, जिससे प्रकाश–संश्लेषण संचय और उनको वितरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। साथ ही गन्ने की पत्ती सतह में पानी की मात्रा काफी कम हो जाती है, जिससे पता चलता है कि चने के साथ अंत:फसल करने पर गन्ने की फसल को नमी की कमी का सामना करना पड़ा। गन्ने की पत्ती की सतह में कुल क्लोरोफिल की मात्रा 37.5 और 31.25% कम हो गई थी, जब इसे क्रमश: चने और हरे चने के साथ अंत: फसल के रूप में लिया गया था। गन्ने की क्लोरोफिल मात्रा में कमी के साथ–साथ कुल स्टार्च मात्रा में वृद्धि हुई। स्टार्च मात्रा में वृद्धि के कारण, शर्करा संचय कम पाया गया।

गन्ना फसल प्रणाली में एलीलोकेमिकल्स/कवकरोधी यौगिक/साइडरोफोर्स

गन्ने के अंकुरण और वृद्धि पर गन्ना लिग्नोसेल्यूलोजिक का ऐलीलोपैथिक प्रभाव और परोक्ष रूप से मिट्टी के जीवसमूह पर भी होता है जो कि हाइड्रोक्सैमिक एसिड (2, 4–डायहाइड्रॉक्सी–1, 4–बेंजोक्साजिन–3–वन (डीआईएमबीओए) और 2,4 –बेंजोक्साजोलिनोन (*एमबीओए*) के कारण होता है। कवकरोधी यौगिकों का उत्पादन, *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस* द्वारा *साइडरोफोर, बैसिलस* प्रजाति, *सेरासिया, एसीटोबैक्टर, ट्राइकोडर्मा, पेनिसिलियम* और *स्ट्रेप्टोमाइसिज,* पादप तंत्र द्वारा रक्षा किण्वकों के प्रेरित उत्पादन के साथ–साथ *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* के प्रतिउत्तर मे कवकरोधी गतिविधि के लिए उत्तरदायी हैं।

चोटी बेधक सहिष्णु आनुवंशिक स्टॉक से जुड़े जैव रासायनिक गुण

सभी पीढ़ी में चोटी बेधक संक्रमण और जैव रासायनिक विशेषताओं (सिलिका, मोम और फिनॉल मात्रा) के लिए 20 विविध किस्मों की जांच की गई। सभी प्रतिरोधक प्रतिरूप जैसे कि *आई. एस.एच.–34, आई.एस.एच.–5, आई.एस.एच.–147* ने अतिसंवेदनशील प्रतिरूप, *आई.एस.एच.–133,* कोलख 8102 और कोप 9106 की तुलना में चोटी बेधक के लिए सिलिका, फिनॉल और बाह्य त्वचा मोम को अधिक मात्रा में संश्लेषित किया। सिलिका और मोम की मात्रा ने छेदक की तीसरी पीढ़ी के साथ सकारात्मक सहसंबंध दिखाया, इसलिए इन मापदंडों को गन्ने में चोटी बेधक/तनाव सहनशीलता के लिए रासायनिक चिन्हक के रूप में विकसित किया गया।

गन्ना रोगों के जैव–रासायनिक पहलू

लाल सड़न से प्रभावित ऊतकों ने स्वस्थ ऊतकों की तुलना में पेरोक्सीडेज गतिविधि में वृद्धि दिखाई। किस्म कोजे 64 के पांच दैहिक प्रारूप के साथ किए गए अध्ययनों से पता चला कि लाल सड़न प्रतिरोधी प्रारूप नामत: एन 79–1 और एम 80–5 में पेरोक्सीडेज गतिविधि मूल कोजे 64 की तुलना में काफी अधिक थी, जो कि लाल सड़न के कुछ *पैथोटाइप्स* के लिए अतिसंवेदनशील है। शेष तीन मध्यम प्रतिरोधी प्रारूप अर्थात् एम 80–3, एम 79–2 और एम 80–1 ने भी कोजे 64 की तुलना में

उच्च पेरोक्सीडेज गतिविधि प्रदर्शित की। प्रतिरोधी और मध्यम प्रतिरोधी प्रारूप अग्र पुर्नउदभव वाले ऊतकों में पॉलीफिनॉल ऑक्सीडेज की उच्च गतिविधि उनके मूल को जे 64 (लाल सड़न के लिए अतिसंवेदनशील) की तुलना में भी देखी गई थी।

गन्ने की किस्मों ने लाल सड़न कवक के प्रति उनकी प्रतिक्रिया के आधार पर फिनाइल एलानिन अमोनिया लाएज (*पी. ए.एल.*) और टाइरोसिन अमोनिया लाएज (*टी.ए.एल.*) गतिविधि में अलग भिन्नता दिखाई। को 1148 और को 312 जैसे किस्म *सी. फाल्केटम* के लिए अतिसंवेदनशील होते हैं जबकि को 1158 और कोस 767 प्रतिरोधी होते हैं। *पी.ए.एल.* और *टी.ए.एल.* की गतिविधि संवेदनशील किस्मों की तुलना में मध्यम प्रतिरोधी किस्मों में लगभग दो गुना अधिक पायी गई। एक प्रतिरोधी किस्म कोस 767 में, *पी.ए.एल.* और *टी.ए.एल.* दोनों की गतिविधि अधिकतम थी, यह दर्शाता है कि इन किण्वकों की विशिष्ट गतिविधि को किस्मों की लाल सड़न प्रतिरोधक क्षमता या संवेदनशीलता के साथ सीधे सहसंबद्ध किया जा सकता है।

चाबुक रोग (*स्मट*) की शुरुआत और उभरने पर जैव रासायनिक अध्ययनों से पता चला है कि उदासीन विघटक गतिविधि, जो स्वस्थ अग्र पुर्नउदभव ऊतकों में अनुपस्थित थी, *स्मट* संक्रमित गन्नों में दिखाई दी। नम गर्म हवा के उपचार से *आर.एस.डी.* प्रभावित गन्ना में जैव रसायनिक परिवर्तन से उपचारित कलिकाओं में उच्च अम्ल विघटक गतिविधि का पता चला, जबकि किण्वक गतिविधि अनुपचारित कलिकाओं में पूरी तरह से अनुपस्थित थी और उपचारित गन्नो में कोई गतिविधि नहीं पाई गई। पाया गया कि उष्मपरिवर्ती कारक शायद एक संभावित कारण हो जो कि अम्लविघटक गतिविधि के निषेध के लिए जिम्मेदार हो। उपचारित और अनुपचारित दोनों प्रकार के गन्नों की कलिकाओं में उदासीन विघटक अनुपस्थित था। इसके विपरीत, अनुपचारित (*आर.एस.डी.* प्रभावित) कलिका में अम्ल विघटक गतिविधि का पता चला था। *एम.एच.ए.टी.* ने *आर.एस. डी.* प्रभावित गन्ने के अंकुरण को बढ़ाया और कलिकाओं के जल्दी और बेहतर अंकुरण को बढ़ावा दिया। *आर.एस.डी.* रोगाणु द्वारा अम्ल विघटक का निषेध संभवतः किसी ऐसे कारक के कारण हुआ था जो या तो सीधे *डी.एन.ए.* पर निर्भर *एम–आर.एन. ए.* संश्लेषण में हस्तक्षेप करने वाले अम्ल विघटक गतिविधि को रोकता है।

आर.एस.डी. प्रभावित कलिकाओं में अम्ल विघटक की अनुपस्थिति शायद कलिकाओं के खराब अंकुरण के लिए जिम्मेदार रही होंगी। स्वस्थ और पत्ती जलन प्रभावित कलिकाओं में अम्ल विघटक, एमाइलेज, घुलनशील प्रोटीन, कुल कार्बोहाइड्रेट और अमीनो अम्लमात्रा में भिन्नता का अध्ययन किया गया था। अनुमानित दो *इनवर्टेस* में से केवल अम्लविघटक (पीएच 5.5) स्वस्थ कलिकाओं में मौजूद था। अंकुरित होने के विभिन्न चरणों के दौरान अम्ल विघटक की गतिविधि ने स्वस्थ और रोगग्रस्त कलिकायों में उल्लेखनीय वृद्धि दिखाई। हालांकि, किन्वयक गतिविधि में यह वृद्धि स्वस्थ कलिकाओं की तुलना में रोगग्रस्त कलियों में अधिक थी। अम्ल विघटक की गतिविधि को कलिकाओं के अंकुरण के साथ सहसंबद्ध किया गया और पत्ती की जलन से प्रभावित कलिकाओं में इसकी उल्लेखनीय वृद्धि स्पष्ट रूप से शुरुआती अंकुरण में इसकी भूमिका को इंगित करती है। स्वस्थ निष्क्रिय कलिकाओं में उदासीन विघटक गतिविधि अनुपस्थित थी लेकिन अंकुरण के दौरान कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं दिखाई दी। जबकि रोगग्रस्त कलिकाओं में अंकुरण के समय इसकी सक्रियता धीरे–धीरे बढ़ जाती है। एमाइलेज निष्क्रिय स्वस्थ और रोगग्रस्त दोनों कलिकाओं में मौजूद था, लेकिन रोगग्रस्त कलिकाओं में इसकी गतिविधि लगभग दोगुनी पाई गई। यह पाया गया कि स्वस्थ और रोगग्रस्त मौन या अंकुरित कलिकाओं की कुल कार्बोहाइड्रेट मात्रा स्पष्ट रूप से भिन्न नहीं थी लेकिन अंकुरित कलिकाओं में मात्रा अधिक थी। सभी चारों *लीफ स्केल्ड* प्रभावित किस्मों में स्वस्थ किस्मों की तुलना में कुल कार्बोहाइड्रेट की मात्रा कम हो गई।

नाभिकीय अम्ल (*डीएनए*) मात्रा में वृद्धि ने संकेत दिया कि या तो रोगग्रस्त पौधों में इसके संश्लेषण में वृद्धि हुई है या यह जीवाणु *डीएनए* के योगात्मक प्रभाव के परिणामस्वरूप हुआ है। बाद की व्याख्या अधिक संभावित लगती है क्योंकि *लीफ स्केल्ड* जीवाणु में *आरएनए* और *डीएनए* दोनों होते हैं।

गन्ना *लिग्नोसेल्यूलोजिक* जैवभार का इथेनॉल में रूपांतरण

तनु गंधक का अम्ल और आठ जैवघटक, जिसमें कवक और जीवाणु शामिल हैं, के साथ गन्ना *लिग्नोसेल्यूलोजिक* जैवभार की पूर्व–उपचार तकनीक ने संकेत दिया कि *एस्परजिलस टेरियस*, सेल्युलोज को एकल रूप में और इसकी घुलनशीलता और उच्च सेल्युलोज उत्पादन के मामले में सबसे प्रभावी था, इसके बाद *सेल्युलोमोनसउडा* और *ट्राइकोडर्मारिसेई* पाया गया।

फसलोत्तर शर्करा हास और उसका प्रबंधन

फसलोत्तर शर्करा हास के जैव रसायनिक कारण और उसकी सीमा

अध्ययनों से संकेत मिलता है कि फसल से लेकर *मिलिंग* चरण तक पोल% गन्ने में 1.0 *यूनिट* से अधिक नुकसान होता है। औसतन भारतीय चीनी मिलों को प्रति टन अपघर्षित गन्ने की लगभग 5 से 10 किलोग्राम चीनी का नुकसान होता है। ये नुकसान तब और बढ़ जाते हैं जब गर्मी के महीनों में पेराई बढ़ा दी जाती है। कटाई के बाद के कार्यों के दौरान हास हुई चीनी की भारी मात्रा, यदि कारखाने में चीनी की आनुपातिक रूप से परता नहीं की जाती है, तो खेत स्तर पर चीनी उत्पादन में वृद्धि की निरर्थकता की ओर इशारा करती है। गन्ने के खराब होने पर मौसम का गहरा प्रभाव पड़ता है, तापमान और आर्द्रता जितनी अधिक होती है और मौसम गीला होता है, गिरावट उतनी ही अधिक होती है। यह भी बताया गया है कि कटाई के बाद 72 घंटों

के भीतर उपोष्ण परिस्थितियों में वजन में कमी 7 से 10 प्रतिशत के बीच होती है। गन्ने की कटाई चीनी कारखाने की आपूर्ति में देरी से गन्ना उत्पादकों को बड़ा आर्थिक नुकसान हो सकता है।

कटे हुए गन्ने का ह्रास मुख्य रूप से एक जैव रासायनिक प्रक्रिया है जो समय के साथ बढ़ती जाती है। इसके बाद कटे हुए सिरों या गन्ने के क्षतिग्रस्त स्थानों के माध्यम से जीवाणु का आगमन होता है। कई बाहरी सूक्ष्मजीवी के प्रवेश के अलावा, गन्ने के डंठल में एक अन्तःपादपी सूक्ष्मजीव समूह होती हैं, जैसे कि *एसीटोबैक्टर, एंटरोबैक्टर, स्यूडोमोनास, एरोमोनास, विब्रियो, बैसिलस* और *लैक्टिक* अम्ल समूह जो भंडारण के दौरान कई गुना बढ़ जाते हैं और रस की गुणवत्ता में गिरावट के लिए भी जिम्मेदार होते हैं। आंतरिक विघटक के साथ–साथ जीवाणु मूल के विघटक द्वारा चीनी ह्रास मे तेजी की शुरुआत की जाती है, इसके बाद कार्बनिक अम्ल, डेक्सट्रान, गौंद और अल्कोहल जैसे माध्यमिक चयापचयक का उत्पादन होता है। चीनी के नुकसान को कम करने के लिए कटे हुए गन्ने में बहुत अधिक जीवाणु आबादी को काफी कम करने की आवश्यकता है। इसलिए, अधिकतम चीनी परता प्राप्त करने के लिए कटाई और अपघर्षण के बीच का समय महत्वपूर्ण है। कटाई के बाद के शर्करा के नुकसान की मात्रा और देर से अपघर्षण मौसम के दौरान अम्ल विघटक और डेक्सट्रान सुक्रेज किण्वक के साथ इसके संबंध का भी अध्ययन किया गया है। वाणिज्यिक गन्ना शर्करा में कमी और इन किण्वकों की गतिविधियों में वृद्धि के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध पाया गया।

विघटक गतिविधि और रस की गुणवत्ता पर रसायनों का प्रभाव

सोडियम मेटासिलिकेट के प्रयोग ने नियंत्रण की तुलना में पोल वैल्यू में मामूली सुधार दिखाया।

चीनी के नुकसान को कम करने के लिए काटे गए गन्ने में विघटक गतिविधि को रोकने का भी प्रयास किया गया। यह देखा गया कि अपघर्षित हुए रस में सोडियम मेटासिलिकेट और सोडियम लॉरिल सल्फेट (10–20 मिमो) मिलाने से विघटक गतिविधि पूरी तरह से बाधित हो जाती है। *एसएमएस, एसएलएस* और *केएमएनओ4* (10–20 मि मो) के प्रयोग से काटे गए भंडारित गन्ने में विघटक गतिविधि में काफी कमी देखी गई। 2–क्लोरोइथाइल फॉस्फोरिक एसिड (500–1000) मि.ग्रा./ली के साथ सोडियम मेटासिलिकेट (2%) का पत्ते पर प्रयोग या डाइनाईट्रोसोसिफ्रोल या ग्लाइफोसेट देर से अपघरसन चरण के दौरान स्वस्थानी व्युत्क्रमण को कम करने में सक्षम थे। रस की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए एसएमएस+इथेफान और *एसएमएस*+डाइनाईट्रोसोसिफ्रोल के संयोजन सबसे प्रभावी पाए गए। इन रसायनों का उपयोग अम्लविघटक गतिविधि को कम करने में सक्षम था जिसके परिणामस्वरूप अनुपचारित नियंत्रण की तुलना में बेहतर रस की गुणवत्ता हुई।

चीनी की परता में सुधार के लिए जीवाणुरोधी और विघटक विरोधी रसायनों का अनुप्रयोग

जीवाणुरोधी (चतुष्कोणीय अमोनियम यौगिक/थियोकार्बामेट्स), विघटक विरोधी रसायनों (सोडियम मेटासिलिकेट/सोडियम लॉरिल सल्फेट) युक्त रसायनिक योगों ने गन्ने के बाद शर्करा के नुकसान को कम करने में अच्छे परिणाम दिखाया। द्रव्य संरूपण को ताजे कटे हुए गन्ने (पूरे डंठल और गुटका) पर छिड़कना पड़ता है, इसके बाद अनुप्रयोगित गन्ने को सूखे गन्ने के पत्तों (खरपतवार) की मोटी परत से ढकना पड़ता है। बेंजलकोनियम क्लोराइड (*बीकेसी*). सोडियम मेटासिलिकेट (*एसएमएस*) युक्त फॉर्मूलेशन 0.5 यूनिट से अधिक चीनी की परता में सबसे प्रभावी और बेहतर पाया गया। यह विधि गन्ने की कटाई से शर्करा के नुकसान को एक सप्ताह की अवधि तक कम कर देती है, चाहे तापमान और विविधता कुछ भी हो।

गन्ने के लाल सड़न रोगाणु का जीनोम अनुक्रमण

गन्ने में लाल सड़न पैदा करने वाले *सी. फालकेटम* का एक रोगाणु किस्म (सीएफ 08) की अच्छी मात्रा में *माइसिलिया* प्राप्त करने के लिए उपयुक्त संचार माध्यम पर उगाया गया। वंशाणु *डीएनए* को *मायसिलिया* से अलग किया गया और इसकी गुणवत्ता 0.8% अगारोस तरल पर जाँची गई। नैनोड्रॉप स्पेक्ट्रोफोटोमीटर का उपयोग 260/280 (1.8) और इसकी मात्रा (380 नैनो ग्रा./ माइक्रो ली.) प्राप्त करने के लिए किया गया था, जो पृथक *डीएनए* की अच्छी गुणवत्ता और मात्रा का संकेत देता है। आंकड़ा आधार निर्माण से पहले, ए एम प्योर पी बी का उपयोग करके *डीएनए* को और शुद्ध किया गया। अनुक्रमण के लिए *पीएसी बायो* (आरएस द्वितीय) प्लेटफॉर्म का उपयोग किया गया था। लगभग 97.24% वंशाणु अनुक्रमित किया गया था। लेखा चित्र के अनुसार, जब सभी प्राप्त सूचना को कोडांतरण किया गया तो, तब कुल 253 *कंटिग्स* प्राप्त किए गए, हालांकि, *असेंबली सॉफ्टवेयर* के एक अलग सेट को निष्पादित करने पर *कंटिग्स* की संख्या कम हो सकती है।

बायोप्रोजेक्ट PRJNA509540 के तहत *एनसीबीआई* में *एसआरएएसआरआर* 8375625–*एएसआरआर* 8375634 के रूप में असंगठित सूचना एकत्र जमा किए गए थे। *असेंबली* के बाद, *एनसीबीआई* में कुल 238 *कंटिग्स* देखे गए और SWKJ00000000 के रूप में जमा किए गए। कुल 18.635 प्रोटीन–चिन्हक वंशाणु का आकलन किया गया। लाल सड़न रोगाणु वंशाणु के कार्यात्मक टिप्पण से पता चला है कि पौधा–रोगाणु संबंध में महत्वपूर्ण भूमिका वाले वंशाणु के विभिन्न वर्ग हैं। वंशाणु अनुक्रमों की तुलना अन्य कवक प्रजातियों के साथ की गई, जिससे पता चला कि *सी. फाल्केटम* का *सी. ग्रैमिनिकोला* और *सी. हिगिन्सियनम* के साथ घनिष्ठ संबंध है, जो मक्का और ब्रैसिसेकेसी में एन्थ्रेक्नोज के कारक जीव हैं। क्विवर

पॉलिश्ड ड्प्रालेख कोडांतरण ने 27.72 केबीपी के माइटोकॉन्ड्रियल अनुक्रम की जांच की। किण्वक कोड वितरण विश्लेषण के द्वारा एंजाइमों के सभी छह वर्गों को इंगित किया जिसमे मुख्य रूप से हाइड्रोलिसिस प्रकार की अधिकता पाई गई।

गन्ने में बहु अजैविक तनाव सहनशीलता के शारीरिक एवं आणविक आधार

एकल/संयुक्त बहुल अजैविक तनावों के लिए विशिष्ट सहिष्णु लक्षणों की पहचान करने के लिए, सहनशील (कोशा 767) और अतिसंवेदनशील (कोजे 64) गन्ने की किस्मों का उपयोग करके एक पौधा गृह प्रयोग किया गया था। पौधों को एकल सूखे के तनाव (75 डीएपी पर) और जलभराव (60 दिनों के लिए 120 डीएपी पर) और उनके संयोजन के साथ लगाई गई थी, एकल/संयुक्त तनाव के अंत में विभिन्न वृद्धि और कार्यिकी–जैव रासायनिक लक्षण दर्ज किए गए थे। कोशा 767 और कोजे 64 का सापेक्षिक एकल गन्ना भार क्रमशः 0.86 (जलभराव) से 0.56 (लवणता+सूखा+जलभराव) और 0.84 (लवणता) से 0.39 (लवणता+सूखा+जलभराव) तक भिन्न पाया गया। एकल/संयुक्त तनावों के तहत गन्ने की लंबाई दर, पोरों की लंबाई, पत्ती क्षति अंक, *आरडब्ल्यूसी, सीएसआई, प्रोलीन, फाइबर%, पीओएक्स* और *कैट* गतिविधि के लिए कोशा 767 और कोजे 64 के बीच महत्वपूर्ण परिवर्तनशीलता मौजूद थी। सुक्रोज% सभी तनावों में कम हो गया और उच्चतम कमी लवणता+सूखा+जलभराव के संयोजन में हुई।

विकास मानकों के लिए एक महत्वपूर्ण भिन्नता मौजूद थीय विभिन्न एकल/संयुक्त तनावों के तहत पौधे की ऊंचाई, एकल गन्ना वजन, पोरों की लंबाई, गन्ना परिधि, ताजा पत्ते का वजन, जड़ वजन और जड़ मात्रा, नियंत्रण की तुलना में, दोनों किस्मों में सूखे+जलभराव+लवणता के अनुप्रयोग के तहत पत्ती के ताजे वजन में तीन गुना कमी पाई गई। जड़ वजन और मात्रा में सूखा प्रेरित वृद्धि पायी गई। ये वृद्धि नियंत्रण से लगभग 2.5 गुना अधिक थी। अकेले जलभराव की तुलना में सूखे+जलभराव अनुप्रयोग के तहत गन्ना/वायुवीय जड़ अनुपात अधिक पाया गया और कोजे 64 की तुलना में कोशा 767 में अधिक पाया गया। कोशा 767 ने जलभराव में उच्चतम तनाव सहिष्णुता सूचकांक दिखाया, जिसके बाद सूखा और लवणता थी, जबकि कोजे 64 में लवणता के लिए उच्चतम तनाव सहिष्णुता सूचकांक था, जिसके बाद सूखा और जलभराव, लवणता दोनों किस्मों के लिए थी।

आर.डबल्यू.सी., विद्युत अपघट्य रिसाव, प्रोलीन, केट और पोक्स गतिविधि विभिन्न तनाव उपचारों के बीच महत्वपूर्ण रूप से भिन्न पाए गए और कोजे 64 की तुलना में कोशा 767 में उपरोक्त लक्षणों के मान अधिक पाए गए। अलग–अलग तनावों के कारण पत्तियों का हरित रोग और परिगलन हुआ जो दोनों किस्मों में सूखे+जलभराव+लवणता के अनुप्रयोग में सबसे अधिक थे। यह क्लोरोफिल विश्लेषण से भी स्पष्ट था, यह दर्शाता है कि हरे रंग का चरित्र एकल/एकाधिक तनाव सहिष्णुता के लिए दृश्य अनुवेक्षन मानदंडों में से एक हो सकता है।

गन्ने की वृद्धि, उपज और रस की गुणवत्ता विशेषताओं पर जीवामृत का प्रभाव

गन्ने की वृद्धि, उपज और रस की गुणवत्ता विशेषताओं पर जीवामृत के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए, शरद ऋतु में कोलख 94184 किस्म का उपयोग करते हुए दो अनुप्रयोगों के साथ अर्थात नियंत्रण और जीवामृत की मिट्टी और पत्तेदार के अनुप्रयोग के साथ एक अन्वेषी परीक्षण किया गया था। प्राप्त परिणामों ने संकेत दिया कि 25 और 45 *डीएपी* पर अंकुरण में 50 और 66: की वृद्धि हुई है। हालांकि, पौधों की आबादी में वृद्धि 25, 45, 90, 150, 210 और 250 *डीएपी* पर क्रमशः 51, 18, 12, 10, 35 और 75% थी। पत्ती क्षेत्रफल में 62, 60 और 12% की वृद्धि हुई, जबकि *एलएआई* में 92, 116 और 95% की वृद्धि 45, 210 और 240 *डीएपी* पर क्रमशः हुई। उपज एवं *एनएमसी* मे वृद्धि 10 और 13% थी, जबकि ब्रिक्स, शर्करा, और रस की शुद्धता क्रमशः 11, 17 एवं 5% थी। जीवामृत पर एक अन्य प्रयोग भी उतरगामी समय मे मध्य–देर से पकने वाली किस्म कोलख 11206 के साथ किया गया और पाया गया कि एकल गन्ने के वजन में 641 से 785 ग्राम तक सुधार हुआ। गन्ने की लंबाई, व्यास और पोरों की संख्या मे कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं पाया गया। नियंत्रण (18.37) की तुलना में जीवामृत अनुप्रयोगित गन्नों मे (19.09) में रस का उच्च ब्रिक्स अंक दर्ज किया गया, और शर्करा 16.3% (जीवमृत अनुप्रयोगित) और अनुप्रयोगित गन्नों में 15.65% दर्ज किया गया था। गन्ने का शुष्क वजन या प्रकाश संश्लेषण की मात्रा अपेक्षाकृत जीवामृत मे अधिक था, जबकि पत्ती और जड़ के सूखे वजन मे कमी देखी गई, यह इंगित करता है कि विकास अवधि के बाद प्रकाश संश्लेषण/जैवभार के विभाजन को गन्ने में शर्करा के बनने कि ओर मोड़ दिया जाता है। इसलिए जीवामृत को गन्ने की खेती मे शामिल करना चाहिए क्योंकि, गन्ने की सक्रिय वृद्धि के दौरान पर्ण छिड़काव से शुष्क पदार्थ या प्रकाश संश्लेष्य जमाव पर कुछ लाभकारी प्रभाव पड़ सकता है।

गन्ना के संयंत्र विकास चक्र के दौरान पादप विकास नियामकों के माध्यम से जैवभार/प्रकाश संश्लेष्य गतिशीलता के संवर्धन के लिए प्रयोजन का आकलन

चार कार्बनिक यौगिकों (जी ए$_3$, आई बी ए, 6 बी ए और *एन ए ए*) का मूल्यांकन फसल वृद्धि चक्र के दौरान गन्ना मे जैवभार/प्रकाश संश्लेष्य आवागमन पर उनके प्रभावों के लिए किया गया। नियंत्रित परिस्थितियों में एक प्रयोग जी ए$_3$, आई बी ए, 6 बीए और *एन ए ए* की छह खुराक (35, 50, 70, 100, 150 और 200ppm) के जलीय घोल के साथ–साथ पानी, इथेरेल और पूर्ण नियंत्रण (*सी आर डी* के तहत) के साथ गन्ने के टुकड़े को रात भर भिंगोया गया था। अगले दिन पौधा गृह की परिस्थितियों में रखे गए गमलों में गन्ने के टुकड़े को लगाया गए। अंकुरण

चरण के दौरान 45 डीएपी पर अंकुरण% तथा एच–ए अवस्थांतरण पर अवलोकन के आधार पर, जीए, आईबीए, 6बीए और *एनएए* का अधिकतम प्रभाव 50 और 100 *पीपीएम* पर देखा गया। फसल वृद्धि चक्र के दौरान गन्ने के टुकड़े के अंकुरण और जैवभार गतिकी पर उनके प्रभाव की पुष्टि करने के लिए प्रत्येक यौगिक की दो खुराक @ 50 और 100 *पीपीएम* को उनके कृषि भूमि मूल्यांकन के लिए आगे बढ़ाया गया। एच–ए अवस्थांतरण, प्रारंभिक पौधों की संख्या, किल्लों की संख्या और जैवभार/प्रकाशसंश्लेष्य संचय ने संकेत दिया कि अंकुरण और जैवभार/प्रकाश संश्लेषण गतिशीलता में अधिकतम सुधार एनएए के साथ हुआ। औसत प्रारंभिक पौधों की संख्या पानी के साथ उच्चतम (85,000 पौधा/हेक्टेयर) थी, उसके बाद *एनएए* / 50 और 100 *पीपीएम*। जैवभार/प्रकाशसंश्लेष्य जैवभार/प्रकाशसंश्लेष्य स्वरूप 180 *डीएपी* तक समान रहा, हालांकि 210 *डीएपी* पर, *एनएए* के दोनों खुराक में किल्लों की संख्या में गिरावट आई थी। इथ्रेल सभी खुराकों मे सभी यौगिकों के तुलना मे जैवभार/प्रकाशसंश्लेष्य संचय करने मे बेहतर पाया गया। गन्ने की लंबाई, परिधि, पोरों की संख्या एवं वजन, जड़ों की संख्या एवं लंबाई, जड़ के बालों की संख्या और गन्ने के वजन एवं अन्य जैव विशिष्टता समान प्रचलन दिखाये, जिसमें इथ्रेल के साथ अधिकतम प्रभाव के साथ *एनएए* @ 50 और 100 *पीपीएम* पाया गया।

गन्ने के खरपतवार और 'बी–भारी' शीरे से इथेनॉल की परता बढ़ाने की प्रक्रिया विधि का उन्नतिकरण

गन्ना मूल से उत्पन पताई, गन्ने का एक *लिग्नोसेल्यूलोजिक* घटक, β भारी शीरे के साथ, इथेनॉल उत्पादन के लिए एक कुशल कच्चे माल का काम कर सकता है। गन्ने की पताई के रसायनिक पूर्व उपचार प्रक्रियाओं को विकसित करने के उद्देशय को प्राप्त करने के लिए, गन्ने के खरपतवार और बी भारी शीरे का संरचना विश्लेषण किया गया। कार्बन संख्या 5 व 6 वाले शर्करा यौगिक से संबंधित विश्लेषण किया गया।

गन्ना की सूखी पत्ती का उपयोग, तीन मुख्य अंशों (सेल्युलोज, हेमिसेल्युलोज और लिग्निन) द्वारा गठित एक कम लागत वाली लिग्नोसेल्यूलोसिक सामग्री जो कि पारिस्थितिक और आर्थिक लाभ का एक अच्छा स्रोत है। कच्चे माल को प्रशोधन किया गया और 0.5 मि.मी. से कम आकार वाले कणों के अंशों को समरूप और संग्रहीत किया गया। ग ख प को विभिन्न अम्ल विघटन के माध्यम से विघटित किया गया। 125 डिग्री सेल्सियस पर शुष्क भार के आधार पर 1 ग्राम ग ख प /10 ग्राम पानी (*एसडब्ल्यूआर*) युक्त घोल में 1, 3, 5 और 7% सांद्रता के साथ फॉस्फोरिक एसिड विघटन से अधिकतम किण्वन योग्य शर्करा (कि श) प्राप्त हुई। फॉस्फोरिक एसिड सांद्रता के तहत प्रतिक्रिया समय 0–240 मिनट के बीच पाई गई। सतही पदार्थ के अलगाव से, ग्लूकोज, जाइलोज और अरबीनोज प्राप्त हुए। गुटिका ने शुष्क आधार पर घुलनशील अंश का निर्धारण किया। 240 मिनट पर 4% अम्ल सांद्रता पर जाइलोज, अरबीनोज और ग्लूकोज के लिए शर्करा सांद्रता उच्चतम थी। पेन्टोज (जाइलोज, अरेबिनोज) सांद्रता (पी) और कुल शर्करा (अरबिनोज, ग्लूकोज, जाइलोज) सांद्रता (s) अम्ल सांद्रता और प्रतिक्रिया समय के साथ बढ़ी। कम प्रतिक्रिया समय (60 मिनट) पर, अम्ल की सांद्रता अधिक थी, जबकि सल्फर की परता कम थी।

गन्ने में नगी की कगी और उत्पादकता के संबंध में सिलिका अनुप्रयोग का मूल्यांकन

सिलिका अनुप्रयोग पति आवरण एवं जड़ शुष्क वजन में सुधार करता है। इसके अलावा, यह पाया गया कि सिलिका अनुप्रयोग से कलिकाओं के अंकुरण, जड़ और पत्ती आवरण के वजन में बढ़ोतरी होती है, जो कि कठोरता प्रदान करता है, इस प्रकार पौधों को रोग और कीट के हमले के खिलाफ कुछ प्रतिरोध को सक्षम करने के लिए कठोरता या बाह्य आवरण प्रदान करता है।

कार्यिकी–जैव रासायनिक अध्ययनों के माध्यम से गन्ने में शर्करा संचय और जल उपयोग तंत्र को समझना

अंकुरण 19.3 (को 0238) से 28.7 (कोपंत 97222) प्रतिशत तक कलिका के आधार पर दर्ज किया गया, 120 *डी ए पी* पर अधिकतम पौधों की आबादी कोलख 8001 में दर्ज की गई थी। 180 *डीएपी* पर अधिकतम गन्ना लंबाई कोलख 09204 (218 सें. मी.) और सबसे कम कोलख 9709 (169 सें.मी.) द्वारा प्राप्त की गई थी। शुष्क पदार्थ विभाजन (180 *डीएपी*) से पता चला कि को पीके 05191 ने प्रति गन्ना अधिकतम जड़ जैवभार प्राप्त किया। उसके बाद कोलख 11206 जबकि प्रति गन्ना अधिकतम पत्ती भार को 0238 और कोलख 09204 द्वारा प्राप्त किया गया। जूस के विश्लेषण से पता चला कि रस की मात्रा 39 से 55% के बीच थी जबकि शर्करा की मात्रा 11.04 से 14.23% थी। अगले वर्ष में सभी जीनोटाइप का मूल्यांकन 180 *डीएपी* पर उनकी प्रकाश संश्लेषक विशेषताओं और जल उपयोग दक्षता (*डब्ल्यूयूई*) के लिए किया गया था। अधिकतम प्रकाश संश्लेषण दर बीओ 91 (23.9 मा मोल/मी 2/से) में दर्ज की गई थी, जो कोलख 8102 (22.6 मा मोल/मी 2/से) के बराबर थी, जबकि वाष्पोत्सर्जन दर अधिकतम और कोलख 8001 (12.2 मी मोल/मी^{2}/से) के बराबर थी। तात्कालिक और आंतरिक पत्ती जल उपयोग दक्षता की भी गणना की गई और गन्ना किस्मों के बीच महत्वपूर्ण भिन्नता देखी गई। बीओ 91 की तात्कालिक पत्ती जल उपयोग दक्षता अधिकतम (2.8 मा मोल/मी मोल) थी और को 0238 (2.6 मा मोल/मी मोल), कोलख 94184 (2.5 मा मोल/मी मोल) और कोलख 11206 (2.3 मा मोल/मी मोल) के बराबर थी।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

अखिल भारतीय समन्वित गन्ना अनुसंधान परियोजना द्वारा विकसित मुख्य गन्ना उत्पादन प्रौद्योगिकियों का गन्ना उपज एवं आय–वृद्धि में योगदान

अश्विनी दत्त पाठक, सत्यानंद सुशील, सुधीर कुमार शुक्ल, संजय कुमार यादव, गया करन सिंह, आदिल जुबैर एवं अम्बरीश कुमार साहू

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना भारत की अत्यंत महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसलों में से एक है जो शर्करा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु चीनी मिलों तथा असंगठित क्षेत्र के गुड़ व राब उत्पादन वाली इकाइयों आदि के लिए कच्चे मूल–पदार्थ के रूप में प्रयोग की जाती है। भारत में 49.9 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर, 80.10 टन/हेक्टेयर उत्पादकता के साथ 39.98 करोड़ टन गन्ने का उत्पादन होता है। गन्ना उपज का वर्तमान स्तर प्राप्त करने में अखिल भारतीय समन्वित गन्ना अनुसंधान परियोजना (*ऐक्रिप*, गन्ना) द्वारा विभिन्न गन्ना उत्पादन क्षेत्रों के अनुकूल विकसित उच्च– गुणवत्तायुक्त गन्ना किस्मों एवं गन्ना उत्पादन प्रौद्योगिकियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। *ऐक्रिप* (गन्ना) के प्रारम्भिक चरण (1970– 71) में गन्ने की उत्पादकता 48.32 टन/हेक्टेयर के स्तर पर थी तथा घरेलू चीनी की मांग और आपूर्ति में भारी अंतर था, जिससे देश की चीनी की मांग को पूरा करने के लिए आयात पर निर्भर रहना पड़ता था।

गन्ना उत्पादन के सभी पहलुओं पर अनुसंधान को तेज करने और राष्ट्रीय स्तर पर एक सुदृढ़ मंच प्रदान करने के लिए भाकृअनुप, नई दिल्ली द्वारा चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (वर्ष 1970–71) में भाकृअनुप के संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, राज्य सरकार विभाग और गैर–सरकारी संगठन के गन्ना शोध केन्द्रों के *नेटवर्क* से अखिल भारतीय समन्वित गन्ना अनुसंधान परियोजना शुरू की गई। वर्तमान समय में उन्नत गन्ना किस्मों एवं फसल उत्पादन व सुरक्षा प्रौद्योगिकी के शोधकार्य और बहु–स्थानिक परीक्षणों के लिए 22 नियमित केंद्र और 17 स्वैच्छिक केंद्र हैं। यह परियोजना देश के सभी पांच गन्ना उत्पादक क्षेत्रों यथा– उत्तर–पश्चिम, उत्तर–मध्य, उत्तर–पूर्व, पूर्वी–तटीय और प्रायद्वीपीय क्षेत्रों के अनुकूल गन्ना किस्मों और अच्छी तरह से परीक्षण की गई प्रौद्योगिकियों को विकसित करने के लिए कार्यरत है।

कार्य प्रणाली एवं विस्तार

परियोजना के अतंर्गत, पाँचों गन्ना उत्पादन परिक्षेत्रों में अवस्थित कृषि विश्वविद्यालयों तथा परिषद व अशासकीय संगठनों के शोध संस्थानों के अंतर्गत अवस्थित शोध केन्द्र कार्यरत हैं। इन केन्द्रों द्वारा परियोजना की द्विवार्षिक कार्यशालाओं/समूह बैठकों में निर्धारित किए गए शोध कार्यक्रमों को लागू किया जाता है। अखिल भारतीय स्तर पर शोध कार्यक्रमों को लागू करना, परिषद द्वारा स्वीकृत वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना एवं परिषद् के नियमानुसार कार्य निष्पादन में परियोजना समन्वयक (गन्ना) की प्रमुख भूमिका रहती है। कार्यशालाओं एवं समूह बैठकों के आयोजन की जिम्मेदारी परियोजना समन्वयक की होती है तथा निर्धारित शोध कार्यक्रमों को विभिन्न शोध केन्द्रों को प्रेषित करके उनकी प्रगति आख्या, परियोजना समन्वयन इकाई में संकलित कर पुनरीक्षित किया जाता है। परिषद द्वारा जारी नियमों/मार्गदर्शन सभी शोध केन्द्रों को समय–समय पर कार्यान्वयन हेतु प्रेषित किया जाता है। परियोजना की समन्वयन इकाई भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में अवस्थित है जबकि इसके अंतर्गत शोध केन्द्र विभिन्न गन्ना उत्पादक राज्यों में अवस्थित हैं (सारिणी–1)।

सारणी 1. विभिन्न प्रदेशों में अवस्थित नियमित एवं ऐच्छिक केन्द्र

उत्तर पश्चिमी परिक्षेत्र	पंजाब, हरियाणा पश्चिमी एवं मध्य उत्तर प्रदेश
उत्तर मध्य परिक्षेत्र	पश्चिम उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल
उत्तर पूर्वी परिक्षेत्र	असम और नागालैंड
पूर्वी तटीय परिक्षेत्र	ओडिशा, तटीय आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडु
प्रायद्वीपीय परिक्षेत्र	महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात,मध्य प्रदेश, केरल, आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडु

ऐक्रिप (गन्ना) शोध केंद्रों की भागीदारी के माध्यम से देश के सभी गन्ना उत्पादक क्षेत्रों के लिए अनुशंसित पैकेज विकसित किए गए हैं। इसके अलावा, कम लागत वाली प्रौद्योगिकियों पर भी जोर दिया गया है और देश के सभी गन्ना उत्पादक क्षेत्रों के लिए कई तकनीकों की भी संस्तुतियाँ की गई है। *ऐक्रिप* (गन्ना) के अंतर्गत मुख्यतः चार पहलुओं को शामिल किया गया है, (अ) किस्म विकास के माध्यम से फसल सुधार (ब) उच्च गन्ना उपज को बनाए रखने और उत्पादन लागत को कम करने के लिए उन्नत तकनीक (स) एकीकृत पौध–व्याधि और कीट विज्ञान के माध्यम से फसल सुरक्षा। संक्षेप में, गन्ने के उपरोक्त पहलुओं पर विकसित प्रौद्योगिकियां निम्नानुसार हैं:

मुख्य उपलब्धियाँ

(अ) समुन्नत गन्ना किस्मों का विकास

गन्ने की उत्पादकता वृद्धि में उन्नत गन्ना किस्मों एवं स्वस्थ

रोपण सामग्री का महत्वपूर्ण योगदान है। *ऐक्रिप* (गन्ना) परियोजना के अंतर्गत विकसित उन्नत किस्मों के कारण भारत में गन्ने की उत्पादकता में समय के साथ काफी वृद्धि हुई है। गन्ने की उन्नत किस्में बड़ी संख्या में विकसित की गई हैं और इन्हें किसानों द्वारा व्यापक रूप से अपनाया गया है। परियोजना के अनुसंधान कार्यक्रमों को अधिदेश के सदृश तय किया जाता है और *ऐक्रिप* (गन्ना) की द्विवार्षिक कार्यशाला तथा समूह बैठकों में वार्षिक समीक्षा की जाती है। किस्म विकास के प्रमुख कार्यक्रम के तहत गन्ना उत्पादकों की जरूरतों को पूरा करने के लिए कुल 136 गन्ना किस्मों को विकसित किया गया है। परिणामस्वरूप भारत में गन्ने एवं चीनी की उत्पादकता में आशातीत सुधार हुआ है।

देश के कई हिस्सों में सामान्य तौर पर गन्ने की व्यावसायिक फसल को ही बीज के लिए प्रयोग किया जाता है। जबकि फसल की उपज–वृद्धि को टिकाऊ बनाए रखने के लिए गुणवत्ता रोपण सामग्री का उपयोग करना आवश्यक है। विभिन्न परिक्षेत्रों के लिए कुछ महत्वपूर्ण गन्ना किस्मों को सारणी 2 में दर्शाया गया है।

अधिक उपज वाली मुख्य गन्ना किस्मों का संक्षिप्त विवरण

अगेती किस्में

को 0237 (करन–8)–इसका गन्ना मध्यम मोटा तथा पीले रंग का होता है। यह लाल सड़न रोग से प्रतिरोधी किस्म है। 70 टन प्रति हेक्टेयर उपज क्षमता के साथ इसमें 18.75% शर्करा है।

को 98014 (करन–1)–इसका गन्ना मध्यम पतला, हरापन लिए हुए पीले रंग का होता है। यह लाल सड़न रोग से प्रतिरोधी किस्म है। यह किस्म कम उपजाऊ भूमि व जल भराव की स्थितियों में भी अच्छी पैदावार देती है। यह किस्म 75 टन प्रति हेक्टेयर गन्ना उपज, 17.5 % शर्करा देने में सक्षम है।

को 05009 (करन–10)–यह किस्म लाल सड़न रोग के प्रति मध्यम अवरोधी है। इसकी उपज 70–75 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 17–18% है।

को श0 96268 (मिठास)–इसका गन्ना मध्यम पतला तथा हल्का पीलापन लिए हुए हरे रंग का होता है। यह किस्म लाल सड़न रोग के प्रति मध्यम अवरोधी है। इसकी उपज 70 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा परता 18% है।

सारणी 2 विभिन्न परिक्षेत्रों के लिए कुछ महत्वपूर्ण गन्ना किस्में

परिक्षेत्र	अगेती	मध्य–पिछेती किस्में
प्रायद्वीपीय	को 85004, को 94008,को 0403, कोशंक 05103, को 09004, को 10026, एमएस 13081	को 86032, को 87025,को 87044, को 8371, कोएम 7714, को एम 88121,को 91010, को 99004, को 2001–13, को 2001–15, को 0218, को 06027, कोशंक 05104, को 12009, वीएसआई 12121, को 13013
पूर्वी तटीय परिक्षेत्र	कोशा 01061, कोउ 03151, कोए 08323, सीओसी 08336, कोए 11321	को 86249, को 06030, सीओसी 13339, कोए 05323
उत्तर पश्चिमी परिक्षेत्र	कोह 92201, कोशा 95255, को 98014, कोशा 96268, को 0118, को 0238, को 0237, कोपीके 05191,को 05009, को 15023, कोशा 12029	कोशा 91230, कोपंत 90223, कोशा 94270, कोएच 119, कोपंत 97222,कोजे 20193, कोएस 96275, को 0124, कोह 128, को 05011, को 06034, कोशा 12232, कोलख 09204, कोलख 11206
उत्तरी मध्य एवं उत्तर पूर्वी परिक्षेत्र	को 87263, को 87268, को 89029, कोसे 95422, कोसे 96234,कोलक 94184, कोसे 01421, को 0232, कोलख 12207, यूपी 09453	बीओ 128, कोसे 92423, को 0233, कोपन्त 06436 (कोपन्त 2061), कोपी 09437, कोलख 12209,

को पीके 05191–इसका गन्ना मध्यम मोटाई का होता है। यह किस्म लाल सड़न रोग के प्रति मध्यम अवरोधी है। यह सूखा एवं जलप्लावित क्षेत्रों के लिए भी उपयुक्त पाई गई है। इसकी उपज 85–90 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 17% है।

एमएस 13013 (फूले 10001)– यह किस्म प्रायद्वीपीय क्षेत्र में पतझड़ और बसंत ऋतु में रोपण के लिए उपयुक्त है। यह प्रायद्वीपीय क्षेत्र में प्रचलित उष्णकटिबंधीय जलवायु परिस्थितियों में अच्छी तरह से बढ़ता है। इसकी उपज 118.51 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 19.78% है।

को. 10026 (उपहार): इस किस्म के गन्ने में, शुष्कता व लवणता के प्रति सहिष्णुता पायी जाती है। इस किस्म के गन्नों में, लाल सड़न रोग व गन्ने की पीली पत्ती (*वाई.एल.डी.*) रोग के प्रति प्रतिरोधकता पायी जाती है। इसकी उपज 109.06 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 17.98 % है।

को. 06022: इस किस्म के गन्ने उच्च उपज देने के साथ ही लवणता के प्रति सहिष्णुता का गुण रखते हैं। इसकी उपज 105.23 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 18.88 % है।

को. 09004 (अमृता): इस किस्म के गन्ने में, शुष्कता व लवणता के प्रति सहिष्णुता पायी जाती है। इसकी उपज 109.85 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 18.99% है।

यूपी 09453: यह किस्म जलप्लावित दशा के लिए उपयुक्त पायी गयी है। इसकी उपज 74.74 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 17.90% है।

को.ए. 08323 (बुद्धी): यह किस्म, सिंचित, सीमित सिंचित व वर्षा आधारित स्थितियों के लिए उपयुक्त तथा उत्तम पेड़ी फसल देने वाली है। इसकी उपज 106.30 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 16.41% है।

को. 15023 (करन–15) – इस किस्म की गन्ने की उपज 89.17 टन प्रति हेक्टेयर एवं शर्करा 19.41 प्रतिशत है। लाल सड़न के खिलाफ प्रतिक्रिया मध्यम प्रतिरोधी है

मध्य देर से पकने वाली गन्ना किस्में

कोपंत 97222– इसका गन्ना मध्यम मोटाई तथा हल्के हरे रंग का होता है। यह लाल सड़न के प्रति मध्यम रोग रोधी है। इसकी उपज 80–85 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 17.0% है।

को.शा. 96275 (स्वीटी)– इसका गन्ना मध्यम पतला तथा हल्का पीलापन लिए हुए हरे रंग का होता है। यह लाल सड़न रोग के प्रति मध्यम अवरोधी है। इसकी उपज 80 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 17.5% है।

को. 0124 (करन–5) – इसका गन्ना मध्यम मोटाई तथा पीला रंग लिए हुए होता है। यह लाल सड़न रोग से प्रतिरोधी किस्म है। इसकी उपज 75 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 18% है।

कोह 128 – यह किस्म लाल सड़न रोग के प्रति मध्यम अवरोधी है तथा पेड़ी उत्तम होती है। इसकी उपज 80–85 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 16.5–17.5% है।

को. 05011 (करन–9)–इसका गन्ना मध्यम मोटाई का होता है। यह किरम लाल सड़न रोग के प्रति मध्यम अवरोधी है। इसका पेड़ी बहुत ही उत्तम होती है। इसकी उपज 75.8 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 17–18% है।

कोलख 09204 (इक्षु–3): इसमें कंडुआ व लाल सड़न रोग के प्रति प्रतिरोधकता से मध्यम प्रतिरोधकता पायी गयी है। परिपक्वता तक फसल हरी–भरी रहने के कारण, किसानों को हरे चारे का अतिरिक्त लाभ मिलता है। यह किस्म कई पेड़ी फसलें प्राप्त करने हेतु उपयुक्त पायी गयी है। इसकी उपज 82.80 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 17–18% है।

वीएसआई 12121– यह किस्म पतझड़ और बसंत ऋतु में रोपण के लिए उपयुक्त है। यह किस्म सूखे और लवणता के दबाव के प्रति सहनशील है। इसकी उपज 124.70 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 20.7% है।

को. 12029 (करण–13): इस किस्म के गन्ने में, शुष्कता व लवणता के प्रति सहिष्णुता पायी जाती है। यह किस्म शरद् व बसंतकालीन ऋतुओं में बुआई हेतु उपयुक्त है। इसकी उपज 95.57 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 18.10% है।

को. 13013 (अक्षया)– यह किस्म सूखे और लवणता की स्थिति के प्रति सहिष्णु है। प्रायद्वीपीय क्षेत्र में अजैविक तनाव को सीमित करने वाली प्रमुख उपज है। लाल सड़न के खिलाफ प्रतिक्रिया मध्यम प्रतिरोधी थी। इसकी उपज 121.96 टन प्रति हेक्टेयर तथा शर्करा 19.1% है।

(ब) फसल उत्पादन

उन्नत किस्मों की क्षमता के अनुसार उत्पादन ले पाना तभी संभव है जब उनके लिए उचित फसल ज्यामिति तथा अनुकूल जल एवं मृदा प्रबंधन उपलब्ध हों। गन्ने की आंख के समुचित अंकुरण, जड़ों के विकास तथा फसल की बढ़वार के लिए मृदा का उचित आभासी घनत्व तथा जल धारण क्षमता अधिक होनी चाहिए। मृदा के भौतिक गुणों में सुधार के लिए प्राथमिक कर्षण किया के तौर पर *'सब–स्वायलर'* द्वारा एक मीटर के अंतराल पर 45 से 50 सें.मी. गहरी आड़ी–बेड़ी जुताई करने से लगभग 12 प्रतिशत अधिक गन्ना उपज प्राप्त की गई है। इसी क्रम में उपयुक्त बुवाई विधियॉ, सूक्ष्म सिंचाई विधियाँ, जल का मितव्ययी उपयोग, समेकित पोषक तत्व प्रबधंन एवं विभिन्न गन्ना आधारित फसल प्रणालियों का विकास प्रमुख है।

गन्ना बुवाई की उन्नत विधियाँ

विभिन्न बुवाई विधियों में कूँड़ विधि, समतल विधि, गड़ढ़ा विधि, नाली विधि आदि विभिन्न परिस्थितियों हेतु विकसित की गई हैं। इनमें नाली विधि व गड़ढा विधि द्वारा अधिक उपज प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की गई है। वर्तमान में नाली विधि द्वारा गन्ना बुवाई के प्रचलन में उत्तरोत्तर वृद्वि हो रही है क्योंकि इससे संसाधन उपयोग क्षमता व लाभ लागत अनुपात में सुधार पाया गया है। इसके अतिरिक्त पेड़ी फसल से भी अधिक उपज प्राप्त होती है। इसमें गन्ने की बुवाई 30 सें.मी. चौड़ी एवं 20–30 सें.मी. गहरी नालियों में की जाती है। एक नाली में गन्ने की दो पंक्तियों में बुवाई की जाती है। उपोष्ण क्षेत्रों में नालियों की केंद्र से केंद्र की दूरी 120 सें.मी. (90:30 सें.मी.) रखी जाती है। सिंचाई जल को अधिक समय तक ग्रहण करने के कारण इस विधि से सिंचाई जल में कमी की जा सकती है। जड़ों की गहराई तथा वृद्धि अधिक होने से समतल विधि की अपेक्षा इस विधि से लगभग 30 प्रतिशत तक गन्ने की उपज अधिक प्राप्त होती है।

फर्ब विधि द्वारा गेहूँ + गन्ना फसल पद्धति

गेहूँ की फसल के बाद लगाये गये गन्ने की उपज में लगभग 35 से 50 प्रतिशत की कमी हो जाती है। शरदकालीन गन्ने के साथ गेहूँ की बुवाई से गन्ने की उपज में आने वाली कमी को दूर

करके प्रति इकाई उपज एवं आय में वृद्धि की जा सकती है। *फर्ब* विधि (चित्र 1) द्वारा *रेज्ड बेड* पर जो कि लगभग 50 सें.मी. चौड़ी होती है, गेहूँ की तीन पंक्तियों की बुवाई 17 सें.मी. की दूरी पर नवम्बर या दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में की जाती है। *रेज्ड बेड* व नालियाँ बनाने के लिए ट्रैक्टर चालित *रेज्ड बेड* मेकर *कम फर्टी सीड ड्रिल* का प्रयोग किया जा सकता है जो *रेज्ड बेड* व नालियां बनाने के साथ–साथ खाद डालने व गेहूँ बोने का काम भी सम्पन्न करता है।

चित्र 1. *फर्ब* विधि द्वारा गन्ना + गेहूँ की बुवाई

गन्ने की बुवाई नवम्बर माह में नालियों में गेहूँ बोने के तुरंत बाद दी जाने वाली हल्की सिंचाई के साथ कर देते हैं। गन्ने के टुकड़ों को सिंचित नालियों में डालते हुए पैर से दबाते हुए चलते हैं। दिसंबर माह में बोई जाने वाली गेहूँ की दशा में गन्ने की बुवाई गेहूँ की खड़ी फसल में नालियों में फरवरी माह में की जाती है जो कि उपोष्ण कटिबन्धीय भारत में बसन्तकालीन गन्ना बोने का उपयुक्त समय है। गन्ने की बुवाई गेहूँ में सिंचाई के साथ की जाती है। गेहूँ में सिंचाई सायंकाल की जाती है तथा दूसरे दिन जब मिट्टी फूल जाती है तथा हल्का पानी नालियों में रहता है तब गन्ने के दो या तीन आँखों वाले टुकड़ों को डालकर पैरों से कीचड़युक्त नालियों में दबाते हुए चलते हैं। गन्ने की बुवाई के बाद की सिंचाई गेहूँ की आवश्यकता के अनुसार नालियों में की जाती है तथा गेहूँ की कटाई के बाद भी इन नालियों को सिंचाई के लिए उपयोग में लाया जाता है।

परम्परागत विधियों द्वारा बुवाई करने पर बीज गन्ना की प्रयुक्त मात्रा (6–8 टन/हे.) को कम करने तथा उन्नत बीज गन्ना के त्वरित बहुगुणन के उद्देश्य से विकसित की गयी गाँठ विधि एक अच्छा विकल्प साबित हो रही हैं क्योंकि इसमें बीज गन्ना की मात्रा 1.5 से 2.0 टन ही एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होती है। इस विधि में सिर्फ गन्ने की एक गांठ ही बीज के रूप में प्रयोग होती है। कम मात्रा से बीज की ढुलाई की सुविधा रहने के अलावा, बीज उपचार में भी आसानी रहती है। इस विधि द्वारा पेराई योग्य गन्ने एवं गन्ना उपज में भी वृद्वि आंकी गयी हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

गन्ना एक बहुवर्षीय व्यावसायिक फसल है जो कि काफी अधिक मात्रा में जैव–पदार्थ उत्पादित करती है। इसलिए गन्ना आधारित फसल उत्पादन प्रणाली में पोषक तत्व प्रबंधन एक प्रमुख पहलू है। गन्ने की फसल से 100 टन/हे. उपज प्राप्त करने के लिए नत्रजन 208 कि.ग्रा., 55 कि.ग्रा. फास्फोरस 280 कि.ग्रा. पोटेशियम, 30 कि.ग्रा. गंधक, 3.5 कि.ग्रा. लौह तत्व, 1.2 कि.ग्रा. मैंगनीज, 0.6 कि.ग्रा. जस्ता मृदा से अवशोषित होता है। इन तत्वों को मृदा में लगातार प्रतिपूर्ति करते रहना आवश्यक है। पोषक तत्वों पर आधारित शोध परिणामों से ज्ञात हुआ कि उत्तम गन्ना उपज के लिए 112 से 300 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर नत्रजन की आवश्यकता होती है जो कि उत्तरी क्षेत्र (उपोष्ण) में कम तथा दक्षिणी क्षेत्र (उष्ण) में अधिक होती है। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन प्रणाली जिसमें हरी खाद के रूप में ढैंचा तथा अन्तः फसली खेती में दहलनी फसलों का समावेश किया जाना चाहिए। जैव उर्वरक (नत्रजन स्थिरीकारक, फास्फेट विलायक जीवाणु तथा पौटेशियम विलायक) आदि का प्रयोग करने से अकार्बनिक खादों के प्रयोग में कमी की जा सकती है तथा गन्ना उपज भी प्रभावित नहीं होती।

रासायनिक उर्वरकों और जैविक खादों के युक्तिसंगत एकीकृत प्रयोग से मृदा और गन्ना की उत्पादकता के साथ–साथ मृदा के उपजाऊपन और स्वास्थ्य को दीर्घकाल तक बेहतर रख सकते हैं। यह फसल उत्पादकता, मृदा उर्वरता और स्वास्थ्य सुधारने एवं कायम रखने में सहायक है। इससे–

- नत्रजन, फास्फोरस और पौटेशियम के अतिरिक्त मृदा में अन्य पोषक तत्वों जैसे गन्धक और सूक्ष्म–मात्रिक पोषक तत्वों की उपलब्धता में कमी को रोकने में सहायता मिलती है।
- उर्वरकों के प्रयोग में उपयोग कार्य क्षमता में वृद्धि, बचत और आर्थिक लाभ प्राप्त करने में सहायता मिलती है।
- मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार होता है।

दलहनी फसल गन्ने की खेती में हरी खाद/दाल/चारा हेतु या तो अनुक्रम में या अन्तः फसल के रूप में उगाई जाती है। मृदा उत्पादकता बढ़ाने के लिए शरद्कालीन गन्ना के साथ मटर, मसूर, मेथी और बसन्तकालीन गन्ने के साथ मूँग, लोबिया, उड़द आदि अन्तः फसल के रूप में लेना अच्छा विकल्प हैं।

खरपतवार प्रबंधन

गन्ने की फसल में किल्ले बनने की अवस्था में खरपतवारों की मौजूदगी से पेराई–योग्य गन्नों की संख्या तथा वजन में कमी आती है जिससे गन्ना उपज घट जाती है। खरपतवार प्रबंधन कियाओं में पाया गया कि एट्राजीन नामक रसायन की 2 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर (जमाव पूर्व) के पश्चात् 2, 4–डी की 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व मात्रा (जमाव पश्चात्) तथा उसके बाद एक बार अच्छी प्रकार से निराई–गुड़ाई करने से प्रभावी रूप से खरपतवार नियंत्रण हो जाता है जिससे गन्ना उपज में आशातीत

वृद्वि होती है। पेड़ी गन्ने में पताव बिछावन से भी प्राकृतिक रूप में खरपतवार नियंत्रण हो जाता है।

जल प्रबंधन

गन्ने की फसल में लगभग 200 से 300 सें.मी./वर्ष/हेक्टेयर पानी की आवश्यकता होती है। शोधों कार्यो में पाया गया कि पताव बिछावन, एकान्तर नाली विधि तथा चिन्हित की गई विभिन्न कांतिक अवस्थाओं में जल उपलब्धता के अनुसार सिंचाई करने से गन्ना उपज में वृद्वि होती है तथा जल उपयोग क्षमता भी अच्छी रहती है। इसके अतिरिक्त, सूक्ष्म सिंचाई विधियों में टपक सिंचाई विधि से काफी अच्छे परिणाम मिले हैं। इसी के साथ उचित पोषक तत्वों को भी पौधों में दिया जा सकता है। इस विधि से पेड़ी की फसल बहुत अच्छी होती है तथा जल एवं पोषक तत्वों की हानि नहीं होती है।

(स) फसल सुरक्षा

गन्ने की व्यावसायिक खेती की बुवाई इसके वानस्पतिक भाग द्वारा होने के कारण बीज गन्ना को रोगाणु संक्रमण से सर्वथा मुक्त होना अति आवश्यक है। इसलिए प्रजातियों के विकास कार्यक्रम में गन्ने की प्रमुख बीमारियों यथा–लाल सड़न, कॅडुवा एवं उकठा आदि के प्रति रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास एवं परीक्षण कार्यक्रम प्रजाति प्रजनन कार्यक्रम का अभिन्न अंग होता है। इस प्रकार गन्ने की उन्नत किस्मों में रोग प्रतिरोधकता का गुण आवश्यक होता है। इस कार्यक्रम के तहत परियोजना में निम्नलिखित कार्यक्रम प्रगति पर हैं :

- लाल सड़न रोग के रोगाणुओं की पहचान करने की विधियॉ विकसित करना
- लाल सड़न, कॅडुवा, उकठा एवं पीली पत्ती बीमारी आदि रोगों के प्रति प्रजातियों की छॅटनी करने की विधियॉ
- समन्वित पौध बीमारी प्रबंधन कार्यक्रम आदि मुख्य हैं ।

गन्ने की फसल को विभिन्न कीट–व्याधियों से मुक्त रखने के लिए समन्वित कीट प्रबंधन तकनीक विकसित की गई हैं। विभिन्न परिस्थितियों में कीटों के प्रबंधन के तौर–तरीके भी विकसित किए गए हैं। *मीली बग* कीट का 70 डब्लू जी/एसपी 25 ग्राम सक्रिय तत्व या थाईमिथोकशाम 70 डब्लू जी/एसपी 25 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर (36 ग्राम पदार्थ 150 ली. पानी) में बीजोपचार के उपरान्त इमीडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 0.05 प्रतिशत की दर से गन्ना बनने की अवस्था में छिड़काव करने से प्रभावी रूप से नियंत्रण हो जाता है। इसी प्रकार सफेद मक्खी के लिए गन्ने की निचली पत्तियों को निकालना और इमीडाक्लोप्रिड 0.005 प्रतिशत + 2 प्रतिशत यूरिया का पर्णीय छिड़काव संस्तुत किया जाता है। इसमें सर्वप्रथम यूरिया का विलयन बनाने के पश्चात् इमिडाक्लोप्रिड को मिलाना चाहिए। ऊनी माहू प्रबंधन के लिए *डिफा एफिडीवोरा, माइक्रोमस इगोरोटस* तथा *कायसोपर्ला कार्निया* खेत में छोड़ना चाहिए। यद्यपि जरूरत के मुताबिक इमिडाक्लोप्रिड 200 एसएल 100 ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हे. की दर से या क्लारोपाइरीफास 20 ईसी 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या आक्जीडिमेटान मिथाइल 25 ईसी 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व की दर से प्रयोग करना संस्तुत किया जाता है।

पेड़ी गन्ना प्रबंधन

देश के कुल गन्ना क्षेत्र के लगभग आधे भाग में पेड़ी गन्ना, प्रथम/द्वितीय पेड़ी के रूप में आच्छादित रहता है। कम लागत के अतिरिक्त पेड़ी गन्ने का मुख्य योगदान, प्रारंभिक पेराई सत्र के समय पर्याप्त चीनी परता देना एवं पेराई सत्र को शीघ्र चालू कराने में भमिका से है। पेड़ी गन्ने की उत्पादकता बढ़ाने के लिए संस्तुत की गयी अच्छी पेड़ी उपज वाली प्रजातियों का चुनाव, गहरी जुताई द्वारा तैयार खेत में नाली विधि द्वारा समय पर बुवाई एवं बावक गन्ने की समय पर एक साथ कटाई, *आरएमडी* यंत्र द्वारा आवश्यक कर्षण कियाएं सम्पन्न करने के पश्चात् पोषण एवं जल प्रबंधन के समन्वित प्रयास, संस्तुत किफायती विधियों जैसे टपक सिंचाई विधि द्वारा सिंचाई के पानी के साथ घुलनशील खादों एवं अन्य दवाओं आदि को पौधों के सक्रिय मूल क्षेत्र में अनुकूल समय पर देना व पर्याप्त फसल सुरक्षा हेतु जैव नियंत्रण विधियों एवं रासायनिक तत्वों का उचित समय पर संस्तुत विधियों के अनुसार उन्नत पेड़ी प्रबंधन से पेड़ी उपज में पर्याप्त वृद्वि प्राप्त की जा सकती है।

निष्कर्ष

ऐक्रिप (गन्ना) *नेटवर्क* के माध्यम से उन्नत किस्मों के विकास और तकनीकी प्रगति ने उच्च गन्ना उपज बनाए रखने में प्रमुख भूमिका निभाई है। विभिन्न कृषि–जलवायु परिस्थितियों के लिए उच्च उपज और उच्च चीनीयुक्त किस्मों की मांग को शीघ्र और मध्य देर से पकने वाली गन्ना किस्मों को विकसित करके पूरा किया गया है। गन्ना आधारित फसल उत्पादन प्रणालियों के लिए उत्पादन प्रौद्योगिकियों और उच्च गन्ना उपज और मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए तकनीक विकसित की गयी हैं। सीमांत और छोटे किसानों की आय में सुधार के लिए शरद ऋतु में लगाए गए गन्ना और गेहूँ आधारित अन्तःफसल के लिए *फर्ब* विधि, पानी की आवश्यकता को कम करने के लिए *स्किप फरो* विधि और उप–सतह *ड्रिप* सिंचाई, गन्ना बीज की आवश्यकता को कम करने के लिए *केन–नोड* प्रौद्योगिकी, अंकुरण और जुताई में सुधार के लिए जिब्रेलिक अम्ल का उपयोग, एकीकृत खरपतवार प्रबंधन और पोषक तत्व प्रबंधन, रासायनिक उर्वरकों की खुराक को कम करने के लिए जैव–कारकों का उपयोग विकसित किया गया है।

उष्ण कटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों के लिए एकीकृत रोग एवं कीट प्रबंधन पर संस्तुतियाँ भी की गई हैं। *डिफा एफिडिवोरा, माइक्रोमस इगोरोटस* और *क्राइसोपरला कार्निया* के माध्यम से ऊनी माहू का जैविक नियंत्रण विकसित किया गया है। *कोटेशिया फ्लेवाइप्स* और *ट्राइकोग्रामा* के प्रयोग से भी बेधक

कीट नियंत्रित होते हैं। प्रजनन कार्यक्रम में लाल सड़न, कँडुवा और उकठा रोगों पर बहुत ध्यान दिया गया है। गन्ने में लाल सड़न का निर्धारण करने के लिए टीकाकरण विधियों (*प्लग* और *नोडल*) को भी विकसित किया गया है।

देश के गन्ना उत्पादक क्षेत्रों के लिए विकसित फसल उत्पादन और फसल सुरक्षा तकनीकों को अपनाया जा रहा है। इस प्रकार, वर्ष 2020–21 के दौरान 32.57 मीट्रिक टन चीनी के उत्पादन के अलावा इथेनॉल उत्पादन के लिए गन्ने का उपयोग भी किया गया। विगत वर्षों में गन्ना उपज एवं चीनी परता में सुधार हुआ है जिससे गन्ना एवं चीनी उत्पादन मे राष्ट्रीय स्तर पर वृद्धि आंकी जा रही है। (चित्र 2– अ, ब, स, द)।

चित्र 2. गन्ना उत्पादन प्रौद्योगिकी का गन्ना उपज एवं चीनी परता वृद्धि पर सकारात्मक रूझान

(अ) गन्ना उपज

(ब) चीनी परता

(स) गन्ना उत्पादन

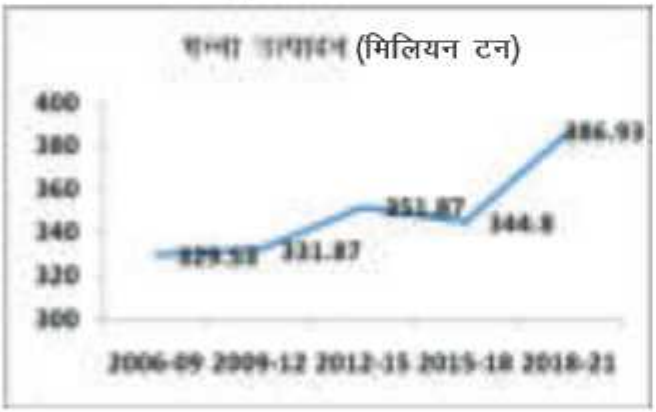

(द) चीनी उत्पादन

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। हिंदी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।

—नरेन्द्र मोदी

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

कृषि विज्ञान केन्द्र, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की उपलब्धियाँ

अखिलेश कुमार दुबे, दीपक राय, वीनिका सिंह, संजय कुमार पाण्डेय, विवेकानन्द सिंह, राकेश कुमार सिंह एवं राम लखन शाक्य

कृषि विज्ञान केन्द्र, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कृषि विज्ञान केन्द्र, भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ का एक अनुभाग है। यह केन्द्र 25 अक्टूबर 1999 को भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा एक गैर सरकारी संगठन से हस्तांतरित किया गया।

कृषि विज्ञान केन्द्र एक ऐसी महत्वाकांक्षी वैज्ञानिक संस्था है, जहाँ किसानों एवं कृषि कार्य में संलग्न महिलाओं एवं ग्रामीण युवकों/युवतियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण देने का काम किया जाता है। प्रशिक्षण मुख्यतः फसलोत्पादन, पशुपालन, उद्यानिकी, कृषि अभियान्त्रिकी, गृह विज्ञान तथा अनेक संबंधित विषयों में दिया जाता है। प्रशिक्षण की विधि कार्य करके सीखने एवं कार्य करके सिखाने के सिद्धान्त पर आधारित है। संस्था द्वारा किसानों के ही खेतों पर किसानों को शामिल करते हुए वैज्ञानिकों की देख–रेख में उन्नत तकनीकी का परीक्षण किया जाता है तथा कृषकों एवं विस्तार कार्यकर्ताओं के समक्ष आधुनिकतम वैज्ञानिक तकनीक का अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन किया जाता है। कृषि विज्ञान केन्द्र वैज्ञानिकों, विषय वस्तु विशेषज्ञों, विस्तार कार्यकर्ताओं तथा कृषकों की संयुक्त सहभागिता से कार्य करता है।

कृषि विज्ञान केन्द्र के अधिदेश – कृषि तकनीकी/उत्पाद का मूल्यांकन एवं परिमार्जन।

कृषि विज्ञान केन्द्र की गतिविधियाँ

1. किसानों के खेतों पर उन्नत तकनीकी का वैज्ञानिकों की देख–रेख में उन्हीं के द्वारा परीक्षण एवं शुद्धिकरण
2. विभिन्न फसलों का अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन एवं अन्य तकनीकी हस्तानान्तरण गतिविधियाँ
3. किसानों एवं ग्रामीण युवकों को कृषि एवं सम्बद्ध विषयों पर आवश्यकता पर आधारित व्यावसायिक प्रशिक्षण करके सीखो के सिद्धान्त पर देना ताकि वे स्वरोजगार चला सकें।
4. विस्तार कार्यकर्ताओं को आधुनिक कृषि तकनीकी का नियमित प्रशिक्षण।

उद्देश्य

- कृषि विज्ञान केन्द्र का प्रमुख उद्देश्य स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों एवं विकसित नई कृषि तकनीक का समुचित उपयोग करके किसान की प्रति इकाई आय बढ़ाना और सामाजिक एवं आर्थिक रुप से ग्रामीणों को मजबूती प्रदान करना है, जिससे क्षेत्र की सर्वांगीण प्रगति हो सके।

वरीयता कार्य क्षेत्र

फसल/उद्यम	वरीयता क्षेत्र
उर्द, मूंग, अरहर, चना	उन्नतशील प्रजातियों का प्रवेशन, समेकित फसल प्रबंधन, समेकित नाशीजीव प्रबंधन, समेकित पोषक तत्व प्रबंधन
सरसों एवं तिल	उन्नतशील प्रजातियों का प्रवेशन, समेकित फसल प्रबंधन, समेकित नाशीजीव प्रबंधन, समेकित पोषक तत्व प्रबंधन
गेहूं	उन्नतशील प्रजातियों का प्रवेशन, समेकित फसल प्रबंधन
चावल	उन्नतशील प्रजातियों का प्रवेशन, समेकित फसल प्रबंधन, समेकित नाशीजीव प्रबंधन
सब्जी मटर, टमाटर, बैगन, मिर्च, कद्दूवर्गीय सब्जियाँ, गोभीवर्गीय सब्जियाँ, प्याज, आदि	उन्नतशील प्रजातियों का प्रवेशन, समेकित फसल प्रबंधन, समेकित नाशीजीव प्रबंधन, समेकित पोषकतत्व प्रबंधन
आलू	समेकित फसल प्रबंधन, समेकित नाशीजीव प्रबंधन, समेकित पोषक तत्व प्रबंधन
आम	समेकित फसल प्रबंधन, समेकित नाशीजीव प्रबंधन, समेकित पोषकतत्व प्रबंधन
बरसीम, ज्वार, बहुवर्षीय चारा फसलें आदि	उन्नतशील प्रजातियों का प्रवेशन, समेकित फसल प्रबंधन
पशुपालन एवं उसका प्रबंधन	रोग प्रबंधन, पशु पोषण प्रबंधन
महिला सशक्तिकरण	पोषक वाटिका का प्रवेशन, मूल्यवर्धन, श्रम शक्ति का प्रबंधन, कशीदाकारी, छत पर गृह वाटिका

संसाधन केंद्र के रूप में केवीके : कृषि विज्ञान केंद्र, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ पर युवाओं, कृषकों, महिलाओं के उद्यमिता विकास हेतु प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन हेतु मृदा परीक्षण प्रयोगशाला, *वर्मीकम्पोस्ट* इकाई, दुग्धशाला इकाई, मौन पालन इकाई, मशरूम उत्पादन इकाई, पौधशाला इकाई, फूल उत्पादन इकाई, बीज उत्पादन इकाई, बहुवर्षीय चारा उत्पादन इकाई, पोषक वाटिका इकाई, फल प्रसंस्करण इकाई, पशु चॉकलेट इकाई, एकीकृत फसल प्रणाली इकाई तथा तकनीकी पार्क जैसी विभिन्न इकाईयों की स्थापना की गयी है।

अनिवार्य गतिविधि का संक्षिप्त परिणाम

अनुकरणीय परीक्षण			अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन	
अनुकरणीय परीक्षणों की संख्या	परीक्षणों की संख्या		क्षेत्रफल (हे.)	कृषकों की संख्या
92	406		1,897.45	10,490
प्रशिक्षण			प्रसार गतिविधि	
	विषय	प्रतिभागियों की संख्या	गतिविधियों की संख्या	प्रतिभागियों की संख्या
कृषकों हेतु	1,271	28,130	8,626	2,45,296
ग्रामीण युवाओं हेतु	134	2,241		
प्रसार कार्यकर्ताओं हेतु	70	1,662		
वित्त पोषित	53	1,724		
बीज उत्पादन (कु.)			पौध सामग्री (संख्या/कु.)	
1,114.49			42,84,813	

प्रसार कार्यक्रम

कार्यक्रम	संख्या	कृषकों की संख्या	प्रसार कार्यकर्ताओं की संख्या	कुल
परामर्श सेवायें	1692	3911	135	4046
नैदानिक भ्रमण	120	2782	25	2807
प्रक्षेत्र दिवस	73	2451	35	2486
समूह वार्ता	129	2770	38	2808
किसान गोष्ठी	109	12094	45	12139
चल चित्र प्रदर्शन	143	2924	56	2980
किसान मेला	23	23604	168	23772
प्रदर्शनी	53	21416	250	21666
वैज्ञानिकों का कृषक प्रक्षेत्र पर भ्रमण	1374	12355	0	12355
विधि प्रदर्शन	143	2720	58	2778
महत्वपूर्ण दिवसों का आयोजन	86	3252	52	3304
पशु स्वास्थ्य शिविर	14	3731	55	3786
आकाशवाणी/दूरदर्शन वार्ता	245	0	0	0
समाचार पत्र कवरेज	180	0	0	0
कुल योग	**4384**	**94010**	**917**	**94927**

जनपद मे कृषि विज्ञान केन्द्र का प्रभाव

तकनीकी	तकनीक का प्रभाव						
	क्षैतिज फैलाव	अतिरिक्त रोजगार का सृजन (प्रति है) मानव दिवस	जनपद में रोजगार सृजन	उत्पादकता में बढ़ोतरी	अतिरिक्त उपज (कुं/संख्या)	अतिरिक्त आय (₹)	महत्वपूर्ण उपलब्धि
पोषक वाटिका	22	200	44000	7.6	167.2	3,34,400@2000/ कुं	ताजी सब्जी की उपलब्धता
चारा फसलों का समेकित फसल प्रबंधन	105	118	12403	607	63735	3,18,67,500@500/ कुं	दुग्ध उत्पादन में वृद्धि
आलू मे एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन	3500	80	28000	310	1085000	54,25,00,000@500	कम लागत अधिक आय
वर्ष भर बहुवर्षीय हरे चारे की उपलब्धता	15	150	2250	925	13875	27,75,000@200	वर्ष भर हरे चारे की उत्पादकता
टमाटर मे एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन	750	3	2250	615.7	461775	23,08,75,00@500/ कुं	कम लागत अधिक आय
केले की खेती	218	370	80660	71	15478	1,23,82,400@800	अधिक आय
आम में फल मक्खी का प्रबंधन	120	100	12000	120.5	14460	2,16,90,000@1500/ कुं	अधिक आय
सब्जी मटर (काशी उदय) का उत्पादन	950	50	47500	64.7	61465	6,14,65,000@1000 पौध	अधिक आय
सब्जी पौधशाला	800 संख्या	150	120000	16000000 संख्या	12800000000 No	8,85,480@4710/कु. संख्या	अधिक आय
संरक्षित खेती मे लाल पीली शिमला मिर्च का उत्पादन	0.6	72	43	314	188	8,85,480@4710/ कुं	अधिक आय
जरबेरा फूल का उत्पादन	1	220	220	1500000 संख्या	1500000 संख्या	45,00,000@Rs3/ संख्या	अधिक आय
ब्रोकोली का उत्पादन	13	250	3250	44000 संख्या	572000 संख्या	1,14,40,000@20/ संख्या	अधिक आय
वर्मीकम्पोस्टिंग	50	110	250	200	10000	50,00,000@500/ कुं	अधिक आय एवं अतिरिक्त रोजगार
फलों का प्रसंस्करण	45	90	220	5.0	225	45,00,000@200/ कुं	अधिक आय एवं अतिरिक्त रोजगार
मशरूम का उत्पादन	200	400	550	2.5	500	60,00,000@120/ कुं	अधिक आय, स्वरोजगार

कृषि विज्ञान केंद्र की गतिविधियों का सामाजिक आर्थिक प्रभाव : *केवीके*, लखनऊ और कृषि विभाग द्वारा लखनऊ जनपद के कृषकों का सामाजिक आर्थिक स्तर में विकास किया गया।

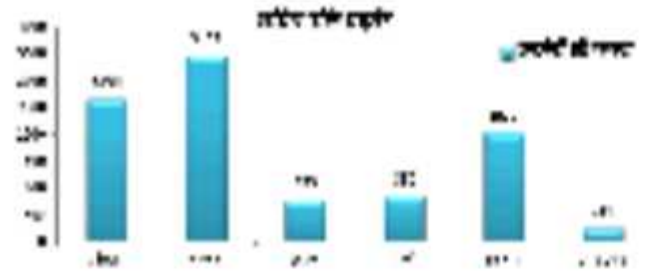

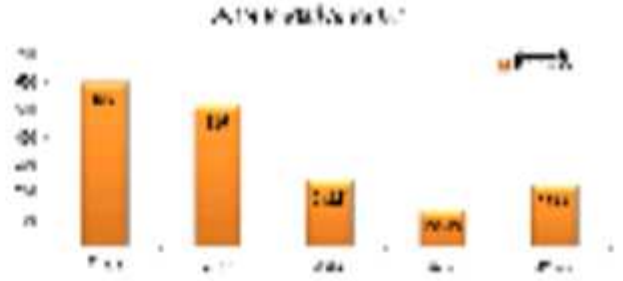

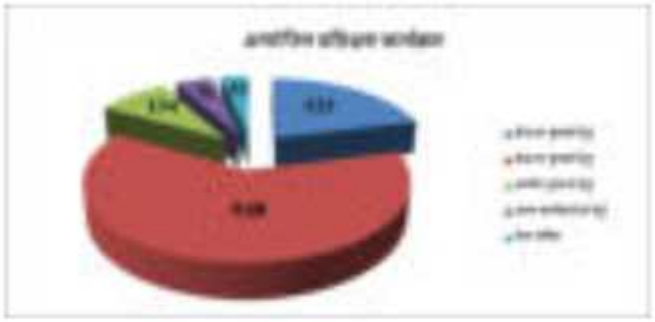

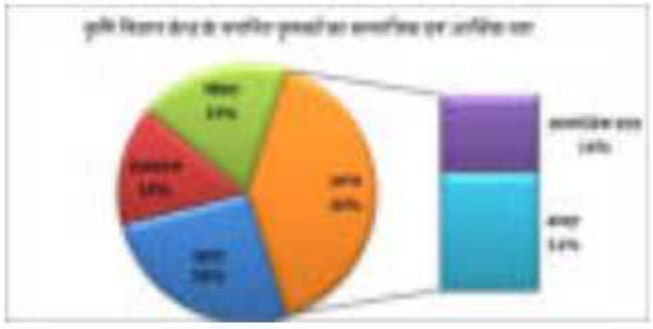

कृषि विज्ञान केन्द्र ने अपनी स्थापना से अब तक 66 शोध पत्र, 5 प्रशिक्षण पुस्तिका, 2 पुस्तकें, 65 अध्याय, 164 तकनीकी बुलेटिन, 25 लेख तथा 135 सफलता की कहानी प्रकाशित की हैं।

पुरस्कार/सम्मान

क्रम	पुरस्कार	संख्या
1.	उत्कृष्ट कार्य हेतु *केवीके* सम्मान	01
2.	कार्यरत व्यक्तिगत सम्मान	63
3.	किसान मेलों में प्रदर्शिनी हेतु सम्मान	12
4.	केवीके के किसानों का सम्मान	14

माननीय प्रधानमत्री जी द्वारा उत्कृष्ट क्षेत्रीय केवीके सम्मान प्राप्त करते हुये डॉ. अश्विनी दत्त पाठक, निदेशक एवं डॉ. एस.एन. सिंह, प्रभारी, कृषि विज्ञान केन्द्र, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

सत्तर वर्ष संस्थान के : सत्तर बातें चुकंदर की

मुकुन्द कुमार, आशुतोष कुमार मल्ल, संतेश्वरी, वरुचा मिश्रा, संतोष कुमार एवं सुरेन्द्र प्रताप सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ 1952 में तत्कालीन भारतीय केन्द्रीय गन्ना समिति द्वारा गन्ने की खेती के मौलिक और अनुप्रयुक्त पहलुओं पर शोध करने के साथ–साथ देश के विभिन्न राज्यों में इस फसल पर किए जाने वाले अनुसंधान कार्य को समन्वित करने के लिए स्थापित किया गया था। भारत सरकार ने 1 जनवरी, 1954 में इस संस्थान को भारतीय केन्द्रीय गन्ना समिति से हस्तगत कर लिया तथा 1 अप्रैल, 1969 को अन्य केंद्रीय कृषि अनुसंधान संस्थानों के साथ – साथ इसे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली को हस्तांतरित कर दिया गया।

इस लेख के द्वारा हम चुकंदर के बारे में निम्नलिखित बिन्दुवों से जानेंगे :

चुकंदर के बारे मे सामान्य जानकारी

1. चुकंदर एक सफेद, *पार्सनिप* जैसा *टेपरूट* होती है जो इसकी पत्तियों में प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के माध्यम से सुक्रोज़ बनाती है और जड़ में सुक्रोज़ संग्रहीत करती है। इसमें लगभग 16% सुक्रोज़ की मात्रा होती है, और एक निष्कर्षण प्रक्रिया से पौधे से चीनी को अलग करती है। गन्ने के विपरीत, चुकंदर समशीतोष्ण जलवायु में उगाया जाता है इसलिए यह यूरोप और उत्तरी अमेरिका में गन्ने का अधिक लोकप्रिय विकल्प है।

2. चुकंदर एक शाकीय, द्विवर्षीय एवं द्विबीजपत्री पौधा है। चुकंदर, वानस्पतिक रूप से *बीटा वल्गेरिस* के रूप में वर्गीकृत, सफेद चुकंदर की एक किस्म है जो कि *ऐमारैंथेसी* परिवार से संबंधित है।

3. प्रथम वर्ष में मोटी व रसदार मूल जड़ बनती है। अगले वर्ष तना व पुष्प विकसित होता है जिसमें पुष्पन के पश्चात् बीज बनता है। परिपक्व चुकंदर की एक लम्बी एंव मोटी जड़ होती है जिसके बीच में हल्का सा कटाव व धुमाव नीचे की ओर अग्रसर होता है। ऐसी जड़ को तीन भागों में बांटा गया है: (1) ऊपरी सिरा (*क्राउन*), (2) मध्य भाग (*बॉडी*), (3) दुम (*टेल*)। ऊपरी भाग में मोटी पत्तियाँ विकसित होती हैं जबकि मध्य भाग सबसे चौड़ा होता है। जिसमें शर्करा का भंडारण होता है। कटाव से छोटी–छोटी बारीक जडें निकलती हैं।

4. जड़ के ऊपरी भाग से पत्तियाँ चक्राकार ढंग से निकलती हैं। पत्तियाँ लम्बी एवं त्रिकोणनुमा होती हैं जिनका ऊपरी सिरा गोल हो जाता है। पत्ती का किनारा कटावदार होता है और निचला भाग हृदय के आकार का होता है। फल छोटे, बिना डंठल वाले एवं सम्पूर्ण होते है। चुकंदर के फलों को बुवाई के लिए बीज के रूप में प्रयोग किया जाता है।

5. *बीटा* वंश का विभाजन तथा गुणसूत्र संख्या

क्र. स.	वर्ग	प्रजाति	गुणसूत्र संख्या
1.	*वल्गेरिस*	1. *बीटा वल्गेरिस*	20
		2. *बीटा मारीटीमा*	18
		3. *बीटा मेक्रोकार्पा*	18
		4. *बीटा पैटूला*	18
		5. *बीटा एट्रीप्लीसीफोलिया*	18
2.	*पैटेलेरिस*	1. *बीटा पैटेलेरिस*	18
		2. *बीटा प्रोकेम्बेंस*	18
		3. *बीटा विवियाना*	18
3.	*कारोलिनी*	1. *बीटा मैक्रोराइजा*	18
		2. *बीटा ट्रीगिना*	36–52
		3. *बीटा फोलीगोस*	18–36
4.	*नाना*	1. *बीटा नाना बोइस*	18–36

6. 16 वीं शताब्दी में वैज्ञानिक ओलिवियर डी सेरेस ने सबसे पहले चुकंदर के बारे में बताया, उन्होंने कहा था कि 'चुकंदर को उबालने पर चीनी के *सिरप* के समान रस निकलता है, जो अपने सिंदूर के रंग के जैसा होता है। उन्होंने जिस *बीट* का उल्लेख किया है, वह वास्तव में एक सामान्य लाल बीट है, जैसे कि आप सर्दियों में सलाद के रूप में उपयोग करते हैं।

7. सन 1747 में, बर्लिन के विज्ञान अकादमी में भौतिकी के प्रोफेसर एंड्रियास सिगिस्मंड मारग्राफ ने सफेद चुकंदर में चीनी की खोज की चुकंदर से शुद्ध चीनी निकलने में सक्षम होने के बावजूद, इसका व्यवसायीकरण 1801 तक नहीं हो पाया था फिर भी उसी दौरान मार्ग्राफ के छात्र, फ्रांज कार्ल अचर्ड ने सिलेसिया में दुनिया का पहला चीनी चुकंदर कारखाना खोला था। अचर्ड के काम को देखकर नेपोलियन बोनापार्ट को चुकंदर से चीनी निकालने में बहुत दिलचस्पी हो गई, और अपने वैज्ञानिकों को सिलेसिया जाने और कारखाने की जाँच करने के लिए नियुक्त किया। उन्होंने पेरिस के पास दो समान कारखानों का निर्माण किया। पश्चिमी यूरोप में जल्द ही नेपोलियन की चीनी योजनाओं की ओर ध्यानाकर्षण हुआ और यूरोप में चुकंदर उद्योग तेजी

से विकसित हुआ।

8. 1850 के दशक में, कई यूरोपीय सरकारों ने चुकंदर के उत्पादन को अनुदान देने का प्रावधान किया। विशेष रूप से ग्रेट ब्रिटेन में चुकंदर चीनी उद्योग ने गन्ना चीनी उद्योग को पीछे कर दिया हालाँकि, महायुद्ध के दौरान, यूरोप भर में चुकंदर के कई खेत नष्ट हो गए थे और यूरोप में गन्ने से चीनी शोधन को पुनर्जीवित किया गया था, और आज तक यूरोप और उत्तरी अमेरिका में गन्ना और चुकंदर के बीच प्रतिस्पर्धा बनी हुई है।

9. विश्व में वार्षिक चीनी उत्पादन लगभग 1600 लाख टन है लगभग 23 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति खपत के साथ कुल उपयोग लगभग 1.4% सालाना बढ़ रहा है। विश्व चीनी उत्पादन की लगभग एक–चौथाई चीनी चुकंदर से निकाली जाती है।

10. चुकंदर में चीनी की मात्रा की वृद्धि के लिए दो सौ वर्षों में 2020 तक 8 से 18 प्रतिशत तक वृद्धि पाई गई है। चुकंदर मे विषाणु और कवक रोगों के प्रतिरोध, बढे हुए टैपरूट (जड़) आकार, *मोनोजर्मी* और कम *बोल्टिंग* के लिए सफलता पाई गयी है।

11. एक कोशिकाद्रव्यी नर बंध्यता की खोज से चुकंदर प्रजनन आसान हो गया है – यह विशेष रूप से उपज प्रजनन में उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

12. चुकन्दर की फसल मुख्य रूप से वाणिज्यिक चीनी उत्पादन के लिए उगाई जाती है और इसे दुनिया भर के कई देशों में नकदी फसल माना जाता है। चुकंदर में सभी *बीट* किस्मों में चीनी की उच्चतम सांद्रता होती है, और चीनी, पत्तियों के भीतर प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया से विकसित होती है। एक बार जब पत्तियों में चीनी बन जाती है तो इसे स्थानांतरित कर दिया जाता है और जड़ों में जमा कर दिया जाता है, जिसे पकाया जा सकता है और मीठे क्रिस्टल निकालने के लिए निचोड़ा जा सकता है।

13. चुकंदर गोल, शंक्वाकार, लम्बी, पतली जड़ों तक औसतन 10 से 12 सेंटी मीटर व्यास के होते हैं, और विभिन्न मिट्टी और बढ़ती परिस्थितियों के कारण अनियमित रूप से दिखाई दे सकते हैं। जड़ खुरदरी, क्रीम रंग की और दृढ़ होती है, जो पतली, चमड़े की और खाने योग्य हरी चोटी से जुड़ी होती है, जिसकी लंबाई औसतन 35 सेंटी मीटर होती है। जड़ की सतह के नीचे घना और हाथीदांत जैसे सफेद होता है।

14. कच्चे होने पर चुकंदर का स्वाद अर्द्ध–कड़वा होता है और एक बार पकने के बाद, गूदा नरम हो जाता है और एक बहुत ही मीठा, नरम स्वाद विकसित करता है।

15. जड़ में संग्रहीत चीनी की मात्रा प्रकाश संश्लेषण पर निर्भर करती है और इसलिए विकिरण की मात्रा पत्तियाँ अवशोषित करती है। विकिरण की 95% मात्रा को रोकने के लिए, चुकंदर की फसल को लगभग 3 पत्ती क्षेत्र सूचकांक को प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। पत्ती की सतह का क्षेत्र जितना संभव हो उतना बड़ा होना चाहिए और यथासंभव लंबे समय तक बनाए रखा जाना चाहिए। उत्पादक को जल्द से जल्द सुरक्षित बुवाई की तारीख को फसल की बुवाई कर देनी चाहिए ताकि पौधों के पास अपनी पत्तियों का विस्तार करने और विकिरण की अधिकतम मात्रा को अवशोषित कर सकने का समय रहे। विकिरण और चीनी की उपज के बीच एक रेखीय संबंध है।

भारतीय परिवेश मे चुकंदर–

16. चुकंदर, गन्ने के बाद दूसरी महत्वपूर्ण चीनी वाली फसल है और इस हिसाब से विश्व के चीनी उत्पादन की लगभग पाँचवां हिस्सा चीनी चुकंदर से तैयार की जाती है। भारत मे इन दोनों प्रमुख चीनी फसलों के लिए उपयुक्त कृषि–जलवायु विविधता व्यापक रूप से मौजूद है। व्यवस्थित अनुसंधान के द्वारा हमारे वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि भारत में चुकंदर फसल को नकदी फसल के रूप में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

17. भारत में चुकंदर को सन 1950 मे इसलिए लाया गया था कि इससे चीनी उत्पादन बढ़ाने मे मदद मिलेगी। इसीलिए 70 के दशक मे इस फसल पर अखिल भारतीय समन्वय अनुसंधान परियोजना (चुकंदर), गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रोद्यौगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर द्वारा 30 साल तक चलाई गई। इस अवधि में चुकंदर को रबी की फसल के रूप में उगाने की तकनीक भी विकसित की गई तथा तकनीकों का मानकीकारण भी किया गया जिससे चिकन्दर की अच्छी पैदावार ली जा सके।

18. 1970 से 1980 के दशक के दौरान कुमाऊँ पहाड़ियों में स्थित भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के मुक्तेश्वर केंद्र तथा गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय के गढवाल की पहाड़ियों में स्थित रानीचौरी केंद्र में चुकंदर के जननद्रव्य के रखरखाव तथा सीमित प्रजनन कार्यों को इस संस्थान के द्वारा किया जाता रहा है। चुकंदर से चीनी बनाने के लिए भारत मे सबसे पहले राजस्थान के गंगानगर शहर में सन 1971 में चीनी मिल स्थापित की गई थी। चुकंदर की अच्छी प्रजाति के बीजों के अभाव व मिल के आधुनिकीकरण न होने के कारण चुकंदर उगाना लगभग बंद हो गया। बाद मे मिल भी बंद हो गई।

19. भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ चुकंदर के जननद्रव्य तथा प्रजातियों को सुरक्षित रखने के लिए अपने वाह्य अनुसंधान केंद्र मुक्तेश्वर, कुमाऊँ की पहाड़ियों पर लगातार प्रयासरत है।

20. भारत मे उभरते जैव ईंधन परिदृश्य ने भी इसके वैकल्पिक अवसरों के द्वार खोल दिए हैं। चुकंदर पारंपरिक चीनी निर्माण के अलावा अन्य उपयोग हेतु भी प्रयोग में लाया जाता है।

21. चुकंदर चारे की मांग पूर्ति और चारे को संतुलित करने के लिए भी काम कर सकता है। भारत में गन्ना उत्पादन में नियमित रूप से उतार–चढ़ाव देखने को मिलता है। अतः गन्ने के साथ–साथ चुकंदर भी भविष्य में चीनी की मांग को पूरा करने के लिए एक व्यवहार्य विकल्प सिद्ध हो सकता है।

चुकंदर का उपयोग

22. चुकंदर के गूदे और शीरा से उप–उत्पादों का प्रसंस्करण किया जा रहा हैं जिनका व्यापक रूप से पशुओं के लिए पशु आहार पूरक के रूप में उपयोग किया जाता है। ये उत्पाद पशु आहार में आवश्यक *फाइबर* प्रदान करते हैं और पशु आहार के स्वाद को बढ़ाते हैं।

23. चुकंदर के शीर्ष (पत्ते और डंठल) को भी *साइलेज* के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। 20 टन प्रति एकड़ जड़ों का उत्पादन करने वाले चुकंदर के शीर्ष (पत्ते और डंठल) में प्रति एकड़ लगभग 5 टन प्रति एकड़ *टीडीएन* (कुल सुपाच्य नाइट्रोजन) का उत्पादन होता हैं।

24. चुकंदर उच्च प्रोटीन, विटामिन ए और कार्बोहाइड्रेट का एक उत्कृष्ट स्रोत हैं, *बीट टॉप साइलेज* को अन्य पशु आहारों के साथ मिलाकर खिलाया जाता है। शीर्षों को खेत में ढेर कर दिया जाना चाहिए और 60–65% नमी तक सूखने दिया जाना चाहिए। इसके बाद उपयोग मे लाना चाहिए।

25. चुकंदर के गूदे में 24% शुष्क पदार्थ, 10% कच्चा प्रोटीन, 44% तटस्थ *फाइबर* और 80–90% कुल पचने योग्य पोषक तत्व पाय जाते हैं जो इसे एक उत्कृष्ट ऊर्जा स्रोत बनाते हैं।

26. चुकंदर प्रसंस्करण से शीरे के उपोत्पाद अल्कोहल, *फार्मास्यूटिकल्स* और *बेकर्स यीस्ट* उद्योगों में व्यापक रूप से उपयोग किए जाते हैं। चुकंदर के प्रसंस्करण से प्राप्त अपशिष्ट चूना मिट्टी के *पीएच* स्तर को बढ़ाने के लिए एक उत्कृष्ट मृदा संशोधन है। उपचारित अपशिष्ट जल का उपयोग सिंचाई के लिए भी किया जा सकता है।

चुकंदर की सस्य क्रियाएं

27. चुकंदर की जड़ों के विकास के लिए खेत समतल तथा उचित जल निकास की व्यवस्था होनी चाहिए। समतल खेत में पहले *डिस्क प्लाऊ* से दो बार गहरी जुताई करने के बाद पाटा चला देना चाहिए जिससे मिटटी पूरी तरह से भुरभुरी हो जाए। खेत को अच्छी तरह से समतल करके अनुशंसित दूरी पर कूँड़ बनानी चाहिए।

28. चुकंदर की अच्छी पैदावार के लिए मृदा का पीएच मान 7.0 से 8.5 के बीच होना चाहिए।

29. चुकंदर के लिए ठंडा मौसम, अच्छी बरसात, सिंचाई, तथा जलभराव की स्थिति में पानी के निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए तथा रात का तापक्रम 10–11 डिग्री सेल्सियस से कम नहीं होना चाहिए।

30. चुकंदर के बीज *मोनोजेनिक* तथा *पॉलीजेनिक* होते हैं। प्राकृतिक तौर पर चुकंदर के बीज की सतह खुरदरी तथा बेडौल होती है। इस बीज को *पेलेटिंग* या बिना *पेलेटिंग* करने के बाद बोया जाता है।

31. चुकंदर के बीज को *पेलेटिंग* करने के लिए ज़िप्सम, कवकनाशी तथा कीटनाशी रसायनों के *पेस्ट* का प्रयोग किया जाता है जिससे बीज का आकार गोल हो जाता है और मशीन द्वारा बुवाई मे आसानी होती है।

32. *पॉलीजेनिक* बीज 10 किलोग्राम प्रति हे. तथा *मोनोजेनिक* बीज 3 किलोग्राम/हे. की दर से बोया जाता है। यदि सादा बीज बो रहे हैं तो बीज को 4–5 घंटे तक पानी में भिगोने के बाद बीज को निकालकर थिरम नामक फफूँदनाशी रसायन से उपचारित अवश्य कर लेना चाहिए जिससे पौधों की छोटी अवस्था में लगने वाले रोगों से बचा जा सके।

33. बीज उपचारित करने के बाद बीज को कूँड़ों की मेड़ पर 10 सेंटीमीटर की दूरी पर *डिबिलिंग* बिधि द्वारा बो देना चाहिए। बीज बोने के बाद कूँड़ों में सिंचाई कर देनी चाहिए। सिंचाई इस प्रकार करनी चाहिए कि नमी बीज तक पहुँच जाए, ध्यान रहे कि कूँड़ों के ऊपर पानी नही आना चाहिए, नहीं तो जमाव प्रभावित होता है।

34. बीज जमने के एक माह बाद पौधों की विरलीकरण कर देना चाहिए। पौध से पौध की दूरी 20 सेंटीमीटर रखनी चाहिए तथा अच्छी पैदावार लेने के लिए एक हे. में लगभग एक लाख पौधे होने चाहिए।

35. भारतीय परिवेश मे उगने वाली चुकंदर की प्रमुख प्रजातियाँ जैसे एलएस 6, एलके 27, एलकेसी 2020, आईआईएसआर कम्पोजिट 1 आदि प्रमुख किस्में हैं।

36. चुकन्दर के बोने का सही समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर है। 50 सेंटीमीटर की दूरी पर कूँड निकालने के बाद चुकंदर के बीज को कूँड की मेड़ पर *डिबिलिंग* विधि से बोया जाता है।

37. पतली पंक्ति की चौड़ाई, चौडी पंक्तियों की तुलना में अधिक पैदावार और गुणवत्ता प्रदान करती है। संकरी पंक्तियों में चुकंदर खरपतवारों से भी बेहतर प्रतिस्पर्धा करते हैं। इष्टतम पंक्ति की चौड़ाई 18 से 24 इंच होनी चाहिए, जिसमें 22 इंच की पंक्तियाँ सबसे आम हैं।

38. कृषि उपकरण की उपयोग सुविधा और *रोटेशन* में अन्य पंक्ति फसलों के साथ संगतता के लिए चुकंदर को 30 इंच की पंक्तियों में लगाया जा सकता है। हालांकि, 30 इंच की पंक्तियों में लगाए गए चुकंदर आमतौर पर समान फसल संख्या के साथ 22 इंच की पंक्तियों की तुलना में प्रति एकड़ 400 से 600 पौधे ज्यादा लगते हैं। चुकंदर के पौधे की संख्या 30,000 से 40,000 तक समान दूरी वाले पौधे प्रति एकड़ होनी चाहिए।

39. भारत में चुकंदर की पैदावार लगभग 40– 60 टन/ हे. है तथा शर्करा की उपलब्धता 11 से 13 प्रतिशत है।

40. चुकंदर के बीज और अंकुरण उर्वरक लवण के प्रति संवेदनशील होते हैं। यदि अतिरिक्त नाइट्रोजन या पोटेशियम उर्वरक बीज के सीधे संपर्क में रखा जाए तो अंकुरण क्षति हो सकती है। कुछ क्षेत्रों में, सीधे फॉस्फेट उर्वरक सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो सकती है। ऐसे में मोनोअमोनियम फॉस्फेट (11–48–0) या 10–34–0 *लिक्विड* को *स्टार्टर फर्टिलाइजर* के तौर पर इस्तेमाल कर सकते हैं।

41. समशीतोष्ण जलवायु में अच्छी पैदावार लेने के लिए समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए। इस प्रकार चुकंदर मे 10 से 12 सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है। पहली सिंचाई बुवाई के तुरंत बाद करनी चाहिए और बाकी की सिंचाई 10 से 12 दिन के अंतराल पर करते रहना चाहिए ताकि जड़ों के विकास के लिए खेत मे नमी बनी रहे।

42. चुकंदर के पौधे खरपतवार (पोषक तत्वों, प्रकाश, पानी और स्थान के लिए) के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं। उग रहे खरपतवार फसल जमने के 8 सप्ताह बाद खरपतवार और फसल के बीच प्रतियोगिता बढ़ जाती है। इससे उपज हानि हो सकती है तथा पैदावार को 11% या अधिक का नुकसान हो सकता है। कूँड़ों के बीच *मल्चिंग* का प्रयोग करके काफी हद तक खरपतवार को नियंत्रित किया जा सकता है। *मल्चिंग* के लिए धान का पुवाल या सूखी घास को उपयोग मे लाना चाहिए।

चित्र 1. चुकंदर फसल मे *मल्चिंग* का प्रयोग

43. खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशी का प्रयोग बहुत सावधानीपूर्वक करना चाहिए क्योकि चुकंदर खरपतवारनाशी के प्रति बहुत ही संवेदनशील होती है। चुकंदर बीज जमने से पहले संस्तुत खरपतवारनाशी का छिड़काव किया जा सकता है।

44. फसल के पकने के बाद नीचे की पत्तियाँ पीली पड़ जाती है तथा शरदकाल मे लगाई हुई फसल मे अप्रैल से मई तक चीनी की मात्रा बन चुकी होती है। इसलिए जड़ों की खुदाई मई तक कर लेनी चाहिए। जड़ों की खुदाई के समय खेत मे नमी होना आवश्यक है। स्वस्थ जड़ों की खुदाई करने के बाद जड़ों को चीनी मिल मे प्रसंस्करण के लिए भेज देना चाहिए। खेत मे ढेर लगाकर नहीं रखना चाहिए।

बीज उत्पादन

45. चुकंदर के बीज उत्पादन के लिए निम्न तापमान की आवश्यकता पड़ती है जो कि पहाड़ी क्षेत्रों जैसे जम्मू कश्मीर की श्रीनगर घाटी, हिमाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल, उत्तराखंड में कुमाऊँ पहाड़ियां, जिनकी ऊँचाई 5000 फीट हो, वहां चुकंदर का बीज उत्पादन किया जा सकता है।

46. उत्तराखण्ड में मुक्तेश्वर स्थान को चुकंदर बीज उत्पादन के लिए अनुकूल पाया गया है। भारतीय गन्ना अनुसन्धान संस्थान के वैज्ञानिक चुकंदर की जड़ को तैयार करके मुक्तेश्वर केंद्र में रोपण करते हैं जिससे बीज उत्पादन में कम समय लगता है।

47. चुकंदर बीज उत्पादन के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 सेंटीमीटर तथा पौध से पौध की दूरी 30 सेंटीमीटर रखी जाता है। जिन खेतों में चुकंदर की फसल को बीज उत्पादन हेतु लगाया गया हो उनको अन्य खेतों से दूर रखना चाहिए जिसेसे बीज की शुद्धत्ता बनी रहे।

48. चुकंदर की उन किस्मों के लिए जिनमे एक समान विशेषताएँ हैं, 1 किलोमीटर की दूरी पर्याप्त होती है, परन्तु उन किस्मों के लिए जो अभिजात है या विशेषताओं में भिन्न है उनके बीच की दूरी 3.2 से 4.8 किलोमीटर तक आवश्यक होती है।

49. चुकंदर के पौधों को कई वर्षों तक बिना फूल पैदा किए, नई पत्तियों का उत्पादन जारी रख सकते है। चुकंदर बसंतीकरण के लिए इष्टतम तापमान 5–10 डिग्री सेल्सियस है, और पौधे को अपने जीवन चक्र के प्रजनन चरण में जाने के लिए 40 दिनों के ठंडे तापमान मे रखने की आवश्यकता होती है।

50. यदि चुकंदर को बहुत जल्दी बोया जाता है, तो रोपाई प्रजनन चरण में *स्विच* को *ट्रिगर* करने के लिए पर्याप्त ठंडे मौसम की जरूरत होती है, जिससे एक वर्ष में बीज उत्पादन हो सकता है। एक वर्ष में बीज पैदा करने वाले पौधों को *'बोल्टर'* कहा जाता है। *बोल्टरों* से चीनी की पैदावार बहुत कम होती है तथा चीनी की मात्रा कम और निकालना मुश्किल होता है। इसलिए बसंतीकरण से बचने के लिए चुकंदर की फसल की बुवाई की तारीख चुनी जाती है।

पौध सुरक्षा

51. चुकंदर की फसल में लगभग 150 प्रकार के कीड़े–मकोड़े लगते है जिससे उत्पादन में 40 से 50 प्रतिशत की उपज में

कमी हो सकती है। रस चूसने वाले कीड़े जैसे *एफिड, हौपर,* सफ़ेद मक्खी आदि कीट है जो पत्तियों का रस चूस कर पौधों को भारी नुकसान पहुंचाते हैं। इनसे बचाव के लिए अन्तःप्रवाही कीटनाशी का प्रयोग करना चाहिए।

52. पत्ती काटने वाले कीड़ों के प्रकोपों को आमतौर पर सफल नियंत्रण के लिए *पोस्टएमर्जेंस* कीटनाशक प्रयोग की आवश्यकता होती है। पर्ण कीटनाशक से पिस्सू भृंग और *वेबवर्म* को सफलतापूर्वक नियंत्रित किया जा सकता है।

53. चुकंदर में एक सफल कीट नियंत्रण कार्यक्रम की कुंजी, कीट आबादी की समय पर निगरानी है। इसके बाद अनुशंसित कीटनाशकों के अनुप्रयोग आबादी और फसल क्षति कीटनाशक के अनुपात के अनुसार करना चाहिए।

54. नई विकसित फसल की कृत हानिकारक कीट प्रबंधन की पद्धति के प्रयोग से *स्पोडोप्टेरा* कीट का प्रबंधन किया जा सकता है। इसके अंतर्गत *स्पोडोप्टेरा* कीट की कम संभावना होने के लिए किसानों को चुकंदर की शुभ्रा किस्म को लगाना चाहिए। चुकंदर की बुआई के एक माह बाद पक्षियों का बसेरा @ 25 / हेक्टेयर में लगाना चाहिए।

55. हर चार दिनों के अंतराल के बाद *स्पोडोप्टेरा* कीट की इल्लियों को हाथ से एकत्र करना चाहिए व उन्हें नष्ट करना चाहिए। यह कार्य कम से कम चार गुना करना चाहिए जब इस कीट का विस्तार खेतों में हो चुका हो। 4 से 5 दिनों के अंतराल में घास के ढेरों का प्रयोग करना व लार्वा के चरणों को नष्ट करना चाहिए।

56. सर्दी के मौसम में चुकन्दर की बुआई के 4 माह के बाद *फेरोमोन ट्रैप* 25 / हेक्टेयर की दर पर लगाना चाहिए तथा गर्मी के मौसम में बुआई के 1 माह के उपरांत *स्पोडोप्टेरा* के नर वयस्कों को आकर्षित करने के लिए हर 15 दिनों के अंतराल में *लॉर* (चारे) को बदला जा सकता है। *स्पोडोप्टेरा* की आबादी की निगरानी के लिए बीज के अंकुरण के चरण से फसल को पांचवें महीने तक एक या दो *फेरोमोन* जाल लगाए जा सकते हैं। जब *स्पोडोप्टेरा* की जनसंख्या प्रारंभिक अवस्था में हो उस समय सर्दी के मौसम में 15 दिन के अंतराल पर 600 मि.ली. / हेक्टेयर की दर पर *एसएजएनपीवी* और गर्मियों के मौसम में 500 मि.ग्रा. / हेक्टेयर का छिड़काव करना चाहिए।

57. *स्पोडोप्टेरा* के गभीर विस्तार के दौरान 25 ग्राम / हेक्टेयर की दर से चारा का उपयोग लैनेट 40 एसपी (975 ग्राम गेहूँ का आटा + 25 ग्राम मेथोमिल (लनाट) + 100 ग्राम गुड, 1 लीटर पानी) का प्रयोग करना। *फेरोमोन ट्रेप* में *स्पोडोप्टेरा* प्रौढ पतंगों के संग्रह के आधार पर दो किश्तों (50,000 *पैरासिटोइड* / किश्तों) में *ट्राइकोग्रामा किलोनिस*, एक अंडा परजीवी, 1,00,000 / हेक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए। तीव्र आवेश के दौरान क्विनलफोस 25 ईसी @ 0.05 की दर पर (या 2 मि.ली. / लीटर पानी) के आधार और एकल छिड़काव की आवश्यकता है।

58. चुकंदर की फसल में लगभग 25 प्रकार के रोग लगने की पुष्टि की गई है जिन्हें सुविधानुसार पाँच भागों में विभाजित किया गया है जैसे अंकुरण के समय लगने वाले रोग, पत्ती में लगने वाले रोग, मूल जड़ ग्रंथि रोग, पोषक तत्वों की कमी से होने वाले विकृति आदि। चुकंदर की उपज में नुकसान अंकुरण के झुलसने, जड़ सड़न और पर्ण रोगों के कारण होता है। उचित नियंत्रण विधियों का उपयोग करने से रोगों से होने वाले नुकसान को समाप्त या कम किया जा सकता है।

59. सबसे प्रचलित अंकुरण रोगजनक मृदाजनित कवक हैं इनमें *एफेनोमाइसेस कोक्लिओइड्स, राइजोक्टोनिया सोलेनाई* और कई *पिथीएम* प्रजातियां शामिल हैं। *फोमा बीटी* एक बीजजनित रोगज़नक़ है जो चुकंदर की फ़सल को प्रभावित करता है। ये रोग बीज या अंकुरित पौधों पर हमला करते हैं। इन कवक के कारण होने वाले अंकुर रोग समान लक्षण उत्पन्न करते हैं। दो या दो से अधिक रोगजनक एक साथ या क्रमिक रूप से रोपाई पर हमला कर सकते हैं।

60. रोग की गंभीरता और व्यापकता क्षेत्रों के बीच, खेतों के बीच और एक क्षेत्र के भीतर भिन्न होती है। अंकुरण रोग की गंभीरता रोग *इनोकुलम* की उपलब्धता, पर्यावरणीय कारकों और किस्म की संवेदनशीलता से निर्धारित होती है।

61. *एफेनोमाइसेस कोक्लिओइड्स* और *राइजोक्टोनिया सोलेनाई* प्राथमिक कवक हैं जो आर्थिक चिंता का कारण बनते हैं। इनमें से कई कवक मिट्टी में लंबे समय तक जीवित रहते हैं। लक्षण मामूली घावों से लेकर सूखे या गीले सड़ांध द्वारा जड़ के पूर्ण विनाश तक भिन्न होते हैं। गंभीर जड़ सड़न और अंकुर रोग की समस्याओं के लिए नियंत्रण विधियों में किस्म प्रतिरोध, फसल चक्र, बीज उपचार और कवकनाशी अनुप्रयोग शामिल हैं। जड़ सड़न का नियंत्रण अक्सर महंगा और प्रकृति में अस्थायी होता है।

62. *सर्कोस्पोरा* पर्ण चित्तीरोग के लिए *सर्कोस्पोरा बेटिकोला* नामक फफूंदी द्वारा होता है इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम निचली पत्तियों पर वृत्ताकार धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जिनके व्यास लगभग 3 से 5 मि.मी. तक होता है और इनके किनारे लाल एवं उनका मध्य भाग भूरे रंग का होता है। फसल काटने के बाद कवक पौधों के रोगग्रसित अवशेषों पर मिट्टी में जीवित रहता है जो कि प्रारंभिक संक्रमण में सहायक होता है। मिट्टी में कवक जाल एवं *कोनोडिया* दोनों ही

उपस्थित रहते हैं।

63. चूर्णिल आसिता रोग *इरिसाइफी बीटी* नामक कवक के कारण होता है। यह चुकंदर का अन्य गंभीर पर्ण रोग है। लंबे समय तक सूखा, गर्म दिन ठंडी रातें और दिन–रात के तापमान में व्यापक उतार–चढ़ाव के कारण होता हैं।

64. चुकंदर में सूत्रकृमि के द्वारा भी रोग फैलाए जाते हैं। इस रोग से जड़ों की वृद्धि एवं विकास रूक जाता है। यह रोग *मेलोड़ोगाईन जवानिका* एवं मे. *इन्काग्नेटा* सूत्रकृमि द्वारा होता है। मूल/जड़ ग्रंथि सूत्रकृमि चुकंदर के मूल रोम को नष्ट कर देती है जिससे जड़ क्षमता घट जाती है एवं जड़ को अन्य रोगजनको के प्रति रोगग्राही बना देती है।

65. जड़ग्रंथि सूत्रकृमि रोग के नियंत्रण के लिए ग्रीष्म ऋतु मे कई बार जुताई करनी चाहिए। ऐसा करने से मिट्टी में उपस्थित सूत्रकृमि के अंडे एवं डिंबक मर जाते है। खेत मे कार्बनिक पदार्थों के उपयोग से भी इस रोग की तीव्रता कम हो जाती है। नीम की खली 25 कुंतल प्रति है. की दर से फसल बोने के 3 सप्ताह पूर्व डालने से इस रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

66. चुकंदर की फसल की जल्द बुआई, रोगग्रसित फसल को जलाना, अन्य फसलों के साथ इस फसल का चक्रीकरण, मूँगफली, सरसों या नीम केक के उपयोग से मृदा में सुधार, उचित जल निकासी व पूर्ण रूप से सिंचाई (8 से 10 सिंचाई से कम) व उर्वरक का उपयोग विभिन्न रोगों की घटनाओं को कम करने के लिए प्रभावी होते हैं।

67. चुकंदर के बीजों पर थीरम 2 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से (बाविस्टीन 1.0 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से (जिसमें *बेंटोनाइट* मृदा एक मुख्य है) व *मिथाइल सेल्युलोज* को *स्टिकर* के रूप में प्रयोग करने से चुकंदर के बीजजनित रोगों व उसके अनुकरण के रोगों पर प्रभावशाली पाया गया है।

68. चुकंदर के बीजों का अंकुरण तथा जड़ सड़ांध रोग को जैव–कारकों (*ट्राइकोडर्मा विरिडी* या *ट्राइकोडर्मा हार्जियानम*) का उपयोग 20 कि.ग्रा./हे की दर पर बुआई के समय पर किए जाने से रोगों का प्रबंधन होता है। इसके तत्पश्चात जैव–कारकों के साथ बीज *पेलेटिंग* या *बाविस्टिन* का 0–5 प्रतिशत की दर पर या थिरम का 1.0 प्रतिशत की दर पर बुवाई के 45 दिनों बाद उपयोग किया जाता है।

69. चुकंदर में बोरोन की कमी के कारण *हार्ट रॉट* नामक रोग लगता है, यह रोग खेत में *पैच* के रूप मे दिखाई देता है यह रोग ऐसी मिट्टी मे ज्यादा होता है जहाँ कैल्शियम की मात्रा अधिक होती है। अम्लीय मिट्टी की अपेक्षा क्षारीय मिट्टी में अधिक होता है। ऐसी मिट्टी जिसमे कार्बनिक पदार्थ की मात्रा कम होती है वहाँ पर इस रोग का प्रकोप ज्यादा होता है। इस रोग में पौधो की वर्धक ऊतक एवं पत्तियाँ मरने लगती हैं तथा संक्रमित पौधे मर कर गिर जाते हैं। पत्तियाँ मुड़ी हुई और इनके किनारे काले पड़ जाते हैं तथा बाद मे मर जाते है। पुरानी पत्तियों के पर्णवृन्तों के ऊपरी भाग मे अनुप्रस्थ दरारें पड़ जाती है जो कि सीढ़ीनुमा दिखती हैं।

70. चुकंदर की फसल आने वाले समय में केवल शर्करा हेतु ही नहीं अपितु इथेनॉल उत्पादन हेतु भी जानी जायेगी। हालांकि कई देशों में इसका उत्पादन दोनों ही संदर्भों में किया जा रहा है परन्तु आने वाले समय में बढ़ती इथेनॉल की मांगों को देखते हुए यह फसल किसानों और चीनी उद्योग के लोगों के लिए आकर्षण का केन्द्र रहेगी। इसलिए यह आवश्यक है कि किसान इसकी खेती करने से पहले इस फसल के बारे में अच्छी तरह जानकारी प्राप्त करें।

पैलेटेड चुकंदर के बीज की संरचना

पहली परत

एक कवकनाशी के साथ एक पतली परत को *फिल्म–कोटिंग* तकनीक के साथ बीज की सतह पर लगाया जाता है। इस परत के सक्रिय पदार्थ में कीटाणुनाशक, कवक बीजजनित रोगजनकों को नष्ट करने वाला रसायन होता है।

दूसरी परत या आकार देने (*पेलेटिंग*) वाली परत

इस परत में बीज को *पेलेटिंग* प्रक्रिया में एक गोलाकार आकार दिया जाता है। इस परत की सामग्री में कई प्रकार के पदार्थ होते हैं जो अंकुरण करने और उनको उभरने के लिए सहायक होते हैं। इसके अलावा यह परत *पेलेटिंग* मास भौतिक रूप से बीज रोगाणुओं और पौध सुरक्षा के रूप में तीसरी परत में अलग करता है। इस प्रकार बीज के रोगाणु को *फाइटोटॉक्सिक* प्रभाव से बचाता है।

तीसरी परत या सुरक्षा परत

इस परत के पदार्थ में कवकनाशी और कीटनाशी हो सकते हैं। यह बीजजनित रोग और कुछ मिट्टी के कीड़ों और पत्ती के कीड़ो से सुरक्षा करने में मदद करता है।

चौथी परत या वर्णक परत

चौथी परत को पिछली परत पर सीधे लागू किया जाता है, बाद वाले को *कवर* किया जाता है जो क्षरण को रोकता है। बुवाई के दौरान यह परत सक्रिय कीटनाशक के साथ किसान के सीधे संपर्क से बचने में मदद करती है।

इस परत का रंग मनचाहा हो सकता है।

गन्ने मे सूखा नियंत्रण हेतु इथेफॉन का प्रभाव

राधा जैन
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत के कई उष्णकटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में गन्ने की वृद्धि और उत्पादकता को प्रभावित करने वाले प्रमुख पर्यावरणीय तनावों में से सूखा एक महत्वपूर्ण तनाव है। गन्ने की लम्बी विकास अवधि के कारण इसकी उपज विभिन्न विकास चरणों में पानी के तनाव के विभिन्न स्तरों से प्रभावित होती है। गन्ने की वृद्धि अवस्था मे सूखे की सहनशीलता एक विकट अवस्था होती है। भारत में, लगभग 2.97 लाख हेक्टेयर गन्ने के क्षेत्र में सूखा पड़ने का खतरा होता है, जिससे फसल एक या दूसरे चरण में विकास को प्रभावित करती है। सूखा 30–50 प्रतिशत तक पैदावार में कमी ला सकता है। सूखा प्रबंधन रणनीतियों में सूखा सहनशील प्रजाति का प्रयोग तथा उन कार्य प्रणाली को अपनाना शमिल है जो सूखे के प्रभाव को कम कर सकते हैं। सूखे का तनाव रध्रों को बंद करके और प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को रोकता है। यह *रिएक्टिव ऑक्सीजन* स्पीशीज (*आरओएस*) तथा *एंटीऑक्सीडेंट डिफेंस* के बीच संतुलन को बिगाड़ता है जिससे *आरओएस* का संचय होता है जोकि प्रोटीन, झिल्ली वसा तथा अन्य कोशिकीय घटकों के ऑक्सीडेटिव तनाव को बढ़ाता है। गन्ना बीज को इथोफॉन घोल में भिगोने तथा प्रारंभिक विकास चरण में छिड़काव करने से गन्ने के पौधों की सूखे के प्रति प्रतिरोधक क्षमता में सुधार करता है। भारत में भयंकर सूखा मई से जून के महीनों में उच्च तापमान के कारण *टिलरिंग* की अवस्था मे होता है। वर्तमान अध्ययन मे इथेफॉन की विभिन्न सांद्रता (100, 200 और 400 पीपीएम) के प्रभाव को बीज *सेट प्राइमिंग* उपचार से सूखे के प्रभाव को कम करने तथा सहनशीलता को बढ़ाने के उद्देश्य से किया गया है।

प्राप्त परिणाम में गन्ना बीज अंकुरण (71–83%) सूखा+इथेफॉन उपचार के कारण अनुचारित नियंत्रण (डी 1) (63%) की तुलना में अधिक था, जो डी3 (सूखा+100 पीपीएम इथेफॉन) में उच्चतम था। बढ़ती एथेफॉन सांद्रता के साथ, वृद्धि की दर धीरे–धीरे कम होने की पुष्टि हुई (चित्र 1)। सूखा+इथेफॉन उपचार में अंकुरित बीज भार अपेक्षाकृत अधिक था, डी4 उपचार में उच्चतम था (चित्र 2 और 3)। जड़ संख्या और लम्बाई डी 4 में तथा भार डी 2 उपचार में सबसे अधिक पाया गया (तालिका 1)। नियंत्रण की तुलना में, सूखा और सूखा+इथेफॉन उपचार में पौधे की लंबाई अधिक थी परन्तु सूखे से प्रभावित पौधों की तुलना में थोड़ा अधिक था जो बेहतर विकास का संकेत देते हैं।

जैव रासायनिक अध्ययनों ने सूखे के कारण गन्ना बीज ऊतकों में *रिड्यूसिंग* और पूर्ण शर्करा की मात्रा में वृद्धि हुई जोकि एथेफॉन उपचार मे और अधिक पाया गया, डी3 उपचार में उच्चतम और नियंत्रण उपचार में सबसे कम (चित्र 4)।

तालिका 1: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा + इथेफॉन अवस्था मे पौध विकास गुण

उपचार	जड़ संख्या	जड़ लंबाई (सेंमी)	जड़ भार (ग्रा.)	पौध लंबाई (सेंमी)
नियंत्रण	24-5 (±0-45)	4-15 (±0-32)	0-25 (±0-03)	5-1 (±0-4)
सूखा	24 (±0-89)	4-36 (±0-09)	0-33 (±0-04)	4-2 (±0-04)
सूखा+100 पीपीएम इथेफॉन	24 (±0-89)	3-72 (±0-41)	0-15 (±0-02)	4-5 (±0-36)
सूखा+200 पीपीएम इथेफॉन	29-5 (±0-45)	4-65 (±0-06)	0-21 (±0-02)	4-5 (±0-31)
सूखा+400 पीपीएम इथेफॉन	27 (±0-89)	4-26 (±0-71)	0-27 (±0-04)	4-4 (±0-58)

विकासशील (बढ़ती) कली ऊतकों के लिए *फ्री* शर्करा की उपलब्धता में एथेफॉन की सकरात्मक प्रतिक्रिया का संकेत है। डी3 उपचार मे 964 माइक्रोग्राम/100 मिलीग्राम ताजा भार में *नॉन–रिड्यूसिंग* शर्करा भी सबसे ज्यादा थी। अन्य उपचार की तुलना में डी2 और डी5 उपचार में कुल फिनॉल तुलनात्मक रूप से अधिक थी, जोकि सूखा+एथेफॉन उपचारों द्वारा और अधिक बढ़ी पाई गयी (चित्र 5)। उच्चतम प्रोलीन (52.3 माइक्रोग्राम /100 मिलीग्राम ताजा भार) सूखा+100 पीपीएम इथेफॉन उपचार (डी 3) में पायी गयी (चित्र 6)। संचित प्रोलीन, बीटेन, एबसिसिक एसिड (एबीए) मात्रा, गहरी जड़ें, धँसे रंध्र, मोटी घिल्ली और सीमित कैनोपी, ये सारे तथ्य गन्ने में सूखे की सहनशीलता के साथ संबधित) है। कई संगत विलेय के बीच, प्रोलीन एक मात्र अमीनो एसिड है जो पानी के तनाव के दौरान एकल ऑक्सीजन और *फ्री रेडिकल* से प्रेरित क्षति से पौधों की रक्षा करने के लिए उपयोगी साबित हुआ है।

जीन अभिव्यक्ति विश्लेषण में प्रयोग की गई अंकुरित कली मे नियंत्रण पौधों की तुलना में लगभग सभी उपचारों (डी2–डी5) में *एसओडी जीन* अभिव्यक्ति में वृद्धि पायी गई। ये

वृद्धि सूखा + इथेफॉन 200 *पीपीएम* (डी4) उपचार में सबसे अधिक थी। *एसओडी जीन सुपर ऑक्साइड रेडिकल्स* को कम करके सूखे की सहनशीलता में मदद करता है। इसी प्रकार एथिलीन रिसपानसिव (*ईटीआर*) *जीन* की अभिव्यक्ति नियंत्रण की तुलना में सूखा और सूखा + इथेफॉन उपचार में अधिक थी। डी4 उपचार में ईटीआर जीन अधिकतम थी। एसा सूखे की स्थिति के तहत एथिलीन के उत्पादन के कारण हो सकता है जो इथेफॉन उपचार के द्वारा आगे भी बढ़ा पाया गया (चित्र 7)। गन्ने के पौधों की प्रारम्भिक विकास चरण में कम सांद्रता वाले इथेफॉन उपचार के सकारात्मक प्रभाव से सूखे की प्रतिरोधक क्षमता में सुधार पर एक *रिपोर्ट* उपलब्ध है। पत्तों पर कम सांद्रता वाले इथेफॉन के छिड़काव ने पानी की कमी के तनाव के कारण कोशिका झिल्ली की क्षति को कम किया। *इलेक्ट्रोलाइट्स* की *ऑसमॉटिक* दर तथा घुलनशील शर्करा की अपेक्षाकृत कमी को बनाए रखा। पत्ती के ऊतकों मे *परऑक्सीडेज कैटेलेज* तथा *पॉलीफिनोल ऑक्सीडेज* की कियाओं को बढ़ावा दिया, गैस विनिमय विशेषताओं को सुधारा, पत्तियों में *स्टोमेटा* चालन, *नेट* प्रकाश संश्लेषण दर, संवहनी बंडलों के घनत्व, *इपिजेनेटिक* वाहिनियों तथा फ्लोएम के क्षेत्रों में वृद्धि की। सूखे के तहत नियंत्रण पौधों की तुलना में इथेफॉन ने शोषणीयता और रंध्र विभेदीकरण को पत्ती के ऊतकों को क्षति से बचाने में, *बाउंड वॉटर* से *फ्री वॉटर* की दर को बढ़ाने में, क्लोरोफिल की मात्रा तथा गन्ने की उपज में सर्वाधिक वृद्धि को भी बढ़ाया। पानी के तनाव की स्थिति के तहत *रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पिशीज (आर ओ एस)* जैसे *सुपरऑक्साइड* आयनों तथा *हाइड्रोजन परऑक्साइड* के संचय से उनके घटकों के ऑक्सीकरण द्वारा एंजाइमों अर्थात् *सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज, एस्कार्बेट परऑक्सीडेज, कैटेलेज, मोनोहाइड्रेट एसकार्बेट रिडक्टेज, डिहाइड्रो, सकार्बेट रिडक्टेज* और *ग्लुटाथिऑन रिडक्टेज* में से *सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज* एक ऐसा पहला एंजाइम सूचित है जो *फ्री रेडिकल* को विघटित करने में सक्षम है। यह *एंजाइम सुपरऑक्साइड रेडिकल* को उत्प्रेरित करता है। 2017 मे यू एवं अन्य ने भी सूखा तनाव के तहत मक्के के अंकुरों में इथेफॉन द्वारा प्रोलीन की मात्रा के संचय में तथा *एन्टीऑक्सीडेंट एंजाइम* की कियाओं में वृद्धि को सूचित किया।

वर्तमान प्रयोग मे इथेफॉन द्वारा अधिक प्रोलीन एवं जैव संश्लेषण में सुधार द्वारा शर्करा की उपलब्धता तथा गन्ने की अंकुरण अवस्था में *एसओडी* और *ईटीआर* की जीन अभिव्यक्ति को नियमित करके सूखे की सहनशीलता पर इथेफॉन के साथ *सेट प्राइमिंग* के लाभदायक प्रभावों को दर्शाते हैं। निष्कर्ष ये बताते हैं कि सूखे के तनाव के तहत इथेफॉन की 100 और 200 पीपीएम सांद्रता गन्ने की वृद्धि के सुधार में बहुत प्रभावी हो सकती है।

चित्र 1: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा + इथेफॉन अवस्था में *बड* अंकुरण

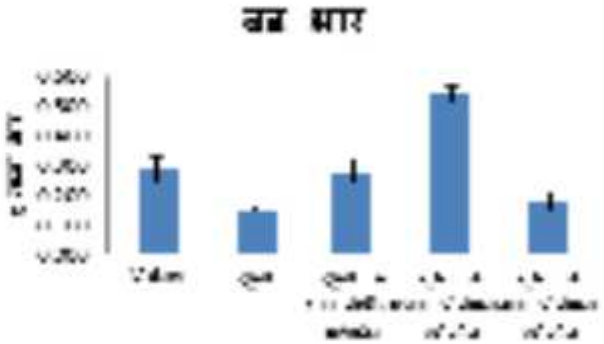

चित्र 2: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा + इथेफॉन अवस्था मे बड भार

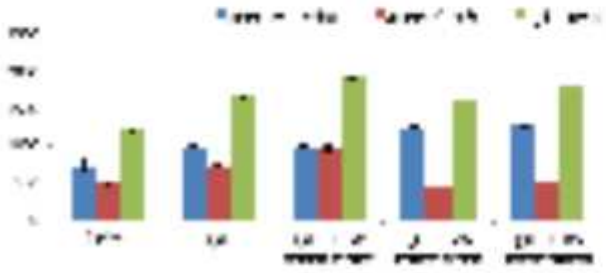

डी1 डी2 डी3 डी4 डी5

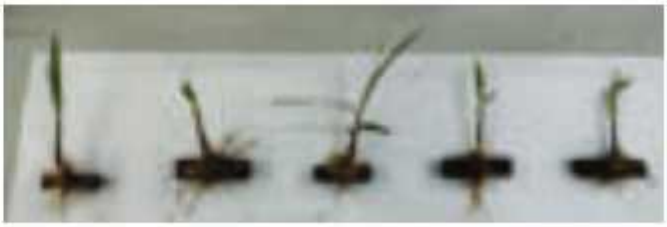

चित्र 3: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा इथेफॉन अवस्था मे फीनोटाइप डी1: नियंत्रण, डी2: सूखा, डी3: सूखा+100 पीपीएम इथेफॉन, डी4: सूखा+200 पीपीएम इथेफॉन, डी5: सूखा:400 पीपीएम इथेफॉन

चित्र 4: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा+इथेफॉन अवस्था मे शर्करा मात्रा (माइक्रोग्राम/100 मिली ग्राम ताजाभार)

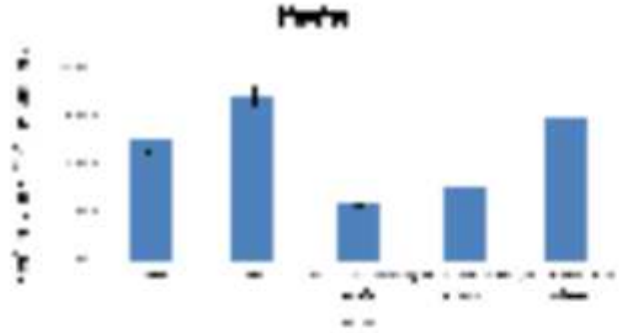

चित्र 5: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा+इथेफॉन अवस्था मे *बड* फिनोल

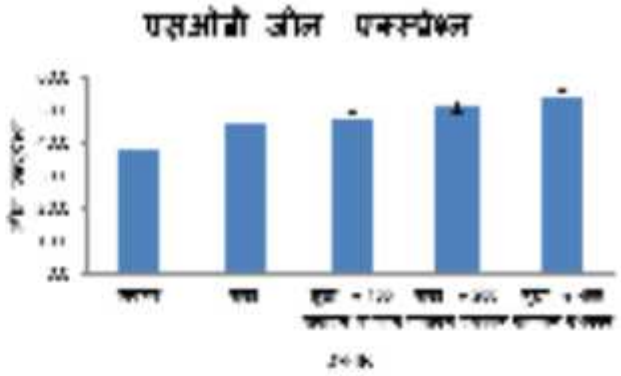

चित्र 8: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा+इथेफॉन अवस्था मे *एसओडी* एवं *ईटीआर जीन* अभिव्यक्ति

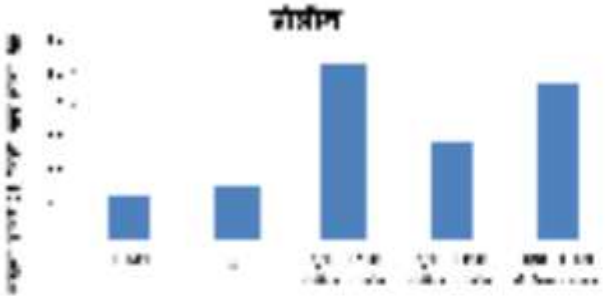

चित्र 6: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा+इथेफॉन अवस्था मे *बड* प्रोलीन

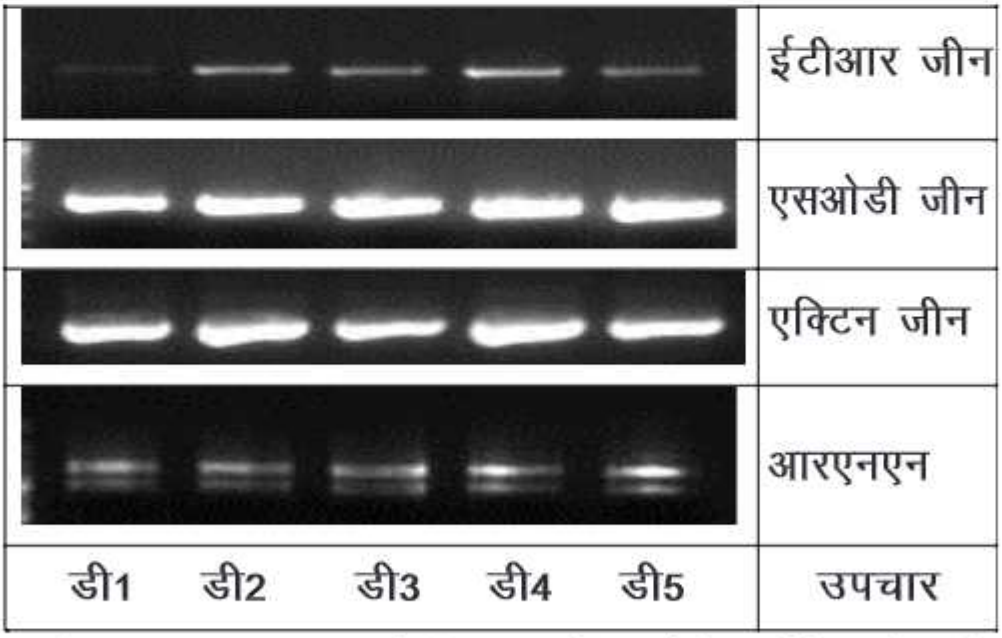

चित्र 7: नियंत्रण, सूखा एवं सूखा+इथेफॉन अवस्था मे *एसओडी* एवं *ईटीआर* जीन अभिव्यक्ति
डी1 नियंत्रण, डी2 सूखा, डी3 सूखा+100 *पीपीएम* इथेफॉन, डी4 सूखा+200 *पीपीएम* इथेफॉन, डी5 सूखा+400 *पीपीएम* इथेफॉन

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

आलू में अधिक पैदावार हेतु मुख्य पोषक तत्वों का महत्व

संजय कुमार यादव[1], सरला यादव[2], सुभाष बाबू[3] एवं विश्वनाथ प्रताप यादव[4]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]केन्द्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, पटना, बिहार
[3]भाकृअनुप–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
[4]चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

आलू की फसल की उचित बढ़ोतरी और अच्छी उपज के लिए कुल 17 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, जिसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम मुख्य पोषक तत्व हैं। जबकि गंधक, कैल्शियम और मैगनीशियम द्वितीयक एवं लोहा, जस्ता, ताँबा, निकिल, मैंगनीज तथा मौलिब्डेनम सूक्ष्म पोषक तत्व हैं। गेंहूँ और धान के मुकाबले आलू प्रति इकाई समय तथा क्षेत्रफल में अधिक शुष्क पदार्थ उत्पन्न करने की क्षमता रखता है। इसलिए आलू में पोषक तत्वों की खुराक अन्य फलों की तुलना में सामान्यतया अधिक होती है। यह पोषक तत्व प्राकृतिक खाद से मिलते हैं, परंतु मिट्टी में जैविक खाद की उचित मात्रा उपलब्ध नहीं होने के कारण रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग उचित पैदावार लेने के लिए अति आवश्यक हो जाता है। भारत में आलू उत्तर प्रदेश के मैदानी इलाकों में सबसे अधिक उगाया जाता है। सघन फसल उत्पादन के कारण यहां की मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है। इसके अतिरिक्त, जैविक खादों के कम प्रयोग की वजह से मृदा मे पाये जाने वाले जैव कार्बन की मात्रा भी सामान्य से काफी कम होती है। अतः इन तत्वों की कमी को पूरा करने के लिए खाद तथा उर्वरकों की आवश्यकता होती है। जिससे फसल की उचित पैदावार मिल सके।

मृदा जाँच का महत्व

फसल में उर्वरकों की मात्रा, मिट्टी की संरचना और उसकी उपजाऊ शक्ति, फसल चक्र, पानी की उपलब्धता, मौसम तथा आलू की किस्म पर निर्भर करती है। आलू की खेती आम तौर पर बलुई दोमट मिट्टी जिनका पीएच मान 5 से 8 के बीच होता है, उनमें सुगमता से आलू को उगाया जा सकता है। उर्वरक की उचित मात्रा का आकलन तभी किया जा सकता है जब मिट्टी की जाँच से पता लग सके कि मृदा में किस प्रमुख पोषक तत्वों की कमी या अधिकता है। जाँच के आधार पर उचित मात्रा में खेत में उर्वरक देने से मृदा की उपजाऊ शक्ति व फसल की पैदावार सुनिश्चित की जा सकती हैं जिसके फलस्वरूप प्रति इकाई क्षेत्रफल से अधिक से अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

आलू की फसल में नाइट्रोजन का महत्व

आलू की फसल में नाइट्रोजन के प्रयोग से आलू के कन्दों की संख्या और उनकें आकार में वृद्धि होती हैं। पौधों की उचित बढ़वार तथा पत्तियों की संख्या व आकार में नाइट्रोजन महत्वपूर्ण होता है। इसकी कमी से पौधों की वृद्धि रुक जाती है तथा इसकी अधिक कमी होने पर पीलापन नीचे की पतियों की तरफ से बढ़ते हुए बाद में पौधे की समस्त पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है। फलस्वरूप आलू का पौधा उचित मात्रा मे अपना भोजन नहीं बना पाता है जिससे आलू का आकार छोटा रह जाने से आलू की पैदावार पर बुरा असर पड़ता है। इसके विपरीत नाइट्रोजन की मात्रा आवश्यकता से अधिक होने पर पौधे में बढ़वार अधिक होती है जिससे कंद देर से बनते हैं और उनका आकार भी छोटा रह जाता है। साथ ही साथ नाइट्रोजन की अधिकता होने पर पौधे की परिपक्वता में भी देरी होती है और कुल फसल की अवधि अधिक हो जाती है। अतः आलू की उचित पैदावार के लिए नाइट्रोजन की मृदा जांच के आधार पर ही उचित खुराक देना चाहिए।

नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक का प्रयोग

आलू की फसल के लिए नाइट्रोजन उर्वरकों में अमोनियम नाइट्रेट सबसे अधिक उपयुक्त माना जाता है। जबकि देश मे सबसे अधिक मात्रा मे प्रयोग होने वाली यूरिया आलू की फसल के लिए अमोनियम नाइट्रेट की तुलना में कम उपयुक्त होती है। बुवाई के समय यूरिया के अधिक इस्तेमाल करने से आलू के अंकुर को हानि पहुच सकती है। अतः आलू में मिट्टी चढ़ाते समय यूरिया को देना अधिक लाभदायक होता है। जहां पर सिंचाई का समुचित प्रबंध है वहां पर नाइट्रोजन का आधा भाग बुवाई के समय तथा शेष भाग मिट्टी चढ़ाते समय देना अधिक लाभदायक होता है। ध्यान इस बात का रहे कि अमोनियम नाइट्रेट या यूरिया आलू के कंदों के साथ नहीं डालनी चाहिए क्योंकि आलू पर इसका बुरा असर पड़ सकता है। इसलिए रासायनिक उर्वरक को आलू के कंद से 5 सेंटीमीटर दूरी पर बगल में या नीचे डालकर अच्छी तरह से मिट्टी से मिला देना चाहिए। आलू में नाइट्रोजन की मात्रा आलू की किस्मों के आधार पर अलग–अलग होती है। अतः नाइटोजन उर्वरक की मात्रा आलू की किस्मों के अनुसार ही प्रयोग करना चाहिए।

आलू की फसल में फास्फोरस का महत्व

फास्फोरस आलू के पौधों की जड़ों के विकास में मदद करता है। इसके प्रयोग से आलू की फसल जल्दी तैयार होती हैं। यह

आलू के कन्दों की संख्या को बढ़ाता है। फास्फोरस का महत्व खाने वाले आलू की तुलना में बीज हेतु आलू पैदा करने में ज्यादा अहम होता है। इसकी कमी से आलू की पत्तियों का रंग गहरा हरा या बैगनी रंग का हो जाता है। अधिक कमी होने पर आलू की पत्तियाँ खुल नहीं पाती हैं और पत्तियों पर बैगनी रंग के धब्बे आ जाते हैं। फलस्वरूप आलू की पैदावार कम हो जाती है। फास्फोरस की उचित मात्रा देने से फसल जल्दी तैयार हो जाती है।

फास्फोरसयुक्त उर्वरक का प्रयोग

आलू की फसल के लिए *सिंगल सुपर फास्फेट* या *डाई अमोनियम फास्फेट (डीएपी)* अन्य फास्फोरसयुक्त उर्वरकों से अधिक उपयुक्त होता है। प्रयोग किया गया फास्फेट के 85% भाग का मिट्टी मे मिल जाता है जिसका स्थिरीकरण हो जाता है और पौधे को केवल 10 से 15% ही उपयोग कर पाते हैं। इसी कारण पौधों को फास्फोरस की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। मिट्टी की जांच के बाद ही इसकी मात्रा तय करनी चाहिए। फास्फोरस उर्वरक की संपूर्ण मात्रा बुवाई के समय नाली में कंद बीज के पास जहां पौधों की क्रियाशील जड़ें अधिक होती हैं उसी के पास देना अधिक लाभदायक होता है।

पोटैशियम का महत्व

यह आलू के पौधों को स्वस्थ रखने के साथ–साथ आलू के पौधों को सूखे और पाले से भी बचाता है। इसी कमी से पत्तियों के किनारे भूरे और काले रंग के हो जाते हैं। बहुत कमी होने पर आलू का समस्त पौधा पूरी तरह से सूख भी जाता है। पोटेशियम की प्रचुर मात्रा में होने से आलू में कीट व रोगों का प्रकोप भी कम होता है। साथ ही साथ आलू की फसल में पाले का प्रकोप कम होता है। समय से पोटैशियम के प्रयोग से आलू में बड़े आकार के कन्दों की संख्या बढ़ती है जो कि आलू की फसल के भोज्य कन्दों के बाजार में अधिक मूल्य दिलाने में सहायक होता है।

पोटैशियमयुक्त उर्वरक का प्रयोग

आलू की फसल के प्रकार (भोज्य या बीज हेतु) तथा कौन सा उर्वरक कितनी मात्रा में देनी चाहिए, इसके लिए सबसे पहले मिट्टी की जांच करना चाहिए। जांच के आधार पर ही उर्वरक का प्रयोग करना अधिक लाभदायक होता है। भोज्य फसल के लिए पोटेशियम उर्वरक की दो तिहाई मात्रा बुवाई के समय नाली में बीज कंद के पास या नीचे लगभग कंद से 5 सेंटीमीटर की दूरी पर देना चाहिए तथा शेष बचा हुआ भाग बुवाई के लगभग 30 दिन बाद आलू की फसल में मिट्टी चढ़ाते समय देना अधिक लाभदायक होता है। जबकि बीज आलू की फसल के लिए भोज्य आलू की संस्तुत मात्रा का 25% कम उर्वरक की आवश्यकता होती है और इसकी सम्पूर्ण मात्रा बुवाई के समय ही बीज फसल में देना चाहिए। अगेती क़िस्मों के बड़े आकार के आलू लेने हेतु अधिक पोटैशियम की आवश्यकता होती है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों का महत्व

उन क्षेत्रों में जहाँ रासायनिक उर्वरकों के साथ गोबर की खाद या कम्पोस्ट की खाद का प्रयोग किया जाता है वहां पर सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी नहीं होती है। इसके विपरीत जहां गोबर की खाद या कम्पोस्ट की खाद कम या नहीं प्रयोग होती है वहां पर सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता महत्वपूर्ण हो जाती है। मिट्टी की जांच के आधार पर सूक्ष्म पोषक तत्वों की बुवाई के समय या बीज आलू को सूक्ष्म पोषक तत्वों के खोल मे डुबोकर छाया में सुखाकर बुवाई करने से इनकी कमी को पूरा किया जा सकता है। खड़ी फसल में इसकी कमी देखने पर पत्तियों पर छिड़काव सही उपाय है।

जैविक खाद का महत्व

रसायनिक उर्वरकों के साथ जैविक खाद का प्रयोग करने से आलू की अधिक पैदावार होती है। इसके अलावा आलू के कंद की गुणवत्ता मे भी सुधार होता है। जैविक खाद न केवल भूमि को उपजाऊ शक्ति बनाए रखती है, बल्कि भौतिक संरचना में भी योगदान देती है। जैविक खाद नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम उर्वरक की क्षमता बढ़ाने में भी मदद करती है। अतः कार्बनिक खाद के पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध होने पर रसायनिक उर्वरक के प्रयोग में कमी की जा सकती है। खेत में रासायनिक खाद और कीटनाशक कम से कम प्रयोग तथा कार्बनिक खाद में गोबर की खाद के अलावा अन्य जैविक खादों जैसे *वर्मीकंपोस्ट, पॉल्ट्री* की खाद, नीम की खली इत्यादि का अधिक प्रयोग करके आलू की उपज तथा कन्दों की गुणवत्ता में वृद्धि होती हैं। जबकि खाद से तैयार आलू की फसल को बाजार मे अधिक मूल्य पर बेचा जा सकता है।

जैव उर्वरकों का प्रयोग

बीज कंद को जैव उर्वरक के साथ उपचारित करके लगाने से अधिक उपज की प्राप्ति होती है। इनमें मुख्य रूप से *एजैटोबैक्टर* तथा फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु *फास्फोबैक्टेरिया* (पी.एस.बी.) का प्रयोग किया जा सकता है। *एजेटोबैक्टर* मृदा मे नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करके पौधे की बढ़वार को बढ़ाता है। वही पर फास्फोबैक्टीरिया मृदा में कम घुलनशील फास्फोरस को घुलनशील फास्फोरस में बदलकर इसकी उपलब्धता को बढ़ाता है जिसके फलस्वरूप अधिक पैदावार की प्राप्ति होती है।

निष्कर्ष

आलू में पोषक तत्वों का समुचित प्रयोग करके आलू की खेती से अधिक से लाभ लेने के साथ साथ मृदा स्वास्थ्य मे सुधार किया जा सकता है। इसके अलावा, उर्वरकों के अनुचित प्रयोग से होने वाले दुष्प्रभाव से प्राकृतिक वातावरण को भी बचाया जा सकता है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में गन्ना खेती की उन्नत सस्य क्रियाएं

राम रतन वर्मा, तपेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, पुष्पा सिंह, कामता प्रसाद एवं दिलीप कुमार
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विश्व स्तर पर गन्ना उत्पादन के दृष्टिकोण से भारत का दूसरा स्थान है। गन्ना फसल की खेती नकदी फसल के रूप में की जाती है। इस फसल की खेती अन्य प्रमुख फसलों की तुलना में आर्थिक तौर पर अधिक लाभकारी होती है। भारत में जितना क्षेत्रफल गन्ना फसल के अन्तर्गत आता हैं उसका करीब 55 प्रतिशत भाग अकेले उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में है। उत्तर एवं दक्षिण भारत की जलवायु में काफी अन्तर है। उत्तर भारत की जलवायु उपोष्ण कटिबन्धीय है। सामान्यतः उत्तर भारत की जलवायु में दक्षिण भारत की तुलना में अधिक मौसम परिवर्तन होता है। मुख्य रूप से सर्दी के दिनों में तापमान बहुत ही कम और गर्मियों के दिनों में तापमान बहुत ही अधिक होता है। चूंकि गन्ना की फसल एक साल की है इसलिए इसे न्यूनतम एवं अधिकतम दोनों ही प्रकार के तापमान से गुजरना पड़ता है। जबकि इस प्रकार की जलवायु फसल की अच्छी वृद्धि एवं विकास हेतु उपयोगी नहीं होती है। बहुत कम या अधिक दोनों ही तापमान की स्थिति इस फसल की बढ़त एवं विकास को प्रभावित करती हैं। उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्र में गन्ना फसल से अधिक उपज एवं आय प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक तरीके से गन्ना फसल की सस्य क्रियाओं को अपनाकर किसानों की आय में अधिक वृद्धि सम्भव है।

खेत की तैयारी

गन्ने की फसल खेत में करीब 10–12 महीने तक खड़ी रहती है और इसकी खेती करने के लिए सामान्यतः लगातार मशीनरी का उपयोग किया जाता है। जिसके कारण मिट्टी में एक निश्चित गहराई के बाद एक कठोर परत के बनने की सम्भावना रहती है। इसलिए खेत की तैयारी गन्ना फसल बुआई से पूर्व भली–भांति करना बहुत ही महत्वपूर्ण है, जिससे कि फसल हेतु मृदा की उचित भौतिक दशा उपलब्ध करायी जा सके, जो कि पोषक तत्वों को ग्रहण करने एवं उचित जल धारण क्षमता के साथ–साथ वायु संचरण को बढ़ा सके और मृदा नमी अधिक दिनों तक बनाये रखने में सक्षम हो। साथ ही गन्ने के टुकड़े बोने के उपरान्त अच्छा जमाव प्राप्त करने में सहायक सिद्ध हो सके। आम तौर पर जो गन्ना फसल हेतु तैयारी की जाती है उसके अतिरिक्त प्रत्येक 3–4 साल के अन्तराल पर एक बार *चिजलर* यंत्र से एक मीटर की दूरी पर 50 सें.मी. गहरी आड़ी–तिरछी (*क्रिस–क्रास*) जुताई की जानी चाहिए। उत्तर भारत की मैदानी क्षेत्रों की मृदाओं में सामान्यतः कार्बनिक पदार्थ की मात्रा कम पायी जाती है जबकि शोध में पाया गया है कि जीवाश्म पदार्थ की मात्रा मध्यम स्तर में रहने पर अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है। अर्थात 10–12 टन प्रति हेक्टेअर की दर से गोबर की सड़ी हुई खाद अथवा प्रेस मड का प्रयोग मृदा की भौतिक दशा सुधारने के साथ–साथ फसल से अधिक उपज प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होता है।

गन्ना बीज

गन्ना फसल से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि स्वस्थ गन्ना बीज का चुनाव किया जाय। क्योंकि गन्ना फसल की खेती करने के लिए बीज एक प्रमुख निवेश है। इसलिए गन्ना फसल बुआई से पूर्व खेत की भली–भांति तैयारी करना बहुत ही महत्वपूर्ण है। जिससे अच्छी फसल हेतु मृदा की उचित भौतिक दशा प्राप्त की जा सके। इसका सीधा असर फसल की वृद्धि, विकास एवं उपज पर पड़ता है। उत्तर भारत में एक हेक्टेयर खेत की बुआई करने हेतु लगभग 60–70 कुन्तल गन्ना बीज की आवश्यकता पड़ती है। अधिक मात्रा में गन्ना बीज की आवश्यकता और परिवहन में लगने वाले खर्च के कारण किसान प्रति वर्ष शोध संस्थानों से बीज नहीं खरीद पाते हैं और अपने पास उपलब्ध फसल से अगली फसल के लिए बीज ले लेते हैं। ऐसी दशाओं में यह विशेष तौर पर ध्यान रखना चाहिए कि बीज के लिए चुनी गयी फसल 8–10 महीने की हो तथा बीमारियों एवं कीड़ों–मकोड़ों से मुक्त हो। शोध से यह सिद्ध हुआ है कि 3 आँख के टुकड़ों को 50 पी.पी.एम. इथेल के घोल में रात भर डुबोकर बोने से कम समय में अधिक गन्ना जमाव प्राप्त किया जा सकता है। गन्ना जमाव अच्छा हो इसके लिए मृदा की उचित दशा के साथ–साथ जलवायु का भी बहुत महत्व होता है। अच्छा जमाव प्राप्त करने के लिए वातावरण का तापमान 20–30 डिग्री सें. के बीच उचित रहता हैं जबकि बहुत कम (10 डिग्री सें. से कम) या फिर बहुत अधिक (40 डिग्री सें.) से अधिक दोनों ही दशाओं में गन्ना जमाव पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

गन्ना बुआई का समय

गन्ने के टुकड़ों की आँख जमाव के लिए एक विशेष तापमान की आवश्यकता के अनुसार एवं फसल चक्र के अनुसार उत्तर भारत में गन्ने की बुआई मुख्यतया तीन मौसम में की जाती है :

शरदकालीन गन्ना बुआई

जब गन्ने की बुआई अक्टूबर – नवम्बर माह में की जाती है तो इसे शरदकालीन गन्ना बुआई कहते हैं। शरदकालीन गन्ने की बुआई सामान्यतया खरीफ की फसलों की कटाई के बाद की

जाती है। इस मौसम में बुआई करने से जमाव के लिए बेहतर जलवायु मिलती है, जिसके फलस्वरूप गन्ना जमाव अच्छा होता है और फसल के लिए अधिक समयावधि (लगभग 12 से 15 माह) मिलती है, जिससे इस समय पर बोयी गयी फसल की पैदावार बसंतकालीन एवं ग्रीष्मकालीन गन्ने की तुलना में अधिक होती है। इस समय की गन्ना बुआई से अधिक पैदावार होने के बावजूद किसानों द्वारा इसे कम पसंद किया जाता है क्योंकि किसान इस समय गन्ना की बुआई करने से रबी की फसल नहीं ले पाते हैं। शरदकालीन गन्ना बुआई के लाभ लेने के लिए शरदकालीन गन्ने के साथ में अन्तः फसल के तौर पर एक कम समयावधि की रबी फसल गन्ने की दो पंक्तियों के बीच में लेनी चाहिए। गन्ना फसल के साथ गेहूँ, आलू, दलहनी एवं सब्जियों की फसलें ली जा सकती हैं।

बसन्तकालीन गन्ना बुआई

उत्तर भारत में बसन्तकालीन गन्ना बुआई अधिक प्रचलित है। इस मौसम में गन्ने की बुआई कम अवधि की रबी फसलों जैसे– सरसों, तोरिया और आलू को लेने के बाद फरवरी व मार्च में की जाती है। बसन्तकालीन गन्ना बुआई के लिए 15 फरवरी से 15 मार्च के बीच का समय सर्वाधिक उचित होता है। इस बीच में बुआई करने से उचित मौसम दशाओं के कारण गन्ना जमाव अच्छा होता है।

ग्रीष्मकालीन / देर से बुआई

उत्तर भारत में गेहूँ की फसल कटने के बाद जब गन्ना की बुआई की जाती है तो उसे ग्रीष्मकालीन या देर से गन्ना बुआई कहते हैं। इस समय वायुमण्डल का तापमान अधिक होने के कारण गन्ना जमाव के लिए अनुकूल नहीं होता है तथा किल्ले निकलने की संख्या पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा पंजाब और हरियाणा में इस समय की बुआई अधिक प्रचलित है क्योंकि किसान यहाँ गेहूँ की कटाई के बाद गन्ना की बुआई करते हैं। इस समय बोई गई फसल की पैदावार शरद एवं बसंतकालीन गन्ना बुआई की तुलना में कम होती है।

गन्ना बुआई की विधियाँ

उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों के लिए गन्ना बुआई की निम्नलिखित विधियों का विकास किया गया है :

समतल विधि

गन्ना बुआई की इस विधि में मिट्टी पलटने वाले हल से 1–2 गहरी जुताई के बाद हैरो से जुताई करके पाटा लगाकर मिट्टी को भुरभुरी कर दिया जाता है। इसके पश्चात् 10–15 सें.मी. गहरी नाली खोलकर गन्ने के टुकड़ों को सिरा से सिरा मिलाकर या आँख से आँख मिलाकर शरदकाल में 90 सें.मी. व बसंतकाल में 75 सें.मी. की दूरी पर बनी पंक्तियों में बो दिया जाता है। गन्ना बोने के पश्चात् नमी को अधिक समय तक संरक्षित करने के लिए पाटा लगा दिया जाता है। उत्तर भारत में गन्ना बोने की यह विधि बहुत ही प्रचलित है। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा इस विधि से गन्ना बुआई के लिए गन्ना *कटर प्लांटर* नामक मशीन का विकास किया गया है जिसकी सहायता से 30–40 मानव श्रम दिवस की जगह मात्र 5 मानव श्रम दिवस से ही एक हेक्टेयर खेत की बुआई की जा सकती है।

ट्रेंच विधि

गन्ना बुआई की यह विधि उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में बहुत अधिक प्रचलित है। इस विधि से गन्ना बोने से अन्तः फसल को दो पंक्तियों के बीच में समायोजित करना अधिक आसान होता है और जो निवेश (*इनपुट*) लगाये जाते हैं उनकी उपयोग दक्षता अधिक मिलती है। ट्रेंच 30 सें.मी. चौड़ी एवं गहरी बनायी जाती है। दो *ट्रेंच* के केन्द्र बिन्दु के मध्य की दूरी 120 सें.मी. रखी जाती है। गन्ने के कटे हुए टुकड़ों की बुआई *ट्रेंच* के दोनो किनारों (30–30) के किनारों पर की जाती है। इस विधि से गन्ना बुआई करने से गन्ना खेती में मशीनों का प्रयोग अधिकाधिक किया जा सकता है। इस विधि से बुआई में मानव श्रम की बचत होती है और सिंचाई दक्षता अधिक होती है। इस विधि से गन्ना बुआई करके करीब 110 टन प्रति हे. गन्ना उपज प्राप्त की जा सकती है तथा लाभः लागत अनुपात 2.15 तक प्राप्त किया जा सकता है।

गन्ना बोने की *ट्रेंच* विधि

फर्ब विधि

गन्ना बोने की इस विधि का विकास भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा किया गया है। इस विधि में गन्ना एवं गेहूँ की फसलों की खेती एक साथ की जाती है। *फर्ब* का तात्पर्य है *फरो इरीगेटेड रेज्ड बेड*। इस विधि में गेहूँ की बुआई मेड़ पर की जाती है तथा गन्ने के टुकड़ों की बुआई नालियों में की जाती है। इस विधि का यह लाभ है कि गेहूँ की बुआई निश्चित समय पर ही कर दी जाती है और गन्ने के टुकड़ों की बुआई बसंतकाल में फरवरी–मार्च के महीने में की जाती है। इस विधि से गन्ना बुआई करने में गन्ना फसल को देर से गन्ना बुआई विधि की अपेक्षा अधिक समय मिल जाता है, जिससे कि फसल की पैदावार अधिक मिलती है व उसकी गुणवत्ता अच्छी प्राप्त होती है। इस विधि में *फर्ब* का कान्फीग्रेशन 80–22 सें.मी. होता है। इस विधि में मेड़ पर गेहूँ की 2–3 पंक्तियों तथा नाली में गन्ने की बुआई नवम्बर महीने में की जाती है अथवा गन्ने की

बुआई फरवरी व मार्च के महीने में सिंचाई करने के बाद नालियों में गन्ना टुकड़ा डालकर पैर से दबाकर कर देते हैं। गेहूँ के बाद गन्ना बोने की अपेक्षा इस विधि से खेती में गेहूँ की पूर्ण उपज व गन्ना फसल की 30 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त होती है।

बड चिप विधि

इस विधि में गन्ने से उसकी आँखों को *स्कूप* करके निकाल लिया जाता है और उसके बाद उनको विशेष पादप वृद्धि हार्मोन में डुबोकर रखा जाता है। तत्पश्चात् फफूँदीनाशक दवा से शोधित करके मिट्टी, कार्बनिक खाद एवं बालू के 1:1:1 के मिश्रण से बनी हुई 15 सें.मी. ऊँची क्यारियों में बो दिया जाता है। इस तरह से तैयार पौध को 5 सप्ताह के बाद पहले से तैयार खेत में लगा दिया जाता है। इस विधि से गन्ना लगाने से किल्ले एक साथ व मजबूत निकलते हैं तथा प्रति इकाई क्षेत्रफल मिल जाने योग्य गन्नों की संख्या अधिक प्राप्त होती है। इस विधि में गन्ना बीज की बचत होती है क्योंकि एक हेक्टेयर खेत की बुआई के लिए 20 कुन्तल गन्ने की जरूरत होती है और बचे हुए गन्ने के भाग को अन्य उपयोग में ला सकते हैं और यातायात में आने वाले खर्च को भी कम किया जा सकता है।

सिंचाई प्रबंधन

उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में उगायी जाने वाली अन्य फसलों की तुलना में गन्ना फसल अधिक जल चाहने वाली फसल है। उत्तर भारत में एक साल में गन्ना फसल उगाने के लिए लगभग 1400–1500 मि.मी. पानी की आवश्यकता होती है। किसानों द्वारा उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में वैज्ञानिक तरीके से सिंचाई जल प्रबंधन नहीं किया जाता है तो ऐसी दशाओं में जल उपयोग दक्षता मात्र 30–35 प्रतिशत के बीच ही प्राप्त हो पाती हैं। गन्ना सिंचाई जल की मात्रा को कम करने के लिए सिंचाई की नवीन विधियों का विकास किया गया है जैसे कि *स्किप फरो* विधि, *ड्रिप* विधि, फसल की कांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई और पताई का उपयोग। जिनसे गन्ना फसल सिंचाई में प्रयुक्त होने वाले पानी की मात्रा में बचत की जा सकती है।

एकान्तर नाली सिंचाई विधि

समतल विधि से बोये हुए गन्ने के खेत में इस विधि से एक कूँड को छोड़कर सिंचाई की जाती है। इस विधि से सिंचाई करने के लिए गन्ना जमाव के बाद 15 सें.मी. गहरी 30 सें.मी. चौड़ी नालियाँ गन्ने की पंक्तियों के बीच में एकान्तर क्रम में बनायी जाती हैं। सम्पूर्ण खेत सिंचाई के स्थान पर इन नालियों से खेत की सिंचाई की जाती है। इस विधि से सिंचाई करने से कम सिंचाई जल में परम्परागत सिंचाई विधि की तुलना में कम सिंचाई जल की आवश्यकता पड़ती है। इस विधि से सिंचाई करने से करीब 35–40 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है और सिंचाई जल की उपयोग दक्षता 60–65 प्रतिशत तक प्राप्त होती है और लाभ लागत अनुपात 95 प्रतिशत तक ही रहता है।

गन्ने के खेत में एकान्तर नाली सिंचाई विधि

ड्रिप सिंचाई विधि

गन्ने की बुआई में चूंकि पंक्ति से पंक्ति की दूरी अधिक होती है, इसलिए यह फसल *ड्रिप* विधि से सिंचाई करने के लिए अधिक उपयुक्त है। इस विधि को अपनाकर फसल की अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है। इस सिंचाई विधि में जमीन के ऊपर *ड्रिप* की *लेटरल प्लास्टिक पाईप* को गन्ने की दो पंक्तियों के बीच में बिछा दिया जाता है। जिसमें पानी को निकलने के लिए समान दूरी पर छोटे–छोटे छिद्र वाले *एमीटर* लगे होते हैं। सिंचाई जल जब अधिक दबाव के साथ *लेटरल पाईप* में बहता है तब इन *एमीटर* से बूँदों के रूप में पानी बाहर निकल कर जमीन को नम करता है। इस विधि से सिंचाई करते समय रासायनिक उर्वरकों को भी एक समान सम्पूर्ण खेत में दिया जा सकता है। इस सिंचाई विधि से करीब 40–50 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत सामान्य सिंचाई विधि की तुलना में की जा सकती है। सिंचाई जल की उपयोग दक्षता को परम्परागत विधि की तुलना में लगभग 30 प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है एवं इस विधि से लाभ– लागत का अनुपात करीब 2.7 रहता है। *ड्रिप* विधि के लिए एक बार *पाईप* व अन्य *सिस्टम* को लगाकर इसका उपयोग मुख्य फसल तथा दो पेडी फसलों में सफलतापूर्वक किया जा सकता है। बहुत से प्रदेशों में *ड्रिप* सिंचाई विधि पर सरकार द्वारा छूट प्रदान की जाती है। किसान इस छूट का लाभ उठा सकते हैं।

क्रांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई

गन्ना उगाने वाले क्षेत्रों में कम पानी की उपलब्धता होने पर सीमित पानी का उपयोग सिंचाई के रूप में उसकी क्रांतिक अवस्थाओं पर करके सिंचाई जल की उपयोग दक्षता को बढ़ाया जा सकता है। गन्ना फसल में निम्नलिखित क्रांतिक अवस्थाएं निर्धारित की गयी हैं–

1. गन्ना जमाव के समय (गन्ना बुआई के 45 दिन बाद तक)
2. किल्ले निकलने की प्रथम अवस्था (गन्ना बुआई के 65 दिन बाद)
3. किल्ले निकलने की द्वितीय अवस्था (गन्ना बुआई के 85 दिन बाद)
4. किल्ले निकलने की तृतीय अवस्था (गन्ना बुआई के 105 दिन बाद)

पानी की उपलब्धता के अनुसार यह सुनिश्चित किया जाए कि गन्ना फसल की उपरोक्त क्रांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई की जाए।

पताई बिछाना

गन्ना फसल बहुत अधिक मात्रा में पत्तियों का उत्पादन करती है। एक हेक्टेयर खेत से लगभग 12–13 टन सूखी पत्तियाँ प्राप्त होती हैं। यह पत्तियाँ कार्बनिक पदार्थ का अच्छा स्त्रोत होती है और सड़ने के बाद खेत में पोषक तत्वों को भी प्रदान करती हैं। इन पत्तियों को खेत में बिछाकर पानी को खेत में अधिक समय तक संरक्षित किया जा सकता है तथा इसके साथ ही खेत को खरपतवारमुक्त भी रखा जा सकता है। क्योंकि जिन खेतों में पताई बिछाई जाती है उनमें खरपतवार बहुत ही कम निकलते हैं। गन्ने की सूखी पत्तियों को हटाकर ठूँठों की कटाई छँटाई करने के पश्चात् प्रथम गुड़ाई व उर्वरक डालने के बाद पेड़ी खेत में 7–10 सें.मी. मोटी परत के रूप में पत्तियों को एक समान सम्पूर्ण खेत में बिछा दें। इस प्रकार से पत्तियों के *मल्च* के रूप में प्रयोग कर 40–45 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत की जा सकती है तथा लाभ लागत अनुपात 2.4 तक प्राप्त किया जा सकता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

अन्य फसलों की तुलना में गन्ना की फसल अधिक मात्रा में पोषक तत्वों का अवशोषण करती है। एक हेक्टेयर खेत से प्रति 100 टन गन्ना उपज हेतु नत्रजन 280 कि.ग्रा, फास्फोरस 53 कि.ग्रा, पोटाश 280 कि.ग्रा, गंधक 30 कि.ग्रा, आयरन 3.4 कि.ग्रा, मैगनीज 1.2 कि.ग्रा, जस्ता 0.6 कि.ग्रा, तांबा 0.2 कि.ग्रा, का अवशोषण मृदा से होता है। आमतौर पर उत्तर भारत की मृदाओं में नत्रजन पोषक तत्व की कमी पायी जाती है। इसके अतिरिक्त, इन मृदाओं में 50 प्रतिशत फास्फोरस व 20 प्रतिशत पोटेशियम पोषक तत्वों की कमी पायी जाती है। इसलिए यह आवश्यक है कि क्षेत्र विशेष में मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता के आधार पर पोषक तत्वों का प्रबंधन किया जाए जिससे कि सतत् अधिक गन्ना उपज प्राप्त की जा सके और मृदा की उर्वरा शक्ति को भी बनाये रखा जाए। गन्ना फसल की वृद्धि एवं विकास में पोषक तत्वों का बहुत महत्व होता है। इनका गन्ना रस की गुणवत्ता तथा शर्करा निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान होता है। पेराई योग्य गन्नों की संख्या व उनकी गुणवत्ता का गन्ना फसल की उत्पादकता पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। जिसका निर्धारण मुख्य तौर पर गन्ने में किल्ले बनने की अवस्था पर पोषक तत्वों को खेत में देने तथा उनका पौधों की अवशोषण क्षमता पर निर्भर करता है। किल्ले बनने के समय गन्ने की पत्तियों में औसतन 1.95 से 2.0 प्रतिशत नत्रजन की मात्रा होनी चाहिए। नत्रजन पोषक तत्व गन्ना उपज बढ़ाने के लिए एक प्रमुख पोषक तत्व है। नत्रजन पोषक तत्व पेराई योग्य गन्ना संख्या बढ़ाने के साथ–साथ उनका प्रति गन्ना वजन बढ़ाने में भी सहायक है। मृदा स्वास्थ्य व सघन कृषि प्रणाली के कारण वर्तमान में उत्तर भारत में नत्रजन की 150 कि.ग्रा. मात्रा बावक गन्ना फसल हेतु व 225 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर पेडी गन्ना हेतु संस्तुत की गयी है। नत्रजन की संस्तुत मात्रा को फसल में इस हिसाब से बांटकर देना चाहिए जिससे कि किल्ले निकलने की अवस्था में इसकी पर्याप्त मात्रा मिलती रहे। उत्तर प्रदेश व बिहार राज्य में नत्रजन की सम्पूर्ण मात्रा को गन्ना बुआई के 90 दिन के अन्दर ही 2–3 बार में डाल देना चाहिए। पंजाब व हरियाणा में नत्रजन की आधी मात्रा बुआई के समय कूँड़ों में डालना निर्धारित है तथा शेष मात्रा को खड़ी फसल में पंक्तियों में छिड़काव करना चाहिए। शरदकालीन गन्ना बुआई की स्थिति में नत्रजन की एक तिहाई मात्रा बुआई के समय कूँड़ों में तथा बची हुई नत्रजन को बराबर मात्रा में मार्च–अप्रैल और मई के महीने में खड़ी फसल में डालना चाहिए। वर्षा आधारित गन्ना खेती के लिए 75 कि.ग्रा. नत्रजन की मात्रा निर्धारित की गयी है।

फास्फोरस की उपयोग दक्षता फसल द्वारा मात्र 10–20 प्रतिशत है, इसलिए यह संस्तुत किया जाता है कि इसकी उपयोग की जाने वाली मात्रा का निर्धारण मृदा परीक्षण के आधार पर किया जाए। गन्ना फसल 20–25 प्रतिशत उपयोग क्षमता किल्ले निकलते समय तक होता है और बाकी 75–80 प्रतिशत उपयोग गन्ना की लम्बवत् बढ़वार के समय किया जाता है। गन्ने की लम्बाई, मोटाई तथा संख्या फास्फोरस से प्रभावित होती है। इसका प्रभाव नत्रजन की बढ़ी हुई मात्रा के साथ अधिक बेहतर होता है। फास्फेटिक उर्वरकों की उपयोग दक्षता क्रमशः *डी.ए.पी.* एवं *एस.एस.पी.* के घटते क्रम में होती है। गन्ने में फास्फोरस की सम्पूर्ण मात्रा बुआई के समय कूँड़ों में डालना संस्तुत किया गया है। गन्ने के रस में 300 *पी.पी.एम.* फास्फोरस की मात्रा को क्रान्तिक पाया गया है जिससे कि रस में क्रिस्टलाइजेशन की किया अच्छी होती है व चीनी का रंग उत्तम प्राप्त होता है।

पोटेशियम प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेड की बनाने एवं पौधे में एक भाग से दूसरे भाग में स्थानान्तरण में प्रमुखता से सहायक होता है। यह पौधों में मुख्य घटक सुक्रोज के बनने में सहायक होता है। पोषक तत्वों में पोटैशियम एक ऐसा पोषक तत्व है, जिसकी आवश्यकता गन्ना उत्पादन में सबसे अधिक है। भारतीय मृदाओं में सामान्यतः पोटैशियम प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है जिससे कि

इसका उत्पादन पर असर अलग–अलग राज्यों में भिन्न–भिन्न होता है। सूखा पड़ने की स्थिति में पोटैशियम एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। जिससे कि पौधों से शीघ्र नमी ह्रास को कम करता है। उत्तर भारत में 40–90 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से सूखा होने की स्थिति में पोटैशियम दिया जाना संस्तुत है। पोटैशियम की सम्पूर्ण मात्रा बुआई के समय कूँड़ों में दिया जाना चाहिए। पौधों में पोटैशियम की अधिक मात्रा पौधों की कोषिकाओं में अच्छा जल संचय रखने में सहायक होता है। लेकिन गन्ना रस में अधिक पोटैशियम की मात्रा चीनी के *किस्टलाइजेशन* पर विपरीत प्रभाव डालती है।

पोषक तत्वों की पौधों को आवश्यकता के आधार पर गंधक पोषक तत्व को द्वितीयक पोषक तत्व की श्रेणी में रखा गया है। द्वितीयक श्रेणी के पोषक तत्वों में गंधक का गन्ना उत्पादकता पर अधिक प्रभाव पड़ता है। जहॉ पर नत्रजन पोषक तत्व की कमी है, ऐसी मृदाओं में नाइट्रोजन के साथ–साथ 30 कि.ग्रा. गंधक की मात्रा का उपयोग उत्पादकता बढ़ाने में सहायक होता है।

खरपतवार प्रबन्धन

गन्ना खरपतवारों से बहुत अधिक प्रभावित होने वाली फसल है। इस फसल में खरपतवारों से 10 प्रतिशत से लेकर लगभग सम्पूर्ण फसल तक का नुकसान हो सकता है। खेत में गन्ने अंकुरित/जमाव होने में करीब 40–45 दिन का समय लगता है इस अवधि में खेत पूर्णतया खाली रहता है। इस समय खरपतवार शीघ्र जमकर पूर्ण रूप से विकसित होने के लिए बिना स्पर्धा के पर्याप्त समय मिल जाता है। फसल में खरपतवारों को सफलतापूर्वक सस्य क्रियाओं एवं मशीनों का प्रयोग करके पूर्णतया रोकथाम की जा सकती है और उनसे फसल को होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है। यांत्रिक विधि से खरपतवार नियंत्रण अपनाने से मृदा की भौतिक दशा को उत्तम बनाए रखा जा सकता है जो कि गन्ना फसल की बढ़वार के लिए लाभदायक है। यांत्रिक विधि से खरपतवार नियंत्रण में मानव श्रम द्वारा कुदाल से गुड़ाई तथा बैलों द्वारा चालित यंत्रों का उपयोग करके फसल के बीच में सस्य क्रियाऐं प्रमुख हैं। सस्य एवं यांत्रिक विधि से वार्षिक प्रवृत्ति के खरपतवारों का नियंत्रण करना पूर्णतया सम्भव है। उत्तर भारत में गन्ना फसल व खरपतवार के बीच स्पर्धा की क्रांतिक अवस्था वार्षिक व द्विबीजपत्री खरपतवार के समय की होती है इसलिए फसल में खरपतवार की वजह से होने वाली उपज नुकसान को सस्य व यांत्रिक विधि से कर पाना पूर्ण सम्भव है। यह पाया गया है कि गन्ने में 30, 60 व 90 दिनों पर गुड़ाई करना अत्यन्त लाभकारी है। लेकिन चौड़ी पत्ती के खरपतवारों का नियंत्रण कुदाल से सम्भव नहीं है। शरद कालीन खेती में चना व मटर तथा बसंतकालीन खेती में मूँग, उर्द व लोबिया की अन्तः फसली खेती खरपतवारों को जमनें नहीं देती है और उनसे होने वाले नुकसान को बचाने में सहायक है।

गन्ना फसल में यांत्रिक एवं सस्य क्रियाओं से खरपतवार नियंत्रण में होने वाली समस्याओं से बचने के लिए रासायनिकों का प्रयोग किया जा सकता है। गन्ना फसल की बुआई के तुरन्त बाद एट्राजीन की 2 कि.ग्रा. सक्रिय मात्रा प्रति हेक्टेयर और बुआई के 60 दिन पर 2–4–डी. का प्रयोग बहुत ही प्रभावी है। उत्तरी बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश में गन्ने की फसलों पर लिपट कर चढ़ने वाले खरपतवारों की समस्या विशेष तौर पर रहती है। इन खरपतवारों में *काक्सीनिया* प्रजाति, *आइपोमिया* प्रजाति एवं *कनवोलवुलस रवेंशिन्स* प्रमुख हैं, जो कि फसल की उपज को बहुत ज्यादा प्रभावित करते हैं तथा गन्ने की कटाई में कठिनाई उत्पन्न करते हैं। इन खरपतवारों की रोकथाम के लिए मेट्रीब्यूजिन की 1.25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर सक्रिय तत्व की मात्रा संस्तुत की गयी है। एक विधि से खर–पतवार नियंत्रण की अपेक्षा, एकीकृत विधि से खरपतवार नियंत्रण गन्ना फसल में सबसे ज्यादा प्रभावी है, क्योंकि इस माध्यम से खरपतवार नियंत्रण से एक विधि की कमियों को दूसरी विधि के खरपतवार नियंत्रण विधि से पूरा कर दिया जाता है। एकीकृत विधि में गन्ना बुआई के तुरन्त बाद (2–3 दिन अन्दर) एट्राजीन की 2 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर सक्रिय तत्व की मात्रा तथा 60 दिन पर 2, 4 डी की 1.0 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर सक्रिय तत्व की मात्रा का उपयोग किया जाता है तथा 90 दिन पर एक गुड़ाई करना संस्तुत है। इस विधि से खरपतवार नियंत्रण अच्छा होता है।

उत्तर भारत के मैंदानी क्षेत्रों में गन्ना फसल 10–12 महीने में पेराई करने योग्य तैयार हो जाती है। इस अवधि में फसल अपनी वृद्धि के विभिन्न स्तरों से होकर गुजरती है। इन विभिन्न स्तरों में सस्य क्रियाओं का जमाव से लेकर किल्ले बनने व अन्ततः पेराई योग्य गन्ने बनने एवं सुक्रोज संचयन इत्यादि में बहुत ही महत्व होता है। यदि उपरोक्त बताई गई वैज्ञानिक सस्य क्रियाओं को गन्ना खेती में अपनाया जाए तो निश्चित रूप से प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक फसल उत्पादन लिया जा सकता है। जिससे कि किसानों की आमदनी में वृद्धि होगी तथा इसके साथ ही साथ, गन्ना खेती में आने वाली लागत में भी कमी की जा सकती है। भूमि, जल तथा फसल उत्पादन में उपयुक्त किये गये उर्वरकों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है तथा गन्ना फसल से जुड़े हुए चीनी एवं अन्य उद्योगों को सतत लाभकारी बनाया जा सकता है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ना आधारित फसल चक्र में कृषि आय बढ़ाने हेतु गेंदा की वैज्ञानिक खेती

संजय कुमार यादव, सुधीर कुमार शुक्ल, विजय प्रकाश जायसवाल, अरुण बैठा एवं अश्विनी दत्त पाठक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना हमारे देश की एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। उत्तर भारत में गन्ना की बुवाई के पूर्व खरीफ मौसम में मुख्य तौर पर धान की फसल उगाई जाती है। अनुसंधान से यह ज्ञात हुआ है कि खरीफ में कम वर्षा वाले क्षेत्रों में धान के स्थान पर गेंदा की फसल लगाकर कम लागत में अधिक मुनाफा प्राप्त किया जा सकता है। धान की तुलना में गेंदा की खेती करने से सिंचाई की कम जरूरत होती हैं जिसके फलस्वरूप धान में अधिक जल उपयोग से घटते जलस्तर को भी गेंदा की खेती करके रोका जा सकता है। गन्ना आधारित फसल चक्र में जो कम अवधि में तैयार होने के कारण धान के स्थान पर गेंदा आसानी से समायोजित करके सफलतापूर्वक सामान्य से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में लगाया जा सकता है। अतः गेंदा की व्यवसायिक खेती कम अवधि मे किसानों की आय बढ़ाने में बेहतर विकल्प हो सकती है।

गेंदा का उपयोग

गेंदा का पुष्प व्यवसाय मे महत्वपूर्ण योगदान है। इसकी खेती मुख्य तौर पर शादी–विवाह, जन्म दिन, सरकारी व निजी संस्थानों के कार्यक्रम में फूल की आवश्यकता की पूर्ति हेतु बड़े स्तर पर की जाती है। दशहरा व दीपावली के त्योहारों पर गेंदा की फूल की आवश्यकता और बढ़ जाती है। सजावट के रूप में प्रयोग होने के कारण से इसकी मांग दिन–प्रति–दिन बढ़ती जा रही है। अच्छी किस्मों का विकास होने के कारण इसकी खेती व्यावसायिक तौर पर करके धान की खेती की तुलना में कम लागत से कम समय में अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

जलवायु

गेंदा की खेती आमतौर पर मानसून, सर्दी व गर्मी के मौसम में आसानी से की जा सकती है। जिन क्षेत्रों में औसतन सामान्य से कम वर्षा होती है उनमें इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। जल निकास की समुचित व्यवस्था होने पर इसकी खेती अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में चौड़ी उथली *बेड* बनाकर भी आसानी से की सकती है।

भूमि

गेंदा की खेती के लिए उचित जल निकास वाली मध्यम उर्वरता वाली दोमट मिट्टी में आसानी से फूलों की सामान्य उपज प्राप्त होती है। बलुई दोमट मृदा में भी इसकी खेती आसानी से की जा सकती है। छायादार जगह पर इसकी खेती नहीं करनी चाहिए क्योंकि गेंदें की अधिक उपज के लिए सूर्य के प्रकाश की भरपूर आवश्यकता होती है। जल भराव वाली भूमि गेंदा की खेती हेतु उचित नहीं होती है।

गेंदा का प्रवर्धन

मुख्य तौर पर गेंदा की खेती बीज द्वारा नर्सरी में पौध उगाकर की जाती है। नर्सरी जून के महीने में उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में डालनी चाहिए। मृदा की उर्वरा शक्ति तथा समुचित प्रबंधन द्वारा नर्सरी में बीज से पौध लगभग 30 दिन में रोपाई के योग्य हो जाती है।

नर्सरी तैयार करना

गेंदा की एक हेक्टेयर खेत की रोपाई के लिए 1.25–1.50 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। नर्सरी के लिए उचित जल निकास वाला खेत जिसमें कार्बनिक खाद की मात्रा अधिक हो, उपयुक्त रहता है। नर्सरी वाले खेत आमतौर पर 15 सें.मी. ऊँचा रखते हैं। आवश्यकतानुसार नर्सरी की चौड़ाई 1 से 1.5 मीटर रखते हैं जिससे खरपतवारों को आसानी से निकाला जा सके। जबकि लंबाई कम या अधिक रख सकते हैं। *नर्सरी में* बीज डालने के तुरंत बाद *नर्सरी बेड* को सीधी धूप से बचाने हेतु ऊपर से किसी *ग्रीन शेड* या तिरपाल से ढक देना चाहिए। *नर्सरी में* बीज को चींटियों से बचाने हेतु चारों तरफ से हल्की पतली नाली बनाकर उसमें पानी भर देना चाहिए या किसी कीटनाशी धूल की चारों तरफ से पतली लाइन बना देना चाहिए जिससे कि चींटियां नर्सरी में प्रवेश न कर सकें। आमतौर पर लगभग 30 दिन में नर्सरी से पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाती है।

खेत की तैयारी तथा पौध रोपण

उचित आकार की खेत की क्यारी की लंबाई व चौड़ाई को ढाल के अनुसार अच्छी तरह से बना लेना चाहिए। ध्यान रहे कि मिट्टी पूर्णरूप से भुरभुरी और मुलायम हो जाए। गर्मी के मौसम में गहरी जुताई करने के बाद कुछ दिनों तक खेत को खुला छोड़ देना चाहिए जिससे खेत में खरपतवार तथा कीड़े धूप में नष्ट हो जाएं। वर्षा होने पर दो – तीन बार *डिस्क हैरो* या *कल्टीवेटर* द्वारा खेत की जुताई करने के बाद खेत को समतल करके समुचित जल प्रबंधन तथा जल निकास की नाली बना लेना चाहिए। जब मिट्टी अच्छी तरह से तैयार हो जाए तो उसमें पौधों की रोपाई हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30–45 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20–30 सें.मी. रखनी चाहिए। पौधे से पौधे की दूरी गेंदे की प्रजाति के अनुसार कम या अधिक की जा सकती है।

खाद व उर्वरक

गोबर की सड़ी खाद 15–20 टन प्रति हेक्टेअर क्षेत्रफल के

हिसाब से देना पर्याप्त होता है। कार्बनिक खाद को पौध रोपाई के 15 दिन पहले खेत में डालकर अच्छी तरह से मिला लेना चाहिए। मुख्य रूप से गेंदा के पौधों की अच्छी पैदावार के लिए नाइट्रोजन की 180 कि.ग्रा., फास्फोरस की 100 कि.ग्रा., तथा पोटाश की 80 कि.ग्रा. मात्रा की प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। पौध रोपाई के समय नाइट्रोजन की आधी मात्रा, फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई के समय खेत मे देना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा रोपाई के 30 दिन के बाद देना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

गेंदा की फसल में खरपतवार फूल की उपज पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। रोपाई द्वारा तैयार फसल मे खरपतवार बहुत कम निकलते हैं। फिर भी रोपाई के लगभग एक महीने बाद या आवश्यकतानुसार खेत में दो तीन बार निकाई – गुड़ाई करना चाहिए।

सिंचाई तथा जल निकास

रोपाई के तुरंत बाद वर्षा न होने की स्थिति में हल्की सिंचाई करना चाहिए। यदि वर्षा नहीं होती है तो आवश्यकतानुसार 3–4 हल्की सिंचाई करनी चाहिए। वर्षा वाले क्षेत्रों में जल निकास की समुचित आवश्यकता होती है। आमतौर पर उन क्षेत्रों में जहां हल्की बारिश होती है, सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। ध्यान रहे कि किसी भी दशा में खेत में लगातार जल भराव की स्थिति उत्पन्न नहीं होना चाहिए अन्यथा फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

गेंदा का शीर्ष कर्तन

गेंदे के पौधे से अधिक उपज लेने हेतु उसकी शीर्ष कलिका को रोपाई के 30–35 दिन बाद तोड़ दिया जाता है जिससे गेंदे के पौधे मे अधिक संख्या में शाखाएँ निकलती हैं जिसके फलस्वरूप गेंदे के पौधे से प्रति क्षेत्रफल में अधिक उपज प्राप्त होती है।

फूल की तुड़ाई व पैकिंग

पूर्णरूप से खिले हुए गेंदे की फूलों की तुड़ाई सुबह के समय में करनी चाहिए। अधिक धूप में तुड़ाई करने से गेंदे के फूलों की गुणवत्ता पर नुकसानदायक प्रभाव पड़ता है। ताजा तोड़े हुए फूलों को टोकरियों या थैलों में सावधानी से रखकर तुरंत मंडी या उपयोगकर्ताओं को पहुँचा देना चाहिए।

रोग और कीट का प्रबंधन

गेंदें की फसल में रोग व कीट का प्रकोप कम होता है। कभी–कभी गेंदे की फसल में *रेड स्पाइडर माइट, चेपा,* आदि कीटों का प्रकोप होता है। उचित मात्रा में संस्तुत कीटनाशक का प्रयोग करके कीटों के दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है। कभी–कभी गेंदे की *नर्सरी* मे आर्द्र गलन रोग का प्रकोप होता है जिसको बाविस्टीन की 0.2 प्रतिशत मात्रा से खेत में *ड्रेंचिंग* करके रोका जा सकता हैं। ज्यादा रोग या कीट दिखाई पड़ें तो विषय विशेषज्ञ से संपर्क करके उनकी रोकथाम करना अधिक लाभदायक होता हैं।

पैदावार

गेंदा की अच्छी फसल से ताजे फूल की लगभग 25–30 टन प्रति हेक्टर उपज होती है। गेंदे के फूल की उपज की मात्रा पौधे की बढ़वार, प्रजाति, प्रबंधन, मिट्टी के प्रकार, जलवायु आदि पर निर्भर करती है।

चैते गुड़ बैसाखे तेल।
जेठ क पंथ असाढ़ क बेल।।
सावन साग न भादों दही।
क्वर दूध नहिं कातिक मही।।
अगहन जीरा पूसै धना।
माघै मिश्री फागुन चना।

चैत में गुड़, बैसाख में तेल, जेठ में रास्ता चलना, आषाढ़ में बेल, सावन में साग, भादों में दही, क्वार में दूध, कातिक में मट्ठा, अगहन में जीरा, पूस में धनिया, माघ में मिश्री और फागुन मे चना हानिकारक हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

स्वस्थ भारत के लिए गन्ने से जैव इथेनाल बनाने की अपार संभावनाओं का दोहन आवश्यक

ब्रह्म प्रकाश, लाल सिंह गंगवार, अश्विनी कुमार शर्मा, अनीता सावनानी, ओम प्रकाश, अभिषेक कुमार सिंह एवं कामिनी सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

प्रकृति ने हमको खट्टी, मीठी, तीखी, कसैली तथा नमकीन जैसे विभिन्न स्वाद की खाद्य सामग्री उपलब्ध कराई हैं। परंतु पुरातन काल से ही इन सभी स्वादों में मीठे का विशिष्ट स्थान रहा है। इसी कारण हम किसी भी शुभ समाचार सुनने पर खाने की मीठी वस्तु अथवा मिठाई आदि का प्रयोग करते हैं। मनुष्यों को ही नहीं, अपितु पशु–पक्षियों को भी मीठा स्वाद अत्यंत भाता है। '*क्रिमसन बर्ड*' नामक छोटी सी चिड़िया जो मात्र 11 सेंटी मीटर लंबी होती है, अपने भोजन के लिए पौधों के पुष्पों में पाए जाने वाले मकरंद पर निर्भर रहती है। दिलचस्प बात यह है कि पुष्प उत्पन्न करने वाले पौधों में मकरंद परपरागण के लिए पक्षियों तथा कीटों को आकर्षित करने के लिए उत्पादित होता है ताकि परागण के बाद पौधों की प्रजातियों का पुनरुद्भव हो सके। '*सनबर्ड*' नामक चिड़िया ने तो नीचे की तरफ नलीदार जीभ विकसित कर ली है जिससे वह पुष्पों के अंदर से सीधे मकरंद भक्षण कर सकें। *बीटिल्स, मोथ्स* तथा तितलियाँ भी मकरंद का भक्षण करती हैं। इस प्रकार चींटियाँ तथा कई मक्खियाँ भी विभिन्न तरीके से पुष्प से मकरंद लेकर मधु का उत्पादन करके भंडारण करती हैं। *कार्पेंटर* मक्खियों ने गहरे दलपुंज का विकास किया है जिससे वह पुष्प के आधार से मकरंद का सीधे भक्षण कर सकें जबकि मधुमक्खियाँ दूसरों के बनाए छेदों का प्रयोग करके मकरंद का भक्षण करके शहद का उत्पादन करती हैं। भालुओं को भी शहद बहुत पसंद होता है। वे शहद के लिए मधुमक्खी के छत्ते में मधुमक्खियों के रहते हुए पूरे छत्ते का शहद चाट लेते हैं जिससे भालुओं को जाड़े में सुसुप्तावस्था के लिए आवश्यक प्रोटीन तथा वसा मिल जाती है। भालुओं को शहद इतना पसंद होता है कि वे शहद के लिए ऊँचे–ऊँचे पेड़ों पर भी चढ़ जाते हैं। *स्लॉथ* भालू शहदयुक्त मधुमक्खी के छत्तों के साथ कटहल मिलाकर अपने बच्चों के लिए रोटी सी वस्तु बनाते हैं जिसे विशेष '*बियर ब्रैड*' कहते हैं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम मिठासकों की वैश्विक चाहत को आधार देने के इतिहास को जानें। यॉर्क विश्वविद्यालय, टोरोंटो, कनाडा के इतिहास के प्रोफ़ेसर जेम्स वाल्विन ने विश्व में जनसांख्यिकी पर गन्ना तथा चीनी के प्रसार के असाधारण पड़ने वाले प्रभाव का गहराई से अध्ययन करते हुए अटलांटिक क्षेत्र में चीनी उत्पादन के लिए अफ्रीकी देशों से बड़ी जनसंख्या को लाकर गुलामी के जाल में फँसते हुए पाया। पश्चिमी यूरोप के देशों ने चीनी के उत्पादन के लिए 1.2 करोड़ अफ्रीकी नागरिकों को अपना देश छोड़कर अटलांटिक क्षेत्र में गन्ने की खेती के लिए गुलामों की तरह जीने को मजबूर किया। बाद में इसी दास प्रथा को कपास तथा तंबाकू की खेती में भी प्रयोग किया गया। उन्नीसवीं शताब्दी में अंग्रेजों को जब इस बात का आभास हुआ कि दास प्रथा मानवता की दृष्टि से अत्यंत गलत है तो उन्होंने एक अन्य प्रथा का विकास किया जिसमें श्रमिकों को एक करार के अंतर्गत काम करना पड़ता था। अंग्रेजों ने बड़ी संख्या में भारतीय श्रमिकों के साथ करार करके उनको केरेबियन तथा अन्य क्षेत्रों में गन्ना उत्पादन के लिए ले जाया गया ।

आरंभ में चीनी अत्यंत महंगी वस्तु थी तथा पश्चिमी देशों में मीठे के लिए शहद का प्रयोग किया जाता था। परंतु बाद में जब दास प्रथा के अंतर्गत सस्ते श्रमिक गन्ने की खेती के लिए प्रयोग किए जाने लगे तो चीनी के मूल्यों में तेजी से कमी आने लगी। मध्य काल में जिस चीनी को अत्यंत महंगी होने के कारण राजा–महाराजाओं व अमीरों द्वारा प्रयोग की जाने वाली विलासिता की वस्तु समझा जाता था। आज एक आम मनुष्य के लिए दैनिक उपभोग की आवश्यक वस्तु बन गई है। वर्ष 1750 तक चीनी के मूल्यों में बहुत कमी आने के बावजूद सुदूर देशों में चीनी उपलब्ध नहीं हो पाती थी। जबकि पश्चिम यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के देशों में आम आदमी भी अपने भोजन व पेय पदार्थों में चीनी का प्रयोग करने लगा था। जैसे–जैसे सस्ते श्रमिकों की उपलब्धता बढ़ती जा रही थी वैसे–वैसे पश्चिमी देशों के लोगों में चीनी का प्रयोग बढ़ता जा रहा था। औद्योगिक क्रान्ति के समय में उद्योगों में संलग्न मजदूरों को उनके कड़े श्रम के लिए गन्ना व चीनी उत्पादन के रूप में ऊर्जा का एक सस्ता स्त्रोत मिल गया था ।

अट्ठारवीं शताब्दी के अंत तक, शर्करा आधारित आम उत्पादों का उत्पादन करने वाले व्यावसायिक घरानों ने टॉफी व मिठाइयों के साथ केक, बिस्कुट जैसे *कौनफैक्शनरी* का उत्पादन आरंभ कर दिया था। 1880 के दशक के अन्त तक, यूरोप तथा अमेरिका के देशों के बड़े शहरों में बड़े–बड़े कारखानों में उपरोक्त उत्पादों का उत्पादन आरंभ हो गया था। पश्चिमी दुनिया में निर्यात तथा सस्ते प्रवासी श्रमिकों के कारण रोज़मर्रा के सस्ते भोजन में भी मीठे का महत्व बढ़ते जाने के कारण मीठे खाद्य पदार्थों का प्रचलन तेजी से बढ़ता जा रहा था। इससे विश्व भर के प्रचलित

खाद्य पदार्थों में मीठा मिलाया जाने लगा। चुकंदर की चीनी के बढ़ते उत्पादन से बीसवीं शताब्दी में प्रत्येक उपभोग करने वाले उत्पाद में विभिन्न प्रकार के रासायनिक मीठे पदार्थ मिलाए जाने लगे।

चीनी एवं स्वास्थ्य

वर्ष 1960 के दशक में वैज्ञानिकों ने चीनी की अधिक मात्रा में उपभोग से मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दांतों को होने वाली क्षति तथा प्रतिकूल प्रभावों से शारीरिक रूप से मोटे होने की समस्या के प्रति लोगों को जागरूक करना आरंभ कर दिया था। मिठासक पदार्थों से मीठे किए गए खाद्य पदार्थ तथा पेय पदार्थों के सम्पूर्ण विश्व में उपलब्धता के कारण पश्चिमी देशों में दृष्टिगोचर होने वाले ये कुप्रभाव आज पूरी दुनिया में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रहे हैं। मीठे खाद्य पदार्थ अपने स्वाद के कारण सभी को स्वादिष्ट लगते हैं, परंतु इनमें ऊर्जा के अतिरिक्त कोई भी पोषक तत्व उपस्थित नहीं होते। इस कारण मीठे पदार्थों का लगातार सेवन कई जीवन–शैली संबंधी दीर्घकालिक बीमारियों को जन्म देता है।

विश्व भर में बीसवीं शताब्दी के द्वितीय अर्द्धांश में खाद्य सुरक्षा का मुख्य केंद्र यह सुनिश्चित करना होता था कि लोगों को प्राथमिक प्रमुख फसलों द्वारा पर्याप्त ऊर्जा मिल सके जिससे वे उत्पादक जीवन व्यतीत कर सकें। परंतु आजकल अधिकांश क्षेत्रों में लोगों को पर्याप्त कैलोरी मिल रही है। यद्यपि विश्व भर में कुपोषण बढ़ा है पर यह कैलोरी की कमी के कारण नहीं है अपितु लोगों को पर्याप्त सूक्ष्म पोषक तत्व तथा प्रोटीन नहीं मिल पा रहा है जिससे उनकी शारीरिक तथा संज्ञानात्मक प्रगति नहीं हो पा रही है। भारत में छिपी हुई भूख की दर अत्यधिक है। मानव स्वास्थ्य के लिए कैलोरी का उपभोग मात्र ही पर्याप्त नहीं होता। बहुत बड़ी संख्या में लोगों को लौह तत्व पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल पाने से उनको *एनीमिया* हो रहा है। पर्याप्त मात्रा में विटामिन ए, जस्ता तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की आपूर्ति नहीं हो पाती है जो स्वास्थ्य तथा विकास के लिए परम आवश्यक हैं। कुपोषण की दूसरी सबसे बड़ी समस्या मोटापा तथा संबन्धित रोगों में हो रही बड़ी वृद्धि है। चीनी का अधिक मात्रा में उपभोग स्वास्थ्य के लिए चुनौतियाँ प्रस्तुत करता है, साथ ही पोषक तत्वों की भी कमी होती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के बोस्टन स्थित हार्वर्ड मेडिकल स्कूल में फिजीशियन, डॉ. संजय बासु जिन्होनें वैश्विक स्तर पर मधुमेह रोग के बढ़ने पर गहन अध्ययन किया है, के अनुसार वर्ष 1990 से वैश्विक स्तर पर मधुमेह के रोगियों में 45 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। आज विश्व भर में 53.7 करोड़ व्यक्ति मधुमेह रोग से ग्रस्त हैं। कम तथा मध्यम आय वाले देशों में तो प्रत्येक चार में से तीन लोग मधुमेह रोग के शिकार हो चुके हैं। मधुमेह के रोगियों की संख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में चीन के पश्चात दूसरा स्थान है, जहां प्रत्येक छह लोगों में से एक मधुमेह से प्रभावित है। भारत में मधुमेह का सबसे बड़ा खतरा 12 प्रतिशत मोटे बच्चों में है। भारत में वर्ष 1990 में 9 प्रतिशत प्रौढ़ शारीरिक रूप से मोटे थे जो वर्ष 2016 में बढ़कर 20 प्रतिशत हो गए थे। इन मोटे लोगों के प्रतिशत बढ़ने का मूल कारण परंपरागत भोजन को छोडकर पौष्टिकताविहीन मीठे खाद्य पदार्थों का सेवन तथा शारीरिक क्रिया–कलापों का अभाव है। भारत के परंपरागत खाद्य पदार्थों में किशमिश, नारियल मिश्री, गुड़, दालचीनी, अनानास, आलू बुखारा तथा अनार जैसे पौष्टिक एवं स्वास्थ्यवर्धक विकल्प उपस्थित थे।

इंटरनेशनल डायबिटीज़ फेडरेशन तथा *ग्लोबल बरडेन ऑफ डिजीज प्रोजेक्ट* के अनुसार भारत में वर्ष 2030 तक 9.8 करोड़ भारतीय मधुमेह के रोगी हो सकते हैं। यह दर, इस रोग के बढ़ने की वर्तमान दर, अन्य देशों में जिनमें भारत की तरह जोखिम के खतरे हैं, की ऐतिहासिक प्रवत्ति तथा भोजन में मीठे पदार्थ खाने की बढ़ती चाहत तथा शारीरिक क्रियाकलाप न करने जैसे जोखिमों में परिवर्तन के आधार पर गणना करके अनुमानित की गई है। आयु बढ़ने के साथ–साथ होने वाले अन्य शारीरिक रोगों के कारण शारीरिक क्रियाकलाप न करने के कारण भी मधुमेह होने की संभावना बढ़ने का खतरा बढ़ जाता है। *वर्ल्ड इकोनोमिक फोरम* मधुमेह को शांत महामारी मानता है जो वैश्विक स्तर पर कोविड–19 की तुलना में तीन गुना अधिक भयावह है। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि संयुक्त राष्ट्र *सस्टेनेबिल डेवलपमेंट गोल्स* ने अच्छे स्वास्थ्य के लिए मधुमेह को चिंता का बड़ा कारण माना है।

चीनी मधुमेह के प्रमुख कारणों में से एक है। दुनिया भर में कई व्यंजनों में मीठे को भोजन में समावेशित करने का इतिहास रहा है। आज की चीनी की सांद्रता तथा *फार्मूलेशन्स* पूर्ववर्ती वर्षों से भिन्न हैं। साथ ही वर्तमान प्रति दिन उपभोग की जाने वाली मात्रा तथा घनत्व पिछले वर्षों की तुलना में भिन्न हो गया है। भारत में आज बड़ी संख्या में बच्चे मधुमेह रोग के रोगी बनते जा रहे हैं। परंपरागत भोजन के स्थान पर प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ तथा *फास्ट फूड* को अधिक खाने से बच्चे मोटे होने के साथ *मेटाबौलिक डिसऑर्डर* के शिकार हो रहे हैं। मधुमेह के रोगियों की संख्या बढ़ने से इंसुलिन की मांग भी बढ़ती है यद्यपि इंसुलिन का अविष्कार कई दशक पूर्व हो चुका था परंतु आज भी *जेनेरिक* इंसुलिन जैसी कोई चीज नहीं है। इसका ऊँचा मूल्य तथा *फ्रिज* में रखने की आवश्यकता ग्रामीण क्षेत्रों में परेशानी का कारण बनती है। आशा की जा सकती है कि कोविड–19 की *वैक्सीन* की तरह इंसुलिन भी मांग के अनुसार उपलब्ध हो सकेगी। परन्तु इसके लिए अवसंरचनात्मक परिवर्तन करने होंगे। हमको चीनी के साथ अपने सम्बन्धों की भी समीक्षा करनी होगी। मैक्सिको में जहां मोटापा तथा मधुमेह अधिक गंभीर समस्या है, वहाँ पर मीठे

पेय पदार्थों पर ऊँची कर–संरचना ने अत्यंत प्रोत्साहनात्मक परिणाम दर्शाए हैं। इससे गरीब लोगों को अधिक लाभ प्राप्त हो रहा है।

वैश्विक स्तर पर गेहूँ, धान तथा मक्का जैसे कुछ प्रमुख भोजन का वैश्विक उत्पादन में लगभग 50 प्रतिशत अंश का योगदान है। इनके साथ लोग चीनी को भी बहुत अधिक पसंद करते हैं। खाद्य तथा कृषि संगठन ने वर्ष 2021–22 के लिए विश्व में कुल चीनी उत्पादन का 17.37 करोड़ टन का अनुमान लगाया है, जबकि वर्ष 2000 में केवल 4.9 करोड़ टन चीनी का उत्पादन किया जा रहा था। इसको संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग के चावल के 51 करोड़ टन के वैश्विक उत्पादन से तुलना करने की आवश्यकता है। यद्यपि संयुक्त राज्य अमेरिका में चीनी की प्रति व्यक्ति खपत सर्वाधिक है। खाद्य तथा कृषि संगठन का अनुमान है कि चीन तथा भारत में भी चीनी की प्रति व्यक्ति खपत काफी तेजी से बढ़ रही है। *वर्ल्ड इकोनोमिक* फोरम ने पाया है कि अधिक चीनी का सेवन करने वाले देशों में मार्च 2020 में 40 लाख लोगों ने जान गवांई है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी पाया है कि वर्ष 1980 में मधुमेह वैश्विक स्तर पर चौगुनी गति से बढ़ रहा था।

गन्ना खेती एवं पर्यावरण

हालांकि चीनी भोजन की प्लेट में बहुत मीठी लगती है परंतु पर्यावरण पर इसके बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड़ते हैं। मानव स्वास्थ्य के अतिरिक्त, गन्ने की खेती ने विश्व के पर्यावरण पर अत्यंत बुरा प्रभाव डाला है। अमेरिका तथा केरेबियन में गुलामों द्वारा उगाए गए गन्ने ने परंपरागत रूप से उगाए जाने वाले बागानों को नष्ट करके पानी तथा अन्य निवेशों की उपलब्धता पर भी कुप्रभाव डाला है। इसके बाद लकड़ी के लिए उगाए जाने वाले वृक्षों, अनानास, चाय, रबर तथा तंबाकू जैसी फसलों का व्यावसायिक उत्पादन आरंभ हो गया। इससे उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र के साथ–साथ उपोष्ण क्षेत्रों में बड़ा कुप्रभाव डाला है जिससे जैवविविधता नष्ट होने के साथ–साथ एक फसल को एक ही स्थान पर लंबे समय तक उगाए जाने से विभिन्न देशों के पारिस्थितकी तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण तथा मानव समुदायों दोनों के लिए एक बेहतर भविष्य बनाने के लिए उपरोक्त ऐतिहासिक तथ्य अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर (डबल्यूडबल्यूएफ) के अनुसार 15 देश अभी अपने देश के कुल भौगौलिक क्षेत्र के 25% से अधिक क्षेत्र पर गन्ने की ही खेती कर रहे हैं जिससे जैवविविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। समृद्ध प्राकृतिक वास वाले उष्ण कटिबंधीय वर्षा वाले जंगल मौसमी झुरमुट बन कर रह गए हैं। गन्ने की फसल के उत्पादन हेतु पानी की बहुत अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। शोध अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि महाराष्ट्र में गन्ने की फसल कुल सिंचाई आपूर्ति का 60% तक का दोहन करके भूजल स्तर पर प्रभाव डालती है। कुछ स्थानों पर गत 20 वर्षों में भूजल स्तर 15 मीटर से बढ़कर 65 मीटर तक नीचे चला गया है। इसके साथ चीनी के उपभोग का मानव स्वास्थ्य पर भी गंभीर प्रभाव पड़ता है।

गन्ना जो लाखों लोगों को रोजगार के अवसर प्रदान करता है, की खेती अधिक लाभदायक सिद्ध हुई है। गन्ने को जैव ईंधन के लिए प्रयोग करके खराब स्वास्थ्य को ठीक किया जा सकता है। इसके साथ ही कृषि क्रियाओं में भी परिवर्तन लाया जा सकता है। मैक्सिको में किए गए अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि पानी का पुनर्चक्रण करके गन्ने की फसल की जल उपभोग आवश्यकता को 94 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है जबकि तमिलनाडु में एक–एक कूँड़ छोड़कर पानी देने से गन्ने की जल उपयोग दक्षता में 60% की वृद्धि की जा सकती है।

स्टेंफोर्ड विश्वविद्यालय, स्टेंफोर्ड, कैलिफोर्निया, संयुक्त राज्य अमेरिका के पृथ्वी प्रणाली विज्ञान के प्रोफेसर, डॉ. रोसामोण्ड एल. नायलर द्वारा महाराष्ट्र में गन्ने के साथ अन्य फसलों की जल आवश्यकता पर किए गए अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि गन्ना अत्यंत जल प्रधान फसल है क्योंकि कई देशों में जल बहुमूल्य है तथा इसको विभिन्न देशों की सरकारों का समर्थन मिलता है। इस प्रकार यह प्राथमिकता पाने वाली फसल बन चुकी है। महाराष्ट्र में कई ऐसे क्षेत्रों में गन्ने की खेती बहुत बड़े क्षेत्र में की जाती है जहां उथली कठोर चट्टाने हैं। इस कारण ऐसे स्थानों पर भूजल की भंडारण क्षमता भी अत्यंत कम होती है। गन्ने की खेती के लिए किसान भूजल का प्रयोग तो कर सकते हैं परंतु इसके साथ ही उनको सतही जल की भी आवश्यकता होती है। अतः गन्ना उन स्थानों पर भी उगाया जाता है जहाँ *कमाण्ड* अथवा नियंत्रित क्षेत्रों में भी अथवा बांधों से आधिक्य पानी की आपूर्ति की जा सकती है। अब गन्ने की फसल सतही तथा भूजल दोनों का ही उपभोग करती है। भूजल का स्तर वर्षा होने पर पुनर्स्थापित हो जाता है। जलवायु परिवर्तन के साथ इसका स्वरूप भी अप्रत्याशित होता जा रहा है।

भारत तथा ब्राज़ील की तरह, कई अन्य देश भी चीनी उत्पादन में गहरी रुचि दर्शा रहे हैं। इस पृष्ठभूमि में अधिक चीनी उत्पादित हो रही है। इन देशों के निवासियों में इस बात की जागरूकता बढ़ रही है कि अधिक चीनी के उपभोग से स्वास्थ्य को कोई लाभ नहीं मिलता। अब लोगों को यह समझ में नहीं आ रहा है कि आधिक्य चीनी का उपयोग कहाँ करें तथा गन्ना उत्पादकों को भी उनके उत्पाद से उचित आय भी होती रहे तथा उनकी आय न घटने देने के लिए गन्ने के मूल्यों में भी कमी भी न आए। गन्ना से चीनी उत्पादन की बजाय जैव ईंधन बनाना एक उचित समाधान हो सकता है।

जैव ईंधन की महत्ता तथा गन्ने का उपयोग

फसलों से जैव ईंधन बनाना जीवाश्म ईंधन के विकल्प के रूप में परिवहन के क्षेत्र में अधिक अच्छा विकल्प है। यह जैव ईंधन इथेनाल से बनाया जा सकता है जो गन्ने से बनाया जा सकता है अथवा बायोडीजल जो सोयाबीन जैसी तिलहनी फसलों से बनाया जा सकता है। जलवायु परिवर्तन से होने वाली क्षति को कम करने की पृष्ठभूमि में भारत के लिए एक अच्छा उपाय यह हो सकता है कि वह परिवहन के क्षेत्र में जीवाश्म ईंधन का उपयोग इथेनाल मिश्रित करके *ग्रीन हाउस* गैसों के उत्सर्जन को कम करे। जैव ईंधन जीवाश्म ईंधन का नवीकरणीय स्त्रोत होने के कारण अच्छा विकल्प है। ब्राज़ील जो विश्व में गन्ने का सर्वाधिक उत्पादन करने वाला देश है, ने गन्ने पर आधारित जैव ईंधन उद्योग अच्छी तरह से स्थापित कर रखा है।

भारत में चीनी उद्योग के एक उप–उत्पाद, शीरे से ही प्रायः जैव ईंधन बनाया जाता है। परंतु यदि भारत भी गन्ने से चीनी उत्पादन करने के बजाय गन्ने के रस को जैव ईंधन बनाने में प्रयोग करे तो इससे गन्ने की उत्पादकता व टिकाऊपन पर अच्छा असर पड़ेगा। भारत में जैव ईंधन की सरकारी नीति परिवहन क्षेत्र में 20% जैव ईंधन को प्रयोग करने की अनुमति देती है। यदि केवल शीरे से इथेनाल बनाया जाए तो भारत को गन्ना उत्पादन में बहुत अधिक वृद्धि करनी होगी जिसके लिए गन्ने की फसल के अंतर्गत और भी अधिक क्षेत्र लाना होगा। इससे बाजार में अतिरिक्त, चीनी उपलब्ध हो सकेगी।

यदि जैव ईंधन के लिए गन्ने के रस का प्रयोग किया जाए तो बगैर चीनी का उत्पादन बढ़ाए भी जैव ईंधन का उत्पादन किया जा सकेगा। इससे अधिक गन्ना उत्पादन करने में होने वाले जल की बचत भी हो सकेगी। जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का भी हम सुगमता से सामना कर सकेंगे। इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि पृथ्वी का तापमान बढ़ाने में भी गन्ने की भूमिका अत्यंत अतिसंवेदनशील होती है।

भारत में जैव ईंधन का भविष्य

जैव ईंधन जीवाश्म ईंधन की प्रकृति के विपरीत ऊर्जा के नवीकरणीय स्त्रोत होते हैं जिनको जैवभार, शैवाल अथवा पशु सामग्री से सुगमतापूर्वक बनाया जा सकता है। जैव ईंधन सस्ते होने के कारण लागत प्रभावी होते हैं तथा पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल होते हैं जो संवेदनशील जीवाश्म ईंधन के मूल्यों तथा वैश्विक तापमान वृद्धि के समय में महत्वपूर्ण कारक होते हैं। सबसे प्रमुख द्रव जैवईंधन इथेनाल शर्करा अथवा स्टार्च के किण्वन द्वारा बनाया जाता है। ब्राज़ील तथा संयुक्त राज्य अमेरिका इथेनाल के प्रमुख उत्पादक राष्ट्र हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में इथेनाल को मक्के के दाने से उत्पादित करते हैं जिसे गैसोलीन के साथ मिलाकर 10 प्रतिशत इथेनाल बनाया जाता है। ब्राज़ील में इथेनाल गन्ने के रस से बनाया जाता है तथा 100 प्रतिशत इथेनाल ईंधन अथवा 85 प्रतिशत इथेनाल युक्त गैसोलीन के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। भारत सरकार ने वर्ष 2025 तक पेट्रोल में 20 प्रतिशत इथेनाल मिश्रण करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इससे पेट्रोल तथा डीजल के आयात पर खर्च होने वाली बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की बचत हो सकेगी तथा पर्यावरण में कार्बन डाई आक्साइड से होने वाला प्रदूषण भी कम हो सकेगा। क्योंकि अभी भी देश में बहुत सारे स्थानों पर अभी भी खेतों पर ही बहुत से पादप अवशेष जलाए जाते हैं। इन अवशेषों से इथेनाल उत्पादित करके इथेनाल के वर्तमान स्तर को 700 से 1500 करोड़ लीटर तक बढ़ाया जा सकता है। भारत में गन्ने के रस अथवा चीनी उत्पादन की प्रक्रिया में शीरा नामक उप–उत्पाद से इथेनाल बनाए जाने के अतिरिक्त, *कॉर्न* के डंठल, सनई, *स्विच ग्रास, जेट्रोफा* की झाड़ी, शैवाल तथा *जाइंट रीड्स* जैसी प्रजातियों से भविष्य में इथेनाल बनाने की अपार संभावनाएं हैं।

महाराष्ट्र में फल एवं सब्जियों का उत्पादन भी काफी बड़े क्षेत्र में किया जा रहा है परंतु इसकी खेती जोखिमपूर्ण होती है तथा किसानों को इनकी खेती के लिए कई बार कर्ज भी लेना पड़ता है। यदि किसानों की आय सुनिश्चित नहीं होती है तो इससे जोखिम और भी बढ़ जाता है। महाराष्ट्र में किसानों के बीच गन्ने की खेती करना अत्यंत आकर्षक होता है। क्योंकि वे जानते हैं कि गन्ने से उनको कितनी आय हो सकती है। फल एवं सब्जियों का मूल्य गन्ने की तुलना में कहीं अधिक होता है परंतु ये कम समय में खराब होकर सड़ सकती हैं। गन्ने को चीनी मिल भेजकर इनकी पेराई करके चीनी बनाकर बाजार भेज दी जाती है। जबकि फल एवं सब्जियों के मामले में कटाई उपरांत इनके उत्पादन में बहुत अधिक क्षति होती है। यदि सरकार फल एवं सब्जियों को कटाई उपरांत सुखाने तथा *रेफ्रीजरेशन* में निवेश करे तो किसानों द्वारा उत्पादित फल एवं सब्जियों के उत्पादन का बड़ा अंश बच सकेगा जो फल एवं सब्जियों की खेती को टिकाऊपन देकर प्रोत्साहन का कार्य करेगा। खराब हुए फलों एवं सब्जियों से भी जैव ईंधन बनाने के विकल्प बनाए गए हैं तथा शीघ्र ही सभी प्रकार के पादप अवशेषों से भी जैव ईंधन के उत्पादन की संभावना प्रबल हुई है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

चुकंदर में खरपतवार प्रबंधन

मोना नगरगड़े[1], विशाल त्यागी[2], दिलीप कुमार[1], प्रीति सिंह[1], संतोष कुमार[3] एवं उमेश चंद पाण्डेय[1]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]भाकृअनुप–भारतीय बीज अनुसंधान संस्थान, मऊ
[3]भाकृअनुप–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, हज़ारीबाग़

चुकंदर एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है, जो दुनिया के चीनी उत्पादन का लगभग 35% हिस्सा है। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार 2017 में वैश्विक स्तर पर अनुमानित 33 लाख टन चुकंदर का उत्पादन किया गया था। चीनी उत्पादन के लिए चुकंदर का रोपण मध्य यूरोप में 1800 के दशक की शुरुआत में हुआ और फिर दुनिया भर में फैल गया। संयुक्त राज्य अमेरिका में, पहला सफल प्रसंस्करण संयंत्र कैलिफोर्निया में 1800 के दशक के मध्य में बनाया गया था जिसके बाद नेब्रास्का और यूटा में अन्य कारखानों का निर्माण किया गया था।

चुकंदर (*बीटा वल्गेरिस एल.*) चेनोपोडियेसी परिवार से संबंधित है। मुख्यतः चार प्रकार की चुकंदर की फसलें होती हैं *लीफ बीट, गार्डन बीट* (जैसे, टेबल या लाल), चारा चुकंदर, और शर्करा युक्त चुकंदर। चुकंदर पौधे में एक *हाइपोकोटिल* के साथ एक बढ़े हुए *टेप रुट* होते हैं और एक चपटा मुकुट (*एपिकोटिल*) मिट्टी के ऊपर फैला हुआ होता है। लंबी पंखुड़ी वाली पत्तियों का एक *रोसेट* सतह पर होता है। सुक्रोज–भंडारण *टेप रूट* में होता हैं। चुकंदर ज्यादातर समशीतोष्ण जलवायु में उगाया जाता है एवं सबसे अनुकूल तापमान 15° सेल्सियस लेकर 21° सेल्सियस तक हैं। इसके उत्पादन के लिए उपयुक्त मिट्टी रेतीली दोमट होती है।

चुकंदर की खेती में खरपतवार एक प्रमुख समस्या है। चुकंदर की बुआई के लगभग 60 दिनों तक इसकी वृद्धि कम होने के कारण खरपतवार की समस्या अधिक रहती है। खरपतवार प्रकाश, जल एवं पोषक तत्वों के लिए चुकंदर की फसल से प्रतिस्पर्धा करते हैं। सबसे अधिक प्रतिस्पर्धी वार्षिक खरपतवार हैं, ज्यादातर चौड़ी पत्ती वाली प्रजातियां जो इसके साथ या उसके तुरंत बाद उगती हैं एवं फसल की तुलना में लम्बी हो जाती हैं और घनी छाया पैदा करती हैं। नतीजतन, इन खरपतवारों का घनत्व बढ़ता है, प्रकाश अधिक सीमित हो जाता है और जड़ की पैदावार कम हो जाती है। अनियंत्रित वार्षिक खरपतवार बुवाई के 8 सप्ताह के भीतर या 4 सप्ताह के भीतर उभर आते है। दो पत्ती वाली अवस्था तक पहुंचने वाली फसल जड़ की पैदावार को 26-100% तक कम कर देते हैं।

प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण करके हम अपेक्षित उत्पादन कर सकते हैं। खरपतवार नियंत्रण के लिए हम गैर रासायनिक, रासायनिक एवं समेकित खरपतवार नियंत्रण की विधियों का उपयोग कर सकते हैं। खरपतवार नियंत्रण की प्रमुख

खरपतवारयुक्त चुकंदर की फसल

खरपतवारमुक्त चुकंदर की फसल

विधियाँ निम्नानुसार है :

अ) गैर रासायनिक खरपतवार प्रबंधन: गैर रासायनिक विधियों के अंतर्गत मुख्यतः बीज के चुनाव में विशेष ध्यान देना चाहिए। यह ध्यान देना चाहिए कि चुकंदर के बीज के साथ खरपतवार के बीज का मिश्रण नही होना चाहिए। इसके अलावा, खरपतवार प्रतिस्पर्धी किस्म का चुनाव, उचित पौध ज्यामिति, उचित बीज दर, उचित पोषक तत्व एवं जल प्रबंधन भी खरपतवार नियंत्रण में उल्लेखनीय भूमिका निभाते हैं। गैर रासायनिक विधियाँ गैर *मौद्रिक विधियों* के अंतर्गत आती हैं जिसके केवल उचित चुनाव से ही हम खरपतवार का नियंत्रण कर सकते हैं। प्रमुख गैर रासायनिक विधियों

का विवरण निम्नवत प्रस्तुत है :

- **फसल चक्रण द्वारा खरपतवार प्रबंधनः** खरपतवार नियंत्रण एक ही फसल पर नहीं करना चाहिए बल्कि यह सुनिश्चित करने के लिए पूरे फसल चक्रण के दौरान यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि एक खरपतवार प्रजाति को फलने–फूलने और बढ़ने की अनुमति नहीं दी जाए। फसल चक्रण के दौरान प्रत्येक फसल के लिए, उच्चतम प्रभावशीलता के साथ, न्यूनतम लागत और न्यूनतम पर्यावरणीय जोखिम वाली खरपतवार नियंत्रण की विधियों को अपनाना चाहिए। उदाहरण के लिए चुकंदर एवं सोयाबीन की तुलना में ज्वार, मक्का या गेहूँ के ठूंठ में *इक्विसेटम* खरपतवार नियंत्रण आसान होता है। इसके अलावा, कई प्रयोगों ने कष्टप्रद खरपतवारों (बारहमासी, *एएलएस* प्रतिरोधी) को चुकंदर से पहले की फसल में नियंत्रित करने की प्रभावशीलता का प्रदर्शन किया है। यहां तक कि सिर्फ फसल चक्रण, अगर सुनियोजित हो, तो महत्वपूर्ण हो जाता है कि विशिष्ट प्रजाति के खरपतवार द्वारा उत्पन्न समस्या में कमी आती है।

- **पौध ज्यामितिः** किसी क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग करने के लिए विभिन्न पंक्तियों में पौधों की व्यवस्था को पौध ज्यामिति कहा जाता है। चुकंदर को आमतौर पर 56–76 सेंमी. तक की पंक्तियों में उगाया जाता है, जिसके कारण खरपतवार को वृद्धि के लिए प्रारंभिक अवस्था में पर्याप्त समय मिल जाता है। खरपतवार घनत्व और जैवभार भी 56 से 76 सें.मी. तक की पंक्तियों में अधिक होता है। शोधकर्ताओ के द्वारा 38 और 51 सें.मी. तक की पंक्तियों में खरपतवार का घनत्व और जैवभार कम देखा गया है। शोधकर्ताओ के अनुसार चुकंदर की जड़ और चीनी की पैदावार 76 सें.मी. पंक्ति की तुलना में 38 और 51 सें.मी. पंक्ति चौड़ाई से अधिक थी। उचित पौध ज्यामिति का चुनाव खरपतवार नियंत्रण में प्रमुख भूमिका निभाता है।

- **यांत्रिक खरपतवार नियंत्रणः** यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण करने से हम चुकंदर की खेती में रासायनिक खरपतवारनाशक का उपयोग कम कर सकते हैं। यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण के लिए मोटर चालित *फिंगर वीडर* का उपयोग कर सकते हैं, जो पौधों एवं पंक्तियो के बीच में चयनात्मक निराई–गुड़ाई करके एक प्रभावी खरपतवार नियंत्रण प्रणाली के रूप में देखी गयी है।

ब) **रासायनिक खरपतवार प्रबंधनः** चुकंदर में खरपतवार प्रबंधन विशेष रूप से इसकी प्रारंभिक विकास अवस्था के दौरान कम वृद्धि और सीमित रासायनिक खरपतवारनाशक (मुख्यतः फसल एवं खरपतवार के उद्भव के पश्चात् उपयोग होने वाले खरपतवारनाशक) के एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। शाकनाशी के विकास से पहले अंतर–पंक्ति खेती और हाथ से निराई प्राथमिक खरपतवार नियंत्रण के तरीके थे। चुकंदर सहित कई फसलों में स्थायी खरपतवार प्रबंधन में समय पर शाकनाशी का प्रयोग एक महत्वपूर्ण कार्य है। विभिन्न देशों के शोधकर्ताओं द्वारा चुकंदर की फसल में निम्नलिखित खरपतवार प्रबंधन का उपयोग अनुशंसित किया गया है:

- डेस्मेडिफम और फेनमेडिफम 1970 से 2000 तक चुकंदर में *ऐमोरैंथस* और *चीनोपोडियम* प्रजातियों को नियंत्रित करने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला प्राथमिक खरपतवारनाशक था।

- 2000 के दशक के मध्य में क्लोरोएसेटामाइड खरपतवारनाशक एस–मेटोलाक्लोर और डाइमेथेनमिड–पी को चुकंदर के लिए पंजीकृत किया गया था जिसके कारण ग्लाइफोसेट–*रेसिस्टेंट* (जीआर) चुकन्दर के व्यावसायीकरण से पहले डेस्मेडिफाम और फेनमेडिफम के साथ उनका संक्षिप्त उपयोग हुआ।

- बेंज़थियाज़ुरोन (3 कि.ग्रा.) + मेटामिट्रॉन (3 कि.ग्रा./हेक्टेयर) और मेरपेलन एज़ (आइसोकार्बामिड + लेनासिल) (2 कि.ग्रा.) + मेटामिट्रॉन (3 कि.ग्रा.) का मिश्रण अकेले लागू किए गए, समान खरपतवारनाशक की तुलना में अधिक प्रभावी था।

- प्रीटिलाक्लोर 50 ईसी/0.5 कि.ग्रा./हेक्टेयर या पेंडीमेथलिन/3.75 लीटर/हेक्टेयर को 300 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के 0–2 दिन बाद *हैंड ऑपरेटेड स्प्रेयर* से छिड़काव किया जा सकता है, इसके बाद बुवाई के 25वें और 50वें दिन बाद हाथ से निराई–गुड़ाई की जा सकती है।

- जॉर्जिया में चुकंदर पर खरपतवार नियंत्रण अनुसंधान ने एथोफ्यूमेसेट (1.3 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व हे) *प्री इमेरजेंस* और फेनमेडिफम (0.41 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व हे.) + डेस्मेडिफाम (0.41 कि.ग्रा. सक्रिय तर्त्व है) *पोस्ट इमेरजेंस* खरपतवारों को नियंत्रित करने की क्षमता प्रदान करते हैं।

- चुकंदर में प्रभावी और समय पर खरपतवार नियंत्रण एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रणाली का उपयोग करना चाहिए। खरपतवार नियंत्रण के रासायनिक तरीके तभी प्रयोग करना चाहिए जब बहुत ही आवश्यक हों अन्यथा दूसरे खरपतवार नियत्रण के तरीकों पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। जिससे पर्याप्त जड़ और चीनी की उपज प्राप्त हो सके।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

वर्ष 2020 : भारत द्वारा बौद्धिक संपदा आवेदनों की प्रवत्ति

कामिनी सिंह, लाल सिंह गंगवार, ब्रह्म प्रकाश, ओम प्रकाश एवं अनीता सावनानी
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

बौद्धिक सम्पदा आर्थिक विकास तथा प्रतियोगितात्मक्ता में बहुत ही महत्वपूर्ण कड़ी है जो अंततः समृद्धि में परिणित हो जाती है। बौद्धिक सम्पदा किसी भी नई रचना जो वैज्ञानिक, साहित्यिक, तकनीकी अथवा कलात्मक हो सकती है, मानव बुद्धि से संलग्न होती है। बौद्धिक संपदा अधिकारों को सभी अमूर्त एक व्यक्ति या कंपनी के स्वामित्व वाली संपत्ति के साथ जुड़े अधिकारों से परिभाषित किया जा सकता है। यह बौद्धिक सम्पदा अविष्कारकर्ता की बगैर सहमति के बिना उपयोग के विरुद्ध संरक्षित रहती है। अमूर्त संपत्ति गैर–भौतिक संपत्ति को संदर्भित करती है, जिसमें बौद्धिक संपदा में स्वामित्व का अधिकार सम्मिलित है। बौद्धिक संपदा अधिकारों के उदाहरणों में *पेटेंट, डोमेन* नाम, औद्योगिक डिजाइन, गोपनीय जानकारी, अविष्कार, नैतिक अधिकार, *डेटाबेस* अधिकार, *कॉपीराइट*, सेवा चिह्न, *लोगो, ट्रेडमार्क, डिजाइन* अधिकार, *कंप्यूटर सॉफ्टवेयर* सम्मिलित हैं।

कोविड–19 महामारी के बावजूद, दुनिया भर के अन्वेषकों ने वर्ष 2020 में लगभग 33 लाख पेटेंट आवेदन दाखिल करने में सफलता प्राप्त की है, जो वर्ष 2019 *फाइलिंग* की तुलना में 1.6% अधिक हैं। *पेटेंट फाइलिंग* में उल्लेखनीय वृद्धि मुख्य रूप से चीन में दर्ज की गई। वर्ष 2019 की तुलना में 96,498 अधिक आवेदन दायर किए गए, जिसमे कोरिया गणराज्य (7,784), चीन, हांगकांग (5,024) और भारत (3,144) के आवेदन भी सम्मिलित हैं। पेटेंट के लिए दाखिल किए जाने वाले आवेदनों की संख्या वर्ष–प्रति–वर्ष बढ़ रही है। जैसे आवेदनों की संख्या वर्ष 1995 में लगभग 10 लाख से बढ़कर वर्ष 2010 में 20 लाख हो गई और वर्ष 2016 में 30 लाख की संख्या तक पहुंच गई। अतः यह कहा जा सकता है कि *पेटेंट* के लिए किए जाने वाले आवेदनों में बढ़ने की प्रवृत्ति दर्ज की जा रही है। एशिया स्थित *पेटेंट* कार्यालयों में प्राप्त आवेदनों ने सम्पूर्ण विश्व के कुल 66.6% अर्थात 22 लाख आवेदन प्रस्तुत किए गए हैं।

अर्थव्यवस्थाओं का आकार, संरचना, जनसंख्या, सकल घरेलू उत्पाद (*जीडीपी*), अनुसंधान और विकास खर्च कुछ ऐसे चर हैं जो हमें विभिन्न देशों में *पेटेंटिंग* गतिविधि में भिन्नता के बारे में अधिक जानकारी प्रदान कर सकते हैं, जब निवासी *पेटेंट* गतिविधि का उल्लेख चर के संबंध में किया जाता है। लगभग 100 अरब अमरीकी डालर के सकल घरेलू उत्पाद की प्रति इकाई 8,249 निवासी *पेटेंट* आवेदनों के साथ, कोरिया गणराज्य ने वर्ष 2020 में सबसे अधिक पेटेंट आवेदन प्रस्तुत किए। इसके पश्चात चीन (5,845), जापान (4,696), जर्मनी (1,609) तथा स्विट्जरलैंड (1,605) का स्थान है। भारत (274) *पेटेंट* आवेदन के साथ विश्व में 25वें स्थान पर है।

वर्ष 2019 के आंकड़ों से, 284,146 प्रकाशित अनुप्रयोगों के साथ दुनिया भर में प्रकाशित *पेटेंट* अनुप्रयोगों में कंप्यूटर प्रौद्योगिकी सबसे अधिक बार प्रदर्शित होने वाली तकनीक थी। इसके बाद विद्युत मशीनरी (210,429), माप (182,612), *डिजिटल* संचार (155,011), और चिकित्सा प्रौद्योगिकी (154,706) आती है। वर्ष 2017 और वर्ष 2019 के बीच, चीन (सभी प्रकाशित आवेदनों का 8.6%), *यूनाइटेड किंगडम* (7.5%) और संयुक्त राज्य अमेरिका (11.8%) ने कंप्यूटर प्रौद्योगिकी में सर्वाधिक आवेदन प्रस्तुत किए। भारत के लिए, कुल प्रकाशित आवेदनों में से 17.8% औषधि (*फार्मास्यूटिकल्स*) क्षेत्र से संबंधित थे।

वर्ष 2020 में, दुनिया भर में लगभग 16 लाख आवेदन *पेटेंट* के लिए प्रस्तुत किये गए जो 2019 की तुलना में 6% अधिक हैं। वर्ष 2020 में सबसे अधिक *पेटेंट* चीन (530,127) द्वारा जारी किए गए। इसके पश्चात संयुक्त राज्य अमेरिका (351,993), जापान (179,383), कोरिया गणराज्य (134,766) और ईपीओ (133,706) का स्थान था। भारत ने 26,361 *पेटेंट* प्रदान किए जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 2020 में दिए गए आकड़ों में 11.8% *पेटेंट* की वृद्धि हुई। दोनों निवासी और अनिवासी अनुदानों ने भारत में कुल विकास में समान रूप से योगदान दिया।

वर्ष 2020 में, 92 कार्यालयों के आंकड़ों का विश्लेषण किया गया जिसमे *पेटेंट* की औसत आयु ध्यान देने योग्य मुख्य आंकड़ा है, जैसे कि लगभग 41.3% *पेटेंट* आवेदन दाखिल करने की तारीख के बाद से कम से कम 7 वर्षों तक लागू रहे और लगभग 18.9% *पेटेंट* आवेदन 20 साल के कार्यकाल तक पूर्ण चले। भारत में संस्तुत सभी *पेटेंटो* की औसत आयु 12 वर्ष बताई गई है। दूसरी ओर, कुल आवेदनों के संबंध में अस्वीकृत आवेदनों का प्रतिशत चीन (35.5%), कोरिया गणराज्य (26.7%) और सयुक्त राज्य अमेरिका (45.2%) में सर्वाधिक था। ब्राजील (57.8%), जर्मनी (38.3%) और भारत (37.7%) में वापस लिए गए या छोड़े गए आवेदनों का अनुपात सबसे बड़ा था।

जब लंबित आवेदनों की बात आती है, तो चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका के *पेटेंट* और *ट्रेडमार्क* कार्यालय (*यूएसपीटीओ*) के पास लगभग 10 लाख आवेदन लंबित हैं। भारत में वर्ष 2020 में लगभग 117,336 आवेदन लंबित थे, जो एक वर्ष पूर्व की तुलना में 23.4% कम हो गए थे। विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (*डब्ल्यूआईपीओ*) के *पीसीटी* के माध्यम से दायर किए गए अंतर्राष्ट्रीय पेटेंट आवेदन वर्ष 2020 में 275,900 आवेदन तक

पहुँच गए। +16.1% के साथ चीन एकमात्र ऐसा देश था जिसने वर्ष 2019 और वर्ष 2020 के बीच दोहरे अंकों की वार्षिक वृद्धि दर्ज की, जबकि भारत ने इसी अवधि में –6.5% की गिरावट दर्ज की।

गत पांच वर्षों के आवेदन रुझान– दायर किए गए, जांचें गए, स्वीकृत किए गए और निपटाए गए *पेटेंट* आवेदनों के संबंध में पिछले पांच वर्षों के रुझान नीचे दिए गए हैं। आवेदनों के निपटान में पेटेंट कार्यालय द्वारा दिए गए/अस्वीकार किए गए पेटेंट और आवेदकों द्वारा वापस लिए गए और छोड़े गए आवेदन

तालिका 1: गत पांच वर्षों के पेटेंट आकड़ों के रुझान

ब्यौरे	2015-16	2016-17	2017-18	2018-19	2019-20
दाखिल	46,904	45,444	47,854	50,659	56,267
जांचे हुए	16,851	28,967	60,330	85,426	80,080
स्वीकृत	6,326	9,847	13,045	15,283	24,936
निपटान	21,987	30,271	47,695	50,884	55,945

शामिल हैं।

हमारा मानना है कि कोविड–19 महामारी के बावजूद, भारत में *पेटेंट* दाखिल करने में वृद्धि सरकार द्वारा पेटेंट के बारे में लोगों को शिक्षित और प्रोत्साहित करने के लिए किए जा रहे प्रयासों के कारण संभव हो सकी है। सरकार ने *पेटेंट* भरने को प्रोत्साहित करने के लिए व्यक्तियों, छोटी संस्थाओं और शैक्षणिक संस्थानों के लिए *फाइलिंग* शुल्क में काफी कमी की है। इसके अतिरिक्त, महिलाओं को प्रोत्साहित करने के लिए, भारत सरकार ने इस तरह की त्वरित परीक्षा आदि में छूट प्रदान की है। हमारे विचार से ऊपर उल्लिखित कारकों के कारण भारत में *पेटेंट* आवेदन दाखिल करने में महत्वपूर्ण वृद्धि संभव हो सकी। हम आगामी वर्षों में यह भी आशा करते हैं कि सरकार *पेटेंट* के लिए लोगों को प्रोत्साहित करने के लिए कदम उठाएगी क्योंकि यह नवाचार, सस्ते उत्पादों को प्रोत्साहित करके अंततः भारतीय अर्थव्यवस्था को सुधारने में मील का पत्थर सिद्ध होगा।

समिति यह संस्तुति करती है कि निरीक्षण कार्य के लिए एक *प्रोफार्मा* तैयार किया जाए और जब भी कोई अधिकारी (वरिष्ठतम अधिकारी सहित) अपने किसी अधीनस्थ कार्यालय में निरीक्षण या दौरे पर जाए तो उससे उक्त *प्रोफार्मा* को अनिवार्य रूप से भरवाया जाए कि प्रत्येक कार्यालय का वर्ष में कम से कम एक राजभाषा संबंधी निरीक्षण अवश्य हो, चाहे किसी भी स्तर पर हो। यह निरीक्षण मंत्रालय, मुख्यालय या राजभाषा विभाग द्वारा किया जा सकता है।

संस्तुति संख्या : 16
राष्ट्रपति आदेश दिनांक 31 मार्च, 2017

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

उत्तर प्रदेश का गौरव : गन्ना

मनोज कुमार सिंह
भूगोल विभाग, उदय प्रताप स्वायत्तशासी कालेज, वाराणसी

भारत एक विशाल देश है इसको एक महाद्वीपीय देश भी कहते हैं। क्योंकि इसकी विविधता, कला संस्कृति के कारण यह अधिक रमणीक एवं सुन्दर है। प्राकृतिक छटा तो उसकी अपनी विविधता की पहचान है। प्राकृतिक विविधता और कला के कारण भारत का हर एक प्रदेश एक महत्वपूर्ण फसल के उत्पादन में पहचान रखता है। भारत कृषि प्रधान देश है। इसकी अर्थव्यवस्था आय भी कृषि उत्पाद से संबंधित होती है। उत्तर प्रदेश भी एक मुख्य गन्ना उत्पादक प्रदेश है। इसकी स्थिति गंगा–यमुना के द्वारा बना समतल सपाट स्थान भाग है। मैदानी भूमि में अनेक छोटी–बड़ी नदियों का आगमन उपयुक्त उपजाऊ मिट्टी की विशेषता लिए हुए है और अनेकानेक उच्च किस्मों के फसल उत्पादन के लिए उत्तर प्रदेश की पहचान रही है। विविध मिट्टी की सोंधी खुशबू गाँवों के जीवन में घुली बसी है। जो गन्ना की खेती के लिए वरदान है।

हमें गर्व है कि भारत में उत्तर प्रदेश को गन्ना प्रदेश कहते हैं। उत्तर प्रदेश का नकदी फसल के रूप में गन्ना विश्व में अपनी पहचान रखता है। यही नहीं, गन्ना प्रदेश में अपने उत्पाद कला के रूप में पहचान रखता है साथ ही साथ तरक्की पसन्द देश के जीवन में भी मिठास घोलता है। भारत में कृषि कला का आरम्भ आर्य सभ्यता के द्वारा हुआ था वहाँ से लेकर आज तक भारत में गन्ना की खेती की उच्चतम स्तर तक अपनी पहचान रही है। श्रम प्रधान उत्तर प्रदेश में गन्ने की खेती में बुआई से लेकर कटाई तक अधिक श्रम की आवश्यकता होती है। आज भी उत्तर प्रदेश की 20 प्रतिशत से अधिक कृषक जनसंख्या गन्नें की खेती में लगी हुई है। प्राचीन काल में गन्ने की खेती गुड़ का निर्माण करने के लिए पहचान रखती थी और गन्ने से रस निकालकर चोरा, राब, गुड़ भेली खांडसारी, चीनी, शीरा आदि महत्वपूर्ण पदार्थ बनाए जाते थे। निर्यात के लिए गन्ना से चीनी बनाई जाती थी। आज उत्तर प्रदेश की सरकार के लिए गन्ना उद्योग ने बड़ा विकराल रूप ले लिया है जो विदेशी मुद्रा का साधन बन गया है। आज अनेक उद्योग गन्ने के कच्चे माल पर चल रहे हैं जैसे गन्ने पर आधारित जैविक खाद बनायी जा रही है। पशुओं के लिए पौष्टिक चारा के रूप में भोज्य पदार्थ बनाया जा रहा है। षाष्वत् ऊर्जा के स्रोत की तलाश की जा रही है। खोई से ऊर्जा उत्पादन हो रहा, गन्नें से 'शीरा' बनाने के बाद प्रसंस्करण उद्योग के रूप में शराब (मदिरा) उद्योग का विकास हुआ है। आज जितना लाभ गन्ना से होता है उससे कहीं अधिक लाभ मदिरा उद्योग से हो रहा है। आज बड़े पैमाने पर खांडसारी उद्योग का जाल बिछा हुआ है। बाजार आधारित उद्योग में गन्ना से गुड़ बनाने में कृषक को अधिक लाभ होता है। गुड़ की कीमत सदैव चीनी से अधिक होती हैं। प्राचीनकाल से कृषक गन्ने से एक बार 'गुड़' व 'भेली' अवश्य तैयार करता है व पूरे वर्ष उसका जब चाहे, जैसी आवश्यकता हो उस तरह से प्रयोग करता था। प्रायः किसान के घर में 'गुड़' को सदैव तैयार भोजन कहा जाता है और शरीर में ग्लूकोज की मात्रा को बनाये रखने में इसका अत्यन्त महत्व है। वहीं चीनी को लगभग 34 प्रतिशत लोगों ने स्वास्थ्य कारणों से प्रतिबंधित कर दिया है। स्वास्थ्य विषेषज्ञ आज सभी को 'गुड़' लेने के लिए सलाह दे रहे हैं।

आज उत्तर प्रदेश में कृषि की आधुनिकता का प्रभाव अत्यधिक है। उत्तर प्रदेश की कुल कृषि में लगे श्रमिकों के रोजगार का 20 प्रतिशत भाग गन्ना कृषि को उपलब्ध है। 2021 में उत्तर प्रदेश की कृषि भूमि में गन्ना का क्षेत्रफल 27.16 लाख हेक्टेयर है। गन्ना की औसत उत्पादकता 81.10 टन प्रति हेक्टेयर है। 2019–20 में आधा नया गन्ना तथा लगभग आधी 'पेड़ी' की फसल का स्तर है। चीनी उत्पादन में भी उत्तर प्रदेश पहली बार देश में प्रदेश सरकार की कुशल प्रबंधन क्षमता'' ने प्रथम स्थान पर पहुँच गया है। भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में चीनी मिलों की संख्या के दृष्टिकोण से उत्तर प्रदेश प्रथम स्थान पर है। इस वर्ष पेराई सत्र में कुल 46 चीनी मिल चल रही हैं। भारत का चीनी उत्पादन इस वर्ष में 13 प्रतिशत बढ़कर 3.1 करोड़ टन होने का अनुमान है। उद्योग संगठन भारतीय चीनी मिल संघ (*इस्मा*) के अनुसार गन्नें की अधिक उपलब्धता से चीनी उत्पादन ज्यादा होगा।

भारत में उत्तर प्रदेश एवं अन्य राज्य गन्ने की फसल के तैयार होने पर 'पर्व' का आयोजन करते हैं अपने इष्टदेव को अपनी कृषि का अंशदान करते हैं। उत्तर प्रदेश अपने कुल उत्पादन का अधिकतम भाग राष्ट्र को समर्पित करता है। राष्ट्र चीनी से विदेशी मुद्रा अर्जित करता है। यूरोपियन विकसित देशो की मिठास उत्तर प्रदेश के गन्ना से होने से हम उत्तर प्रदेश वासी गर्व महसूस करते हैं क्यों कि हमारी मिठास से पूरी दुनिया आश्चर्यचकित होती है। हमारे गन्ना किसानों की कर्जदार समय–समय पर हमारी सरकारें भी रही हैं। समय से गन्ना को खरीदना सभी उत्पाद का निर्माण कर राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मूल्यों पर बाजारों में बेचना और किसानों का पैसा न देना सरकार की परंपरा बन गयी थी। एक दशक तक गन्ना किसान अपने पैसों को लेकर आंदोलनरत रहा है और 'ठगा' महसूस करता था। परंतु अब वर्तमान प्रदेष सरकार के कुशल प्रबंधन ने उसको समोजित किया और बकाया भुगतान पाने से किसानों ने पुनः

कृषि में गन्ने के प्रतिशत का बढ़ाया। आज उत्तर प्रदेश अपने गन्ने के उत्पादन से गर्व महसूस कर रहा है।

हमारा उत्तर प्रदेश अपनी कृषिकला की निपुणता के लिए विश्व स्तर पर पहचान रखता है। ब्रिटिश सरकारों के औपनिवेशिक विस्तारीकरण के कारण वहाँ की कृषि को उत्तर प्रदेश के गन्ना कृषकों के अधीन किया। कृषि एवं गन्ना की कृषि करने वाले किसानों श्रमिकों को अन्य विश्व के देशों में मजदूर बनाकर ले जाया गया। जहाँ–जहाँ हमारें उत्तर प्रदेश के कृषि श्रमिक व कृषक गये। उस देश में अपने कृषि दक्षता व क्षमता के बल पर उस देश की अर्थव्यवस्था में कृषि व गन्ना की खेती के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया और वहीं का होकर रह गए। उन देशों में गन्ना कृषक, मजदूर से राजसत्ता तक को पहुँच भी रखता है। विश्व के अनेक देशों में राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री भारतीय मूल के नागरिक हैं। जिनके पूर्वज एक कुशल कृषक व कृषि श्रमिक रहे हैं। दुनिया में भारत से सबसे अधिक गन्ना के कुशल श्रमिकों को ले जाया गया था।

हमारे उत्तर प्रदेश में पूर्वांचल, तराई का क्षेत्र, पश्चिमांचल बुंदेलखण्ड, अवध प्रांत सभी क्षेत्रों में एक निश्चित कृषि भूमि में गन्ना की कृषि होती है। कृषक खुशहाल उत्पादन से, इस नकदी फसल से आय प्राप्त करता है।

आजादी के बाद व पूर्व में गन्ना कृषि एक सामाजिक सहयोग द्वारा सभी समाज के वर्ग विशेष के लोग गन्ने की कृषि पद्धति से सहयोग करते हुए गन्ना कृषकों के बीच व्यवहारिक पक्षों को मजबूती प्रदान करती है। गन्ना कृषि रोजगार उपलब्ध कराने में अग्रणी है। गन्ना की पहचान औद्योगिक फसल के रूप में हुई है। गन्ना कृषि के कारण बड़ी–बड़ी औद्योगिक इकाई स्थापित हुई हैं और क्षेत्र उद्योग प्रधान बनता चला गया। इसका बड़ा ही योगदान कृषि विज्ञान को जाता है। इसमें महती क्रिया–कलाप के लिए कृषि वैज्ञानिकों का योगदान सदैव महत्वपूर्ण रहा है। गन्ना कृषि में विकास की रूप–रेखा की तैयारी भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ की है। जो कृषक के साथ जुड़कर कृषि की बारीकी और उत्पादन को प्रोत्साहित करते हैं। अनुसंधान की भूमिका से विश्व में गन्ना का प्रचार–प्रसार एवं वैज्ञानिकता को बढ़ावा मिला है। उत्पादन में लगातार वृद्धि भी हो रही है। गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के कृषि वैज्ञानिक, संस्थान को राष्ट्रीय धरोहर को पोषित करने में सफल हुए हैं और गन्ने के रिकार्ड उत्पादन, संरक्षण एवं समृद्धि का श्रेय वैज्ञानिकगण, कृषक एवं सरकार सभी को है।

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि वैज्ञानिकों की सोच राष्ट्र की उन्नति में सहायक होती है। परंतु जब अनुसंधान संस्थान की स्थापना होती है तो राष्ट्रीय समृद्धि, वैभवशाली राष्ट्र, आर्थिक उन्नति, के मार्ग प्रशस्त हो जाते हैं जो राष्ट्रीय पहचान बनकर विश्व को अपनी वैज्ञानिक खोजों का एहसास कराते हैं। धन्य हैं हमारे अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकगण और प्रबंधन जिसकी भूरि–भूरि प्रषंसा किए जाने की आवश्यकता है। जो राष्ट्रीय उन्नयन के लिए सदैव समर्पित हैं।

भारतीय सभ्यता की अविरल धारा प्रमुख रूप से
हिंदी भाषा से ही जीवंत तथा सुरक्षित रह पाई है।
–अमित शाह

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ने की मिठास बढ़ाने में प्रथम भारतीय महिला वैज्ञानिक जानकी अम्माल का अनुपम एवं अतुलनीय योगदान

ओम प्रकाश[1], पल्लवी यादव[2], ब्रह्म प्रकाश[1], अजय कुमार साह[1], अश्विनी दत्त पाठक[1] एवं कामिनी सिंह[1]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]एस.एन. *सेफ क्रॉप साइंस*, इंदौर

भारतीय गन्नों को मिठास देने में जानकी अम्माल का नाम अग्रणी है। भारतीय जीवन जो मिठास के लिए गुड़ पर निर्भर था, उसमें चीनी की मिठास घोलने में जानकी अम्माल का शोध, मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इतना ही नहीं, विज्ञान के क्षेत्र में जानकी अम्माल कोशिकानुवंशिकी और *फाइटोजॉग्रफी* के क्षेत्र में उनका योगदान अनुपम एवं अतुलनीय रहा है। आज भारत गन्ने के उत्पादन में दुनिया में दूसरे स्थान पर है, जिसका काफी हद तक श्रेय उन्ही को जाता है।

हो सकता है कि आपने कृषि क्षेत्र में देश को स्वावलंबन की राह पर अग्रणी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देने वाली जानकी अम्माल के बारे में बहुत अधिक न सुना हो। परंतु हर त्योहारों एवं खुशी के सभी अवसरों पर आप जिन मिठाईयों में मिठास का स्वाद लेते हैं, उसका श्रेय जानकी को ही जाता है। वर्तमान में गन्ने के उत्पादन में भारत ब्राजील के पश्चात द्वितीय स्थान पर है, तो इसमें कहीं न कहीं जानकी अम्माल के शोध का उल्लेखनीय योगदान रहा है। भारत में मुख्यतः गन्ने से ही चीनी बनाई जाती है। कहा जाता है कि जब अधिकांश भारतीय महिलाएं हाईस्कूल से आगे नहीं पढ़ पाती थीं, तब जानकी अम्माल वनस्पति शास्त्र के क्षेत्र में पीएचडी करने वाली प्रथम भारतीय महिला बनीं। उन्होंने वर्ष 1931 में अमेरिका की मिशिगन यूनिवर्सिटी से वनस्पति विज्ञान में पीएचडी की। उन्होंने *साइटोजेनेटिक्स* और *फाइटोजिओग्राफी* के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

4 नवंबर, 1897 को दक्षिण भारत के केरल राज्य के तेल्लिचेरी (वर्तमान में थालास्सेरी के नाम से लोकप्रिय) में जन्मी ईके जानकी अम्माल के पिता दीवान बहादुर ईके कृष्णन उस समय मद्रास प्रेसीडेंसी में उप–न्यायाधीश के पद पर सेवारत थे। उनकी मां का नाम देवी कृष्णन था। थालास्सेरी में समुद्र के पास *'एडैथिल हाउस'* में अम्माल अपने माता, पिता, छह भाई और पांच बहनों के साथ रहती थीं। जहाँ महिलाओं को अपने छोटे–छोटे अधिकारों के लिए जूझना पड़ता था वहां जानकी के समुदाय में उन्हें और उनके समुदाय की अन्य महिलाओं को शिक्षा के लिए प्रोत्साहित किया जाता था जो उस वक्त के लिए एक दुर्लभ बात थी। मध्यवर्गीय परिवार और उदारवादी परिवार के माहौल में सभी बच्चों को खेलने–कूदने और पढ़ने– लिखने का भरपूर अवसर मिला, जो उस दौर के लिए अत्यंत बड़ी बात थी। यह वह दौर था जब बचपन से ही बालिकाओं को गृहकार्य तथा बालकों को सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने की सीख दी जाती थी। ऐसे समय में एक परिवार में सभी बालक–बालिकाओं के प्रति समान व्यवहार विकसित करना अवश्य ही चुनौतीपूर्ण कार्य रहा होगा। विशेषकर तब जब उस दौर में कन्याओं को औपचारिक शिक्षा से दूर रखने के लिए सैकड़ों पूर्वाग्रह समाज के ऊपर हावी थे। प्राकृतिक विज्ञान में गहरी रुचि रखने वाले जानकी के पिता तत्कालीन विद्वानों के साथ नियमित रूप से पत्र–व्यवहार किया करते थे तथा वह अपनी बेटी जानकी अम्माल को भी इसी क्षेत्र में आगे बढ़ते हुए देखना चाहते थे। जानकी अम्माल को रंगों से प्यार था और वह पीले रंग की साड़ियों की शौकीन थीं। वह हमेशा अपने जीवन के नजरिए को लेकर बहुत शांत और सुलझी हुई थीं। उन्होंने एक बार कहा था, "मेरा काम ही है जो जीवित रहेगा"।

जिस समय जानकी उच्च शिक्षा के लिए तैयार हो रही थीं, उस समय तक दक्षिण भारत में बालिकाओं की शिक्षा के लिए सामाजिक वातावरण तैयार हो चुका था। परंतु, सामाजिक चुनौतियां कई स्तरों पर काम कर रही थी। इसका सामना जानकी को भी करना पड़ा। तेल्लीचेरी में शुरुआती शिक्षा लेने के बाद उच्च शिक्षा के लिए अम्माल मद्रास चली गयीं जानकी ने क्वीन मैरी कालेज, मद्रास से स्नातक तथा वर्ष 1921 में प्रेसीडेंसी कालेज, मद्रास से वनस्पति विज्ञान में *आनर्स* की *डिग्री* प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने महिला क्रिश्चियन कालेज, मद्रास में अध्यापन का कार्य भी किया। इसी दौरान वर्ष 1931 में उन्हें मिशिगन विश्वविद्यालय, अमेरिका से *मास्टर्स* करने के लिए प्रतिष्ठित *बारबर स्कालरशिप* प्राप्त हो गई। जहां उन्होंने *पीएचडी* की मानद उपाधि के लिए गन्नों के संकर पर अपना शोध कार्य किया। वे मिशिगन विश्वविद्यालय द्वारा *डीएससी (डाक्टर आफ साइंस)* से सम्मानित होने वाली तत्कालीन चंद एशियाई महिलाओं में से एक थीं। आने वाले वर्षों में उनके कैरियर को आकार मिला और वह वनस्पति विज्ञान की प्रोफेसर के रूप में भारत लौटी।

जानकी अम्माल ने देश के अन्य वैज्ञानिकों के साथ मिलकर गन्ने की मीठी किस्म के अलावा एक ऐसी किस्म भी विकसित की, जो विभिन्न प्रकार के रोगों तथा सूखे की स्थिति में भी उगाई जा सकती थी। 1920 से पहले गन्ना उत्पादन के क्षेत्र में भारत की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती थी। 1925 में भारत लौटने पर उन्होंने गन्नों की *क्रॉस ब्रीडिंग* करके नवीन प्रकार के गन्नों का उत्पादन आरंभ किया। अम्माल की यह भारत को बहुत बड़ी देन है। सिर्फ गन्ने व पुष्पों पर ही नहीं, अपितु बैंगन की *क्रास ब्रीडिंग* पर भी उन्होंने शोध किया। आज भारत में बैंगन की एक नहीं, अपितु कई नस्ले देखने को मिलती हैं। जानकी अम्माल की *क्रॉसब्रीडिंग* शोध के ही परिणामस्वरूप बैगन के बैंगनी, हरी, सफेद, गोल, छोटे व लंबे जैसे विभिन्न संकर नस्लों की खोज संभव हो सकी। भारत लौटने के बाद, उन्होंने वर्ष 1932 से 1934 तक कुछ समय के लिए त्रिवेंद्रम के महाराजा *कॉलेज ऑफ साइंस* में वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसर के रूप में काम किया। इसके बाद वर्ष 1934 से 1939 तक उन्होंने कोयम्बटूर में गन्ना प्रजनन संस्थान में एक आनुवांशिकी विज्ञानी के रूप में काम किया जिसमें गन्ना और संबंधित घास प्रजातियों पर उनका शोध अपने संबंधित क्षेत्रों में एक बेहद महत्वपूर्ण शोध के रूप में सामने आए। डॉ. जानकी अम्माल ने उच्च उपज वाले गन्ने की कई *हाइब्रिड* किस्मों की पहचान की। उनके शोध में *क्रॉस–ब्रीडिंग* के लिए पौधे की किस्मों का विश्लेषण करना भी शामिल था। यह उनके शानदार *कैरियर* की शुरुआत थी। हालांकि, इस दौरान उन्होंने कई बाधाओं का सामना भी करना पड़ा। महात्मा गांधी के विचारों से प्रभावित 'सादा जीवन उच्च विचार' वाली जानकी अम्माल को देश–विदेश में कई राष्ट्रीय–अंतराष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। अम्माल को वर्ष 1935 में भारतीय विज्ञान अकादमी और वर्ष 1957 में भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी का *फेलो* चुना गया था।

अम्माल ने अपना शोध जारी रखने के लिए लंदन का रुख किया और द्वितीय विश्व युद्ध की अराजकता के बीच वर्ष 1940–1945 के दौरान लंदन के *जॉन इंस हॉर्टिकल्चर इंस्टिट्यूशन* में एक *असिस्टेंट साइटोलॉजिस्ट* के रूप में काम किया। इसके बाद उन्होंने वर्ष 1945–1951 के दौरान विस्ले में *रायल हार्टीकल्चर सोसायटी* में *साइटोलॉजिस्ट* के रूप में काम किया, जहां उन्होंने 1945 में सीडी डार्लिंगटन के साथ एक पुस्तक *'द क्रोमोजोम एटलस ऑफ कल्टिवेटेड प्लांट्स'* भी लिखी। अपने पूरे *कैरियर* के दौरान डॉ. जानकी अम्माल ने अपने शोध को अपने *मिशन* के रूप में रखते हुए कई साहसी निर्णय लिए थे और इन्हें पूरा करने के लिए वह जल्द ही चुनौतीपूर्ण माहौल में ढल गई थीं। समाज और जाति व्यवस्था, जो पाबंदियां एक महिला पर लगाता है, वे बाधाएं जानकी को उनके चुने हुए रास्ते से रोकने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली नहीं थी।

लंदन की *रायल हार्टिकल्चरल सोसायटी* में मगनोलिया पुष्प के गुणसूत्रों पर अध्ययन के बाद उनके नाम पर पुष्प का नाम 'मगनोलिया कोबुस जानकी अम्माल' रखा गया। स्वतंत्रता के पश्चात देश से पलायन कर रही विज्ञानी प्रतिभाओं को देश में रोकने और स्थानीय प्रतिभाओं को प्रोत्साहन देने तथा गन्ने पर उनकी संकर शोध से देश और किसानों को हो रहे लाभों को देखते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने वर्ष 1951 में उन्हें भारत में वानस्पतिक अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए सरकारी सेवा में शामिल होने के लिए एक विशेष अधिकारी के रूप में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के पुनर्गठन के लिए आमंत्रित किया था। प्रधानमंत्री के आग्रह पर उन्होंने लंदन में अपने तीन दशक के सुनहरे व प्रतिष्ठित कैरियर को छोडकर देश की निस्वार्थ सेवा के लिए भारत लौटकर *इंडियन बोटैनिकल सोसायटी* का पुनर्गठन किया। वनस्पति शास्त्र में उनकी उल्लेखनीय सेवाओं के लिए भारत सरकार द्वारा उनको वर्ष 1957 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया। यह सम्मान पाने वाली वे देश की प्रथम महिला वैज्ञानिक थीं। जानकी ने भारतीय वानस्पतिक सर्वेक्षण के निदेशक पद को भी सुशोभित किया।

जानकी अम्माल ने अपनी उपरोक्त उपलब्धियों के बावजूद जीवन में अकेली रहने का फैसला किया। जानकी अम्माल को अपने सहकर्मियों से भेदभाव तथा एकल महिला होने के कारण उनको सामाजिक उत्पीड़न से भी गुजरना पड़ा। जानकी कभी पीछे नहीं हटीं तथा अपने समय के सबसे प्रमुख वैज्ञानिकों में से एक के रूप में उभरने के लिए इन चुनौतियों कर सामना करते हुए अपने अनुसंधान कार्य में ही संलग्न रहीं। उन्होंने अपने नेतृत्व में कई प्रमुख केंद्रीय वनस्पति प्रयोगशालाओं की नींव रखी। जानकी अम्माल स्वतंत्र भारत में विज्ञान के उत्थान में मदद करने के लिए, विभिन्न भूमिकाओं में सरकारी सेवा में कार्यरत रहीं। उन्होंने इलाहाबाद (वर्तमान में प्रयागराज) में केंद्रीय वनस्पति प्रयोगशाला का नेतृत्व किया। उन्होंने जम्मू और कश्मीर में क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला में विशेष कर्तव्य पर एक अधिकारी के रूप में काम किया और भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र से भी वह कुछ समय के लिए जुड़ी रहीं। 7 फरवरी, 1984 को उनका स्वर्गवास हो गया। वनस्पति शास्त्र की *फाइटोबायोलाजी, एथनोबाटनी, फाइटोजियोग्राफी* और क्रम विकास के अध्ययन में उनके योगदान को सदैव स्मरण किया जाएगा। वर्ष 2000 में भारत सरकार के पर्यावरण और वन मंत्रालय ने उनके नाम पर *टैक्सोनौमी* के क्षेत्र में राष्ट्रीय पुरस्कार संस्थापित किया। जानकी स्वयं कहती थीं कि लोग उनको नहीं, अपितु उनके अनुसंधान कार्य को चिरकाल तक स्मरण रखेंगे। कहीं न कहीं, उनकी बात शत प्रतिशत सत्य सिद्ध हुई। गन्ना की खेती कर रहा कृषक एवं गन्ने से बनी चीनी आज भारतीय जीवन में मिठास घोल रही हैं।

राजभाषा प्रभाग

भाषा विघटन की रोक हेतु जन–प्रबोधन

सूर्य प्रसाद दीक्षित
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

हिंदी–क्षेत्र में विघटनकारी तत्वों ने पहले पंजाबी, सिंधी, गुजराती को अलग किया, फिर राजस्थानी, मैथिली को स्वतंत्र साहित्यिक मान्यता दी। इधर भोजपुरी का दुष्चक्र चल रहा है। सर्वाधिक आपत्तिजनक यह है कि हिंदी की एक शैली–उर्दू को अलगाया–बरगलाया गया है। कई राज्यों ने उसे द्वितीय राजभाषा बनाकर संघर्ष पैदा कर दिया है और इस प्रकार 'हिंदुस्तानी' को क्षति पहुँचाई गई है।

उर्दू को द्वितीय राजभाषा घोषित करने के पूर्व शासन के सत्ताधिकारियों को यह सोच लेना चाहिए कि उर्दू कोई भाषा भी है कि नहीं ? वस्तुतः यह प्रश्न भाषाविदों का है, न कि दलबंदी के दलदल में धंसे हुए राजनीतिज्ञों का। किंतु देश का दुर्भाग्य है कि भाषा का प्रश्न हो या साहित्य का, संस्कृति का प्रश्न हो या सामाजिक दर्शन का, समस्त समस्याओं का समाधान यहाँ राजनीतिज्ञों द्वारा ही किया जाता है। उन राजनीतिज्ञों द्वारा जिनके पास होते हैं कुछ नारे, कुछ रटे–रटाए मुहावरे और कुल मिलाकर जिनके सामने होती है वोट की राजनीति। स्वतंत्रता की माँग करते हुए महात्मा गांधी ने और उनके साथ जुड़े हुए अन्य सेनानियों ने इस राष्ट्रीय विभीषिका की कल्पना तक नहीं की होगी। उनकी स्वर्णिम कल्पना थी कि देश की एक राष्ट्रीय सरकार होगी, जिसमें अलग–अलग कई घटक होंगे, जहाँ उत्पादन मजदूरों पर निर्भर होगा, अन्न किसान भगवान से मिलेगा, सीमा–सुरक्षा हमारे जवान सँभालेंगे, भविष्य का चिंतन बुद्धिजीवी करेंगे और जन–जागृति साहित्यकारों द्वारा प्रसारित की जाएगी। जनता की आवाज पत्रकारिता बनेगी और प्रशासन सुयोग्य व सक्षम अधिकारियों द्वारा चालित होगा। आज ये सारे कार्य एक ही विराट पुरुष के उदर में समा गए हैं, वह है राजनीतिज्ञ। वही विचारक है, वही सुधारक है, वही प्रचारक है, अर्थात् पीर, बावर्ची, भिश्ती। हर राज्य और समाज का सर्वेसर्वा।

यही कारण है कि उत्तर प्रदेश में जब इसकी द्वितीय भाषा का प्रश्न उठा तो किसी भाषाविद् से नहीं पूछा गया। यहाँ न कोई आयोग गठित किया गया, न कोई समिति बनी। केंद्र के दबाव में आकर एक भूतपूर्व मुख्यमंत्री ने अपने थोथे आदर्शवाद और छद्म हिंदी अनुराग के बावजूद यह घोषणा कर डाली कि उर्दू को दूसरी राजभाषा का पद दिया जाएगा। इस घोषणा के पीछे चाहे जो विवशता रही हो, इतना स्पष्ट है कि एक विशेष प्रकार का गहरा अपराध–बोध और आंतरिक ग्लानि का गहरा एहसास भी उन्हें हुआ और इसीलिए इसकी क्षतिपूर्ति हेतु उन्होंने हिंदी की संस्थाओं के लिए अनुदान की राशि बढ़ा दी। अनौपचारिक रूप से कहा यह गया कि यह घोषणा तो केवल राजनीतिक है, यों इससे हिंदी की प्रगति पर कोई फर्क नहीं पड़ेगा। फिर भी इस घोषणा का विरोध हुआ। इसका विरोध करते हुए प्रो. वासुदेव सिंह और श्रीनारायण चतुर्वेदी शहीद हो गए और यह कूटचक्र स्थगित हो गया।

कालांतर में हिंदी दिवस की पूर्व संध्या पर अकस्मात् उत्तर प्रदेश की मंत्री परिषद ने यह निर्णय पुनः प्रसारित कर दिया कि द्वितीय भाषा उर्दू का विधेयक शीघ्र ही लाया जाएगा। कुछ दिनों बाद वह काला दिन इतिहास में दर्ज हो गया, जब भारी हंगामे के बीच धोखे से यह विधेयक प्रस्तुत किया गया और दूसरे दिन थोड़े–बहुत विरोध के बावजूद, सत्तापक्ष के बहुमत के कारण, वह विधानसभा तथा फिर परिषद् से भी पारित हो गया। इसमें सत्तापक्ष का तो निहित स्वार्थ है ही, अन्य दल भी कम अपराधी नहीं है। इसीलिए उन्होंने इस काले कानून का कोई विरोध नहीं किया, बल्कि कुछ ने तो समर्थन भी किया।

हमारा विरोध उर्दू से नहीं है। वह बड़ी प्यारी शैली है हिंदी की, इसलिए उसका जितना विकास और संरक्षण हो, उतना ही अच्छा है। हमारा विरोध उस नीति से है, जो तुष्टीकरण करती है, जो भेदभाव पैदा करती है, जो इन विवादों में उलझाकर जनता के ध्यान को बड़े प्रश्नों से भटका देती है, जो सांप्रदायिक उत्पात कराती है और उनका राजनीतिक लाभ उठाती है।

हमारा मात्र एक तर्क है। वह यह है कि क्या उर्दू कोई स्वतंत्र भाषा है। भाषाविदों का मत है कि स्वतंत्र भाषा होने की तीन शर्तें होती हैं–प्रथम तो यह कि उसका एक स्वतंत्र व्याकरण हो। दूसरे, उसका अलग इतिहास हो। तीसरे, उसकी स्वतंत्र शब्द–संपदा हो। उर्दू का इतिहास खड़ी बोली गद्य के साथ शुरू हुआ और मात्र एक सौ पचास वर्षों में सिमटकर रह गया। उर्दू का अपना कोई सांगोपांग अलग व्याकरण नहीं है। उसके अपने क्रियापद तक अलग नहीं हैं–खाना, पीना, रोना, गाना, उठना, चलना, बैठना, ये सब क्रियाएँ हिंदी–उर्दू में समान हैं। सहायक क्रियाएँ–है, हैं, हूँ, था, थी, थे, गा, गे भी दोनों में समान हैं। क्रिया विश्लेषण भी एक है। इन दोनों शैलियों के सर्वनाम भी एक हैं–वह, वे, तुम, तू, मैं, हम आप, कहीं भी तो अंतर नहीं है। और तो और, इन दोनों की विभक्तियाँ, कारक, परसर्ग भी एक है–ने, को, से, के लिए, का, के, की, रा, रे, ना, नी, ने, में, पर ये सभी प्रयोग हिंदी–उर्दू में एक जैसे होते हैं। संबोधन–विस्मयादिबोधक चिन्ह तक एक हैं।

तात्पर्य यह है कि वाक्यों के समस्त उपादान दोनों में समतुल्य हैं। अंतर केवल संज्ञा और विशेषण शब्दों में है। ये संज्ञा, विशेषण शब्द तो हिंदी में यों भी पर्यायवाची और समानांतर शब्दों के रूप में हजारों और लाखों की संख्या में पाए जाते हैं। हम घर के लिए ही भवन, सदन, निकेतन, गृह आदि के साथ–साथ दौलतखाना और मकान जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं। घर, मकान शब्द बोल–चाल में सबसे अधिक प्रयुक्त होते हैं। यदि बोल–चाल के इन हिंदी शब्दों को फारसी लिपि में लिख दिया जाए तो क्या अलग से उसको 'उर्दू' भाषा का नाम देना बुद्धिसम्मत होगा? लिपि वाहन (माध्यम) मात्र होती है, जबकि भाषा एक संस्कृति (विचारधारा) और यह प्राकृतिक निधि होती है। यदि हम हिंदी शब्दों को रोमन लिपि में लिख दें तो वह शब्द अंग्रेजी का नहीं हो जाएगा। पहले सेना के जवानों को रोमन लिपि में लिखी हिंदी पढ़ायी जाती थी, पर थी वह हिंदी ही। उसी प्रकार फारसी लिपि में लिखे हुए ये शब्द हैं हिंदी की ही संपदा। हाँ, कुछ शब्द अपनी अलग अदा रखते हैं, इसीलिए उसको उर्दू की शैली कह दिया गया था। अब उस शैली को राजनीतिक अभिप्रायों से भाषा का नाम दे दिया गया है। यह समय के साथ कितना बड़ा छल है और जनता के साथ कितना बड़ा विश्वासघात?

हिंदी–क्षेत्र में बहुत सारी लिपियाँ प्रचलित रही हैं। पिछली शताब्दी में उत्तर भारत में कैथी और मुड़िया नामक लिपि बहुत लोकप्रिय रही है। सारा तिजारत (महाजनी धंधा) इसी के माध्यम से चलता था। इसमें शिरोरेखा नहीं होती थी। गुजराती इसी का विकसित रूप है। यह लिपि आज भी यत्किंचित विद्यमान है। इसमें लिखा हुआ साहित्य कभी पृथकतावादी नीति लेकर नहीं चला। उर्दू भी पहले अलगावादी नहीं थी। आजादी से सौ वर्ष पूर्व हिंदी की धार्मिक पुस्तकें भी उर्दू में छपती थीं और हिंदू–मुसलमान सभी उसका व्यवहार करते थे। आजादी के आंदोलन में राष्ट्रपिता ने यह अनुभव किया कि भारत जननी को एक हृदय बनाने के लिए एक भाषा और एक लिपि की आवश्यकता है। यह कार्य हिंदी और देवनागरी द्वारा ही संभव है। सभी ने उसको राष्ट्रीय एकता की कड़ी माना। इसीलिए हिंदी के माध्यम से छेड़ा गया राष्ट्रीय आंदोलन सफल हुआ और हमें स्वतंत्रता प्राप्त हुई। परंतु स्वार्थ पूरा हो जाने के बाद हिंदी को एक ओर डाल दिया गया। पहले तो अंग्रेजी की तुलना में उसकी उपेक्षा की और अब 55 वर्षों में, जब वह अपने पैरों पर खड़ी होने की स्थिति में हुई तो उसकी ही एक शैली उर्दू को उसके विरोध में खड़ा करके उसे सांप्रदायिक संघर्ष में उलझा दिया गया। यह सोचने की बात है कि जो सत्ता 50 वर्षों तक हिंदी को प्रथम राजभाषा न बना पाई, वह उर्दू को दूसरी राजभाषा कैसे बना पाएगी ? और उर्दू राजभाषा बन भी गई तो हिंदी का कितना अहित कर पाएगी ?

यह तो गौण प्रश्न है। मुख्य प्रश्न नीयत का है, संवैधानिक व्यवस्था का है और जन–चेतना का है। सत्ता की यही नीति बरकरार रही तो इससे भी कहीं अधिक घातक विधेयक तुच्छ राजनीति समीकरणों के उद्देश्य से लाए जा सकते हैं। इसलिए प्रश्न राष्ट्रीय स्वतंत्रता का है? हिंदी तो विरोध में ही पली है। राज्याश्रय ने उसे कुंठित किया है। राजकोप से उसका तेज विकसित हुआ है। आगे भी यह अमरबेल की तरह फैलेगी–फूलेगी। लेकिन यदि यह जनचेतना की वाणी है और यदि सच्ची भारत–भारती है तो विश्वाराधातियों को दंड अवश्य देगी, क्योंकि उसमें 'रामचरितमानस' के संपुटों का बल है। उसमें मंत्रों की शक्ति है। सूर, कबीर, नानक और जायसी जैसे कवियों के स्तोत्र जिस दिन बद्दुआओं में बदल जाएँगे, उस दिन सांस्कृतिक क्रांति घटित हो जाएगी।

हमारा उद्देश्य इस भाषिक संस्कृति को जाग्रत करने का है। यह सुविधा–असुविधा का प्रश्न नहीं है। यह विघटन की पहली शुरुआत है। यदि यही क्रम जारी रहा तो एक–एक विभाषा को स्वतंत्र भाषा का दर्जा दे दिया जाएगा और तब बहुसंख्यकता, जो हिंदी के पक्ष का सबसे बड़ा तर्क है, समाप्त हो जाएगी। पिछली जनगणना में यों भी 70 करोड़ हिंदी भाषियों की संख्या को काट–छाँटकर बहुत नीचे ला दिया गया है। इसके पीछे अंतर्राष्ट्रीय कूटचक्र काम कर रहे हैं। आवश्यकता यह है कि इन छद्मवेशी राजनीतिक चालों को समय रहते पहचान लिया जाए। अब मूलोच्छेदन की आवश्यकता है। जो वोट के लिए हिंदी का हनन कर रहे हैं, हमें संकल्पबद्ध होकर उनको नकार ही देना चाहिए, अन्यथा अब इस विषवृक्ष से अनिष्ट ही अनिष्ट फूटेंगे। आवश्यकता यह है कि हम जनजागृति पैदा करें, अर्थात् जन–सभाओं, पत्र–पत्रिकाओं और संवादों की शुरुआत करें। आम आदमी भाषा के प्रश्न से सवयं को जुड़ा नहीं महसूस करता, किंतु भाषाविहीन होकर वह किस प्रकार कबंध बन जाता है, इसके कई उदाहरण हमने इतिहास में देखे हैं। आवश्यकता यह है कि हम ऐसे काले कारनामों का संवैधानिक ढंग से विरोध करें। जैसे कभी भारतेंदु, राजर्षि टंडन और मालवीय जी ने किया था। हिंदी से हमने बहुत लाभ लिए हैं। वह हमारी माँ है। इस संकट काल में वह अब कुछ बलिदान चाहती है। यदि कोई वीरचरित नायक हमारा नेतृत्व करने न भी आ रहे हों तो भी हम अपनी जगह पर उसका मुखर तथा न्यायिक विरोध करें। जनता में बहुत बड़ी शक्ति होती है। हिंदी का यह जन–बल ही हमारा सबसे बड़ा संबल है। जल–बल के सहारे यदि उर्दू को देवनागरी में लिखने, छापने लग जाएँ और भरसक हिंदुस्तानी का प्रयोग करने लग जाएँ तो विघटन की यह प्रक्रिया स्वतः समाप्त हो जाएगी।

राजभाषा प्रभाग

हिंदी साहित्य की समृद्धि में मुसलमान साहित्यकारों का अनमोल योगदान

अभिषेक कुमार सिंह, अतुल कुमार सचान एवं ब्रह्म प्रकाश
भाकृअनुप– भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

ज्ञान विज्ञान की विभिन्न शाखाओं की तरह साहित्य शास्त्र का चरम लक्ष्य भी मानव का कल्याण मात्र है। मानव समुदाय ही हमारे समस्त साहित्य ज्ञान एवं कला का श्रोता है। उसका कल्याण ही साध्य है तथा सब साधन मात्र हैं। आज का मानव अपनी वर्तमान दुर्गति के पंक से उद्धार प्राप्त करें। जीवन के कल्याण मार्ग की ओर उन्मुख हो, यही साहित्य का सत्य है, यही साहित्य का लक्ष्य है, यही साहित्य का धर्म है, यही साहित्य का आदर्श है। इसीलिए तो साहित्यकार वह महान शिल्पी हैं जो मानव समाज की प्रतिमा को इष्ट आकार प्रकार देकर उसे सचेत एवं जागृत बनाता है। उसमें सत्य की सुगंध, शिव का अमरत्व तथा सौन्दर्य का प्रकाश भरता है। यह जीवन के उपकरणों को भाषा के साँचे में ढालकर जिस साहित्य का उपयोग कराता है, समाज उसके महत्व का उपभोग करता है।

हिंदी साहित्य की गौरवमयी परंपरा इस बात की साक्षी रही है कि हिन्दी साहित्य के निर्माण में किसी धर्म, जाति अथवा संप्रदाय का ही हाथ नहीं रहा है अपितु विश्व के विभिन्न धर्मों, जातियों एवं संप्रदायों के व्यक्तियों ने हिन्दी साहित्य को अपनी सेवाएँ देकर इसे समृद्ध किया है। संकीर्ण विचारधारा के कुछ व्यक्ति मानते हैं कि हिन्दी हिंदुओं की भाषा है एवं इस भाषा का अन्य धर्म व संप्रदाय के अनुयायिओं से कोई लेना–देना नहीं है। इतना अवश्य सत्य है कि हिन्दी अविभाजित हिंदुस्तान की भाषा थी। अविभाजित भारत में भी आज की तरह ही केवल हिन्दू ही नहीं निवास करते थे अपितु अन्य धर्मों के अनुयाई भी यहाँ निवास करते थे। कोई भी भाषा किसी धर्म, संप्रदाय अथवा जाति विशेष की नहीं होती। भाषा मानवता को बढ़ावा देने में सहायक होती है। हिन्दी भाषा के पालन पोषण में मुस्लिम संप्रदाय के अनेकों लोगों ने भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। मुसलमान कवियों ने बिना किसी भेद भाव को प्रश्रय दिये हिंदुओं की वाणी के साथ अपनी वाणी को तदाकार किया है। हिन्दू भक्त कवियों की भांति हिंदुओं के उपासक राम तथा कृष्ण की भक्ति के गीत गाए हैं। हिन्दू राजाओं से भी अधिक हिन्दी साहित्य एवं उसके साहित्यकारों को राज्याश्रय प्रदान किया है। इस प्रकार, राजनीतिक तथा धार्मिक क्षेत्र में हिन्दू तथा मुस्लिम संप्रदायों में भले ही कटुता एवं संघर्ष की स्थिति भी रही हो, परंतु साहित्य के क्षेत्र में दोनों संप्रदाय एक ही रहे। यह इस बात का भी ज्वलंत प्रतीक है कि दो जातियों के समन्वय में साहित्य का योगदान सर्वाधिक रहता है।

अब्दुर्रहमान

हिंदी साहित्य के आदि काल से ही हमें मुसलमान साहित्यकारों की उत्कृष्ट रचनाएँ प्राप्त होती रही हैं। वर्तमान पाकिस्तान के मुल्तान शहर निवासी अब्दुर्रहमान एक यशस्वी मुसलमान कवि थे। वर्ष 1067 में रचित उनका संदशरसक ग्रंथ उस युग की अत्यंत महत्वपूर्ण कृति सिद्ध हुआ था। उपरोक्त ग्रंथ में लौकिक प्रेम का बड़ा ही हृदयग्राही चित्रण है। इसी काल में रचित अमीर खुसरो की पहेलियाँ तथा मुकरियाँ तो प्रसिद्ध ही हैं जिनके कुछ उदाहरण निम्नवत प्रस्तुत हैं:

रात समय वह मेरे आवे। भोर भये वह घर उठि जावे।।
यह अचरज है सबसे न्यारा। ऐ सखि साजन? ना सखि तारा।।
नंगे पाँव फिरन नहिं देत। पाँव से मिट्टी लगन नहिं देत।।
पाँव का चूमा लेत निपूता। ऐ सखि साजन? ना सखि जूता।।
वह आवे तब शादी होय। उस बिन दूजा और न कोय।।
मीठे लागें वाके बोल। ऐ सखि साजन? ना सखि ढोल।।
जब माँगू तब जल भरि लावे। मेरे मन की तपन बुझावे।।
मन का भारी तन का छोटा। ऐ सखि साजन? ना सखि लोटा।।
बेर–बेर सोवतहिं जगावे। ना जागूँ तो काटे खावे।।
व्याकुल हुई मैं हक्की बक्की। ऐ सखि साजन? ना सखि मक्खी।।
अति सुरंग है रंग रंगीलो। है गुणवंत बहुत चटकीलो।।
राम भजन बिन कभी न सोता। क्यों सखि साजन? ना सखि तोता।।
अर्ध निशा वह आया भौन। सुंदरता बरने कवि कौन।।
निरखत ही मन भयो अनंद। क्यों सखि साजन? ना सखि चंद।।
शोभा सदा बढ़ावन हारा। आँखिन से छिन होत न न्यारा।।
आठ पहर मेरो मनरंजन। क्यों सखि साजन? ना सखि अंजन।।
जीवन सब जग जासों कहै। वा बिनु नेक न धीरज रहै।।
हरै छिनक में हिय की पीर। क्यों सखि साजन? ना सखि नीर।।
बिन आये सबहीं सुख भूले। आये ते अँग–अँग सब फूले।।
सीरी भई लगावत छाती। क्यों सखि साजन? ना सखि पाति।।

उन्होंने पहली बार खड़ी बोली भाषा में रचना की एवं साहित्य को जन विनोद के स्वच्छंद मण्डल में विचरण करने के लिए धर्म और राज्याश्रय की कठोर श्रृंखलाओं से मुक्त किया। यही नहीं, उन्होंने ख़ालिक़ बारी की रचना कर हिन्दी, फारसी तथा अरबी को परस्पर समझने का अवसर दिया। उसमें हिन्दी, अरबी तथा फारसी के समानार्थवाची शब्दों के समूह का अनोखा समन्वयन है जिससे इन तीनों भाषाओं का ज्ञान सरल और मनोरंजक हो गया है। इस प्रकार हिन्दी साहित्य को अमीर खुसरो ने अपना अमूल्य योगदान दिया है।

कबीर

हिंदी साहित्य में ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रवर्तक कबीर ने भी

हिंदी साहित्य को समृद्ध करने में बहुत बड़ा योगदान दिया है। कबीर के बारे में कहा जाता है कि उनका जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था परंतु उनका पालन पोषण एक मुस्लिम जुलाहे के परिवार में हुआ था। इसी कारण कबीर पर हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ही धर्मों के संस्कारों की छाप है। कबीर अपने युग के क्रांतिकारी कवि थे। वे कवि के साथ–साथ समाज सुधारक भी थे। कबीरदास ने कविता के लिए कविता नहीं की, वरन समाज में फैली हुई कुरीतियों एवं बुराइयों को दूर करने के लिए कविता का आश्रय लिया था। अपने सिद्धांतों को आम जनता तक पहुँचाने तथा धर्म तथा समाज में सुधार के उद्देश्य की पृष्ठभूमि में ही उनकी वाणी काव्य रूप में प्रगट हुई। उनके समय में जनता में अंधविश्वास एवं वाहय आडंबर फन उठाए खड़े थे। वे लोग अपने धर्म के सच्चे स्वरूप को भूल गए थे। कबीर की पैनी दृष्टि ने हिंदुओं एवं मुसलमानों के समाज एवं धर्म के दोषों को गहराई से देखा। हिन्दू एवं इस्लाम दोनों ही धर्मों के समन्वय में कबीरदास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। कबीरदास ने पहली बार हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ही धर्मों की रूढ़ियों, वाह्य आडंबरों तथा धार्मिक वितंडावादों की दिल खोलकर भर्त्सना की। कबीर पाखंड तथा कर्मकांड में तनिक भी विश्वास नहीं करते थे। वे सदाचार के समर्थक थे। उन्होने अंधविश्वास का विरोध किया है। उन्होंने हिंदुओं को मूर्ति पूजा, जांति–पांति, छुआ–छूत आदि के लिए स्वयं फटकारा है जैसेः

(क) दुनिया ऐसी बावरी, पाथर पूजन जाइ।
घर की चकिया कोऊ न पूजे, जेहि का पीसा खाई।।

(ख) पाथर पूजे हरि मिलें, तो मैं पूजूँ पहार।
याते तो चाकी भली, पीसि खाय संसार।।

(ग) हिन्दू अपनी करें बढ़ाई, गागर छुवन न देई।
वैश्या के पांयन तर लोटें, यह देखो हिंदुवाई।।

इसी प्रकार कबीर दास मुसलमानों को जीवहत्या करने, सुन्नत करने तथा अजान लगाने के कारण आड़े हाथों लिया है।

(क) दिन भर रोजा रखत हैं, रात हनत हैं गाय।
यह तो खून, वह बंदगी कैसे खुशी खुदाय।।

(ख) बकरी पाती खाती है, ताकि काढ़ी खाल।
जे नर बकरी खात हैं, तिनको कौन हवाल।।

(ग) कांकर पाथर जोरी कर, मस्जिद लई चिनाइ।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाई?

कबीर ने हिंदुओं एवं मुसलमानों के विरोधी तत्वों का प्रहार कर अंतर की सहज एकता का राग गाया एवं स्वस्थ मानव धर्म की प्रतिस्थापना की। कबीरदास जी सच्चे समाज सुधारक थे। उनकी दृष्टि में हिन्दू एवं मुसलमान समान थे। उनका सिद्धान्त था कि राम एवं रहीम समान हैं और उनके लिए लड़ना सही नहीं हैं। हिन्दू मुस्लिम एकता का प्रतिपादन किया तथा काव्य को जन–जीवन की भावनाओं का वाहक बनाया।

अरे! इन दोउन राह न पाई।
कह हिन्दू मोहि राम पियारा, तुरक कहे रहिमाना।
आपस में दौउ लरि–लरि मुए, मरम न काहू जाना।

धार्मिक तंत्र में फैले हुए मिथ्या आडंबरों तथा कर्म–कांडों का भी कबीरदास ने घोर–विरोध किया। जप,माला, छापा, कंठी, तिलक सब बाहरी आडंबर हैं। मन को वश में न किया तो शरीर को रंगने से क्या लाभ? वे कहते हैं कि

माला फेरत जुग गया, गया न मनका फेर।
करका मनका दारी कई, मनका मनका फेर।।

कबीर को धर्म के सरल सिद्धान्त सत्या, अहिंसा, क्षमा आदि प्रिय थे। उन्होने समानता, सरल जीवन तथा सत्यता को अपनाने के लिए प्रेरणा दी है। वे युग प्रवर्तक कवि थे। उन्होंने जाति–धर्म तथा संप्रदाय–भेद से बिखरी मानव जाति को एकता का संदेश सुनाते हुए विश्व बंधुत्व की भावना पर बल दिया। वे पाखंड तथा अंधविष्वास के घोर विरोधी तथा हिन्दू–मुस्लिम एकता के प्रबल समर्थक थे।

मलिक मुहम्मद जायसी

हिन्दी साहित्य को अपनी उत्कृष्ट प्रेम कहानियों से सम्पन्न बनाने में सूफी काव्य धारा के कवियों ने जो अमिट योगदान दिया है हिन्दी साहित्य उनका कभी ऋण नहीं चुका सकता। इन उदार हृदय मुसलमान संत कवियों ने हिन्दू समाज की ही प्रेम कहानियों को अपनी परमार्थिक साधना की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया एवं इस पकार हिन्दी की अवधी भाषा में अनेक श्रेष्ठ प्रेम गाथाओं को जन्म दिया। जायसी भक्तिकाल की प्रेममार्गी शाखा के सर्वोच्च कवि हैं। अतः उनकी कविता में अलौकिक प्रेम की व्यंजना सर्वत्र मिलती है। अव्यक्त के प्रति अपने प्रेम भक्ति को व्यक्त करने के लिए जायसी ने रहस्यवाद का सहारा भी लिया है। प्रकृति का विभिन्न रूपों में चित्रण, लौकिक ज्ञान, सूफी मत के सिद्धांतों का प्रतिपादन, चरित्र चित्रण आदि में जायसी की वाणी अपने पूर्ण प्रौढ़ता के साथ व्यक्त हुई है। इनके मत से ईश्वर की प्राप्ति का केवल एक साधन है तथा वह है प्रेम। साधक के हृदय में प्रेम की पीर होनी चाहिए तथा ईश्वर से मिलने की उत्कृष्ट अभिलाषा। फिर प्रेम की बाजी किसी भी प्रकार से क्यों न खेली जाए। उनका मानना था कि प्रेम सर्वदा श्रेयस्कर होता है।

मुहमद बाजी प्रेम की, ज्यों भावे त्यों खेल।
तिल फूलहिं के संग ज्यों, होई फुलायल तेल।।

मलिक मोहम्मद जायसी का पद्मावत तो हिन्दी का श्रेष्ठ महाकाव्य है। तुलसी के रामचरित मानस के पश्चात हिन्दी के प्रबंध काव्य में इसी का स्थान है। सूफी होने के बावजूद उन्होंने ईश्वर को नारी तथा साधक को पुरुष के रूप में चित्रित किया है। नागमती के हृदय विदारक वियोग चित्रण द्वारा भारतीय प्रेम का जो उत्कृष्ट निरूपण जायसी ने किया है वह अपने में अपूर्व है। जायसी का बारहमासा तथा षडऋतु वर्णन प्रकृति के उद्दीपन रूप के चित्रण हैं जो हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। प्रकृति का

दूती के रूप में निम्न प्रयोग नागमती की हृदय–दशा को कितना स्पष्ट करता है।

पिउ से कहो सन्देसन, हे भौरा! हे काग।
सो धनी बिरहै बरिमुई, तेहीक धुआँ हम लागि।।

जायसी पात्रों के मनोवैज्ञानिक चित्रण में अद्वितीय हैं। पात्रों की विभिन्न मनोदशाओं (चिंता, उद्वेष, हर्ष, शोक आदि) का जितना सुंदर वर्णन जायसी ने किया है, उतना हिन्दी के कुछ ही कवियों में मिलता है। 'बारहमासा' के अंतर्गत नागमती के विरह वर्णन में प्रकृति तथा नागमती का सादृश्य दर्शनीय है:

बरसे मेघा झकोरि झकोरी, मोर दुई नैन छुवे जस ओरी।
पुरवा लाग भूमि जल पूरी, आक जवास भाई तन धूरी।।

जायसी के काव्यों में श्रृंगार के दोनों पक्ष (संयोग तथा विप्रलंभ) की प्रधानता है। संयोग का सुंदर चित्र देखिए।

पदमावत चाहत रितु पाई, गगन सुहाबन भूमि सुहाई।
चमक बीजु बरसैजल सोना, दादुर मोर सबद सुठिलोना।
रंगराती प्रीतम संग जागी, गरजे गगन चौंकि गर लागी।
सीतल बूंद ऊंच चौपारा, हरियर सब देखाइ संसारा।।

यद्यपि जायसी ने हिन्दू समाज में प्रचलित लोककथाओं को अपने काव्य का विषय बनाया है तथा हिन्दू रिवाजों तथा पौराणिक कथाओं का भी वर्णन किया है। किन्तु हिन्दू पुराणों का समुचित ज्ञान न होने के कारण उन्होंने इस प्रकार के आख्यानों में बहुत सी भूल की हैं। जैसे कैलाश का स्वर्ग के अर्थ में प्रयोग करना तथा उसे देवताओं के राजा इन्द्र का निवास स्थान बताना, महादेव के साथ हनुमान को सेवक के रूप में चित्रित करना, मानसरोवर की सात समुद्र के रूप में कल्पना करना आदि। जायसी को ज्योतिष, भूगोल तथा तत्कालीन इतिहास का अच्छा ज्ञान था। जायसी की भाषा ग्रामीण अवधी है जिसमें उन्होंने अवधी के पूर्वी तथा पश्चिमी दोनों ही रूपों का प्रयोग किया है। जायसी के अतिरिक्त, कृतबान, मंझन का नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

रहीम

महान कवि तथा भक्त रहीम का पूरा नाम अब्दुर्रहीम खानखाना था जो इतिहास प्रसिद्ध मुगल सम्राट अकबर के संरक्षक सरदार बैरम खान के पुत्र थे। अकबर के नवरत्नों में उनकी भी गणना की जाती है। अरबी, फारसी के साथ–साथ संस्कृत के वे महान विद्वान थे। उनकी प्रमुख रचना रहीम सतसई है जिसमें नीति तथा भक्ति से पूर्ण दोहे हैं। इसके अतिरिक्त बरवै नायिका भेद, श्रृंगार सोरठ, रास पंचाध्यायी, मदनाष्टक आदि श्रृंगार रस की रचनाएँ हैं। रहीम काव्य हिन्दी संस्कृत मिश्रित काव्य है तथा खेट कौतुक जातकम हिन्दी–फारसी ज्योतिष विषय पर रहीमजी का ग्रंथ है। दोनों ही भाषाओं को उन्होंने अपनाया है। रहीमदास जी अत्यंत सुहृदय, सरस तथा भावुक कवि थे। उन्होने भक्ति, नीति, वैराग्य, ज्ञान, धर्म, सत्संग, श्रृंगार तथा प्रेम आदि भिन्न–भिन्न विषयों पर रचना की है। उनके नीति पूर्ण दोहे तो अत्यंत प्रसिद्ध हैं ही। उनके नीतिगत दोहे अत्यंत भावपूर्ण हैं जिनमें उनके जीवन का अनुभव कूट–कूटकर भरा है। जहां एक ओर कबीर के दोहे में फटकार है, तुलसी के दोहे में गंभीरता है पर रहीम के दोहों में कोमलता, मधुरता तथा साथ ही सरलता व सजीवता भी है। नपे–तुले शब्दों में उनके मार्मिक कथन देखिए, प्रेम जोड़कर तोड़ना नहीं चाहिए क्योंकि प्रेम–सूत्र को तोड़कर जोड़ने पर गांठ अवश्य पड़ जाती है:

रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो छिटकाय।
टूटे से फिर ना मिले, मिले गांठ पड़ जाय।।

नेत्र हृदय रूपी भवन के द्वार हैं। उनके द्वार हृदयगत भाव प्रगट हो जाते हैं। इसी भाव को कितने सुंदर शब्दों में रहीमजी ने कहा है :

रहिमन अंसुवा नयन ढरि, जिय दुख प्रकट करेइ।
जाहि निकारो गेह ते, कस न भेद कहि देइ।।

रहीम कवि ही नहीं थे अपितु कवियों तथा कलाकारों के आश्रयदाता भी थे। वे वस्तुतः बड़े गुणग्राही थे तथा कविजन एवं साहित्य प्रेमी उन्हें हमेशा घेरे रहते थे। मुसलमान होते हुए भी रहीम को कृष्ण और श्रीराम विषयक रचनाओं में सच्चे हिन्दू की सी भक्ति, प्रीति तथा श्रृद्धा मिलती है। उनके हृदय में खुदा तथा श्रीकृष्ण में कोई अंतर नहीं था। निम्नांकित दोहे में उनकी आत्म समर्पण की भावना कितनी सुंदर है :

अमर बेलि बिनु मूल को, प्रति पालत है ताहि।
रहिमन ऐसे प्रभुहिं तजि, खोजत फिरिए काहि।।

रहीमजी ने बिहारी की भांति अलंकारों का चमत्कार दोहों में नहीं दिखलाया फिर भी उन्होने यत्र–तत्र श्लेष, यमक, दृष्टांत आदि अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग किया है जैसे:

रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।
पानी बिना न ऊबरे, मोती, मानुष, चून।।

रहीम जी की उक्तियाँ इतनी लुभावनी तथा हृदयस्पर्शी हैं कि वे लोकोक्तियों के समान प्रयुक्त होती हैं। जैसे

बिगरी बात बने नहीं, लाख करो किन कोय।
रहिमन बिगरे दूध को, मथै न माखन होय।।

रसखान

हिंदी के मुसलमान कवियों में रसखान का बड़ा गौरवपूर्ण स्थान है। दिल्ली के किसी शाह वंश से रसखान का संबंध था तथा उनका वास्तविक नाम सैयद इब्राहीम था। कुछ वैष्णवों के उपदेशों से प्रभावित होकर इनका चित्त सांसारिक प्रेम से विमुख होकर श्रीकृष्ण की ओर आकृष्ट हुआ तथा गोस्वामी विटठलनाथजी के वे शिष्य बन गए। 'रसखान' नाम उनको अत्यंत प्रिय था। "त्यों रसखान, वही रसखान, जु है रसखान सो है रसखानी।" प्रेम वाटिका, सुजान–रसखान, राग–रत्नाकर तथा रसखान शतक रसखान जी की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। वे श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। अपनी इन कृतियों में रसखान जी ने कृष्ण प्रेम की

पुनीत रसधारा प्रवाहित की हैं। ब्रज–भूमि, बन–कुंज, पर्वत–नदी, पशु–पक्षी तथा गोपी–ग्वाल सभी के प्रति उनका अगाध प्रेम है। करील के कुंजों पर वे सर्वस्व निछावर कर सकते हैं। नीचे की पंक्तियां कृष्ण प्रेम से ओत–प्रेत भावुक हृदय के स्वच्छ उद्‌गार हैं:

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूं पुर कौ तजि डारौ ।
आठहु सिद्धि नवो निधि को सुख, नन्द की धेनु चराई बिसारौ।।

इन आंखिन सौ रसखानी कबौं, ब्रिज के बन–बाग–तड़ाग निहारौ।
कोटिन हूँ कलधौत के धाम, करील की कुंजन ऊपर बारौ।।

रसखान ने अधिकांश कृष्ण के सौन्दर्य एवं बाल लीलाओं का सुंदर वर्णन किया है। वे सौन्दर्य के उपासक थे, परंतु उनका सांसारिक प्रेम कृष्ण भक्ति में परिवर्तित हो गया था। उनका कृष्ण प्रेम अनन्य था। वे मनुष्य हों या पक्षी, पशु हों या पर्वत, सदैव ब्रज में रहना चाहते थे:

मानुष हौं तो वही रसखान बसों बृज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरो चरौ नित नन्द की धेनु मंझारन।।
पाहन हौं तो वही गिरि को जो कियो हरि छत्र पुरंदर धारन।
जो खग हौं तो बसेरो करौ मिलि कालिंदी कूल कदंब की डारन।।

रसखान की भाषा के संबंध में श्री रामचंद्र शुक्ल जी का कथन है "शुद्ध बृजभाषा का जो चलतापन और सफाई इनकी (रसखान) और अनानंद की रचनाओं में है वह अन्यत्र दुर्लभ हैं तथा अनुप्रास की सुंदर छट होते हुए भी भाषा की चुस्ती और सफाई कहीं नहीं जाने पाई है। उनकी रचना में अनुप्रास, यमक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। निम्न पंक्तिंयों में अनुप्रास की छटा कितनी सुंदर है:

ताहि अहीर की छोहरियाँ, छछिया भरि छाछ पै नाच नचावे।।

रसखान की रचनाओं में भाषा और भाव का सुंदर सामंजस्य है। भक्त तथा प्रेमी कवियों में वे अग्रगण्य हैं। उनके लिए भारतेन्दु जी की यह उक्ति सत्य ही प्रतीत होती है।

"इन मुसलमान हरिजन न पाई कोटिन हिन्दू बारिये।"

रसलीन

रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि सैयद रसलीन का नाम भी वहाँ स्मरणीय है। ब्रजभाषा के तो रसलीन जी अनन्य भक्त थे। उन्होंने अपनी कृति अंगदर्पण में अपने बृजभाषा प्रेम का इस प्रकार परिचय दिया है:

बृजभाषा सीखन रची, वह रसलीन रसाल।
गुन सुबरन नग अरथ लहि, हिय धरियों ज्यों माल।।

रसलीन का निम्न दोहा तो काव्य प्रेमियों में अत्यंत लोकप्रिय रहा है :

अमी हलाहल मद भरे, श्वेत श्याम रतनार।
जियत मरत झुकि–झुकि परत, जेहि चितवत इकबार।।

इसी प्रकार शेख, आलम, मुहम्मद, उस्मान, मुबारक, आदि मुसलमान कवि हुए हैं। कवियों के अतिरिक्त, अकबर, जहांगीर, शाहजहाँ आदि मुगल राजदरबारों में हिन्दी कवियों को राज्याश्रय भी प्राप्त हुआ। बिहारी की सतसई का सुप्रसिद्ध आजमशाही क्रम तो औरंगजेब के पुत्र आजमशाह के ही द्वारा सम्पन्न हुआ था।

काव्य के क्षेत्र में ही नहीं गद्य के क्षेत्र में भी मुसलमान लेखक आगे आए हैं। हिन्दी गद्य साहित्य के विकास में मुंशी इनशा अल्लाह खान की "रानी केतकी की कहानी" का जो स्थान है वह स्पष्ट ही है। अपनी इस प्रसिद्ध रचना का निर्माण उन्होने अरबी, फारसी, तुर्की शब्दों, ब्रज, अवधी आदि के शब्दों तथा संस्कृत के शब्दों से विहीन ठेठ खड़ी बोली में किया है। उनकी भाषा बड़ी चलती मुहावरेदार और प्रवाहपूर्ण है। इनशा की रचना का एक और दृष्टि से महत्व है। उनके समकालीन गद्य लेखक सदलमिश, सदासुखलाल, लल्लूलालजी की रचनाएँ जहां पौराणिक और एक प्रकार से पुराने काव्य ग्रन्थों के आधार पर लिखी गई हैं, "रानी केतकी की कहानी" में एक भिन्न विषय प्रस्तुत किया गया है। बहुत से विद्वानों की दृष्टि में तो इनशा अल्लाह खान की यह कृति हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी है। इधर अध्यापक ज़हूर बक्श ने भी बड़ी सुंदर हिन्दी कहानियाँ लिखी हैं।

यह अत्यंत चिंता का विषय है कि मुसलमानों द्वारा हिन्दी सेवा की इस गौरवमयी परंपरा में गतिरोध उत्पन्न हो गया हैं। राजनीति की सांप्रदायिक भावना ने साहित्य के क्षेत्र में भी प्रवेश कर लिया है और इसके परिणामस्वरूप हिन्दी तथा उर्दू के कटुतामय संघर्ष को लेकर हिन्दी को मुसलमान समाज पराई भाषा समझने लगे हैं। हिन्दी में उन्हें हिन्दुत्व की बू आने लगी है। परंतु मुस्लिम समाज इस तथ्य को भूल जाता है कि उर्दू उसी खड़ी बोली की पुत्री है जो हिन्दी के रूप में आज सम्पूर्ण राष्ट्र की भाषा है। आधुनिक युग के आरंभ होने से पूर्व हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में तो खड़ी बोली का कोई स्थान भी न था। ब्रजभाषा का ही साहित्य के क्षेत्र में एकछत्र साम्राज्य था। परंतु आधुनिक युग के आरंभ होते ही खड़ी बोली हिन्दी गद्य साहित्य का माध्यम बनी और बाद में उसने काव्य के क्षेत्र में भी आधिपत्य जमा लिया। इसका कारण वस्तुतः यही था कि दिल्ली एवं मेरठ की इस खड़ी बोली को मुगल राज–दरबारों का आश्रय प्राप्त हुआ था। मुस्लिम अधिकारियों के साथ वह देश के दक्षिण तथा पूर्वी प्रदेश में फैली और इस प्रकार देश के शिष्ट वर्ग की एक सामान्य भाषा बन सकी। परिणामस्वरूप खड़ी बोली भाषा का जो पौधा मुस्लिम समाज द्वारा सींचा गया, उसके प्रति तिरस्कार और उपेक्षा का भाव उचित नहीं। फिर आज तो हिन्दी राष्ट्रभाषा है। वह किसी एक प्रांत अथवा एक जाति समुदाय की भाषा न होकर सम्पूर्ण भारत की 135 करोड़ जनसंख्या की भाषा है। हिन्दी तथा उसके साहित्य की उन्नति का देशव्यापी महत्व है तथा देश के संस्कृत अभ्युथान हेतु परम आवश्यक भी है। फलतः देश के मुसलमान समाज का कर्तव्य है कि वह बिना किसी भेद–भाव की भावना को लिए हिन्दी को अपनाएं और उसके साहित्य की समृद्धि में हाथ बंटाकर उसी गौरवमयी परंपरा को अक्षुण्ण बनाए रखें जिसका दिग्दर्शन पूर्ववर्ती कवियों एवं लेखकों द्वारा किया गया है।

राजभाषा प्रभाग

केन्द्र सरकार द्वारा घोषित नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप

राम जी लाल, अजय कुमार साह एवं महाराम सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

शिक्षा मनुष्य को सभ्यता की ओर ले जाती है और व्यक्तित्व का निर्माण करती है। शिक्षा नीति किसी भी राष्ट्र के निर्माण का सबसे प्रभावी माध्यम है। अभी तक जो शिक्षा नीति प्रचलन में है उसका उद्देश्य लिपिक पैदा करना था, क्योंकि अंग्रेजों ने इसी मानसिकता से शिक्षा की पद्धति शुरू की थी। हमारा शैक्षिक ढांचा वर्षो से जिस पुराने ढर्रे पर चल रहा था, उसके कारण नयी सोच और ऊर्जा को बढ़ावा नहीं मिल सका। देश वैश्वीकरण, उदारीकरण और आर्थिक विस्तार से गुजरा, परन्तु नयी शिक्षा नीति का अगाज नही हुआ। देश बदला, दुनिया बदली, समाज और उद्यौगों की आवश्यकता भी बदली किन्तु शिक्षा जगत में कोई क्रान्तिकारी बदलाव नही आया और 1986 की शिक्षा नीति अप्रासंगिक नजर आने लगी। शिक्षा व्यवस्था में समयानुसार परिवर्तन आवश्यक होते हैं। इसके साथ–साथ अन्य कारणों और विशेष रूप से विश्व में तीव्र गति से हो रहे परिवर्तन के कारण नयी शिक्षा नीति की आवश्यकता थी। नालन्दा और तक्षशिला के प्राचीन गौरव को पुनः स्थापित करना हमारा लक्ष्य है। हमारा राष्ट्र एक ज्ञान शक्ति का उत्कृष्ट केन्द्र बनें, इसके लिये नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के स्वरूप को समकालिक बनाने का प्रयास किया गया है। अभी जो नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करने की सिफारिश मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा की गयी है वह 185 वर्षों से चली आ रही मैकाले की शिक्षा नीति को बदलने का प्रयास है। भारत में शिक्षा नीति का मूल्य संस्कृति, कला और भारतीय भाषायें हैं। 21वीं सदीं ज्ञान की सदी है। इसी को ध्यान में रखकर केन्द्र सरकार ने नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रारूप को पारित किया है। पिछली नयी शिक्षा नीति वर्ष 1986 में बनी थी जिसमें 1992 में मामूली संशोधन किया गया था। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति की एक बड़ी विशेषता यह है कि यह एक लोकतांत्रिक नीति है। इस नीति को बनाने के लिए देश के 2.5 लाख ग्राम पंचायतों, 6600 ब्लॉक और 676 जिलों से सलाह ली गयी है। यह एक ऐसी शिक्षा नीति है जिसमें पंचायत से लेकर संसद तक, ग्राम प्रधान से लेकर प्रधानमंत्री तक, छात्र से लेकर अभिभावक तक, शिक्षक से लेकर शिक्षाविदों तक और गरीब से लेकर उद्योगपतियों तक सभी का विमर्श, सहयोग और सुझावों पर मंथन करके जन आंकाक्षाओं के अनुरूप नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति को साकार किया गया है। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति को 2020 की घोषणा के साथ ही मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय कर दिया गया है। सरकार ने नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति को पूर्ण रूप से लागू करने के लिये वर्ष 2040 तक लक्ष्य रखा है।

भारतीय शिक्षा नीति का क्रमिक विकास

1. **परम्परावादी शिक्षा**– भारत में प्रारंभिक दौर में ब्राहमण शिक्षा देते थे। इसके बाद मुगलों के समय में आधुनिक शिक्षा प्रणाली को बढ़ावा दिया गया।
2. **ब्रिटिश शिक्षा तन्त्र**– ब्रिटिश शासन ने आधुनिक राज्य, अर्थव्यवस्था और आधुनिक शिक्षा तन्त्र को बढ़ावा दिया।
3. **नेहरू और शिक्षा**– नेहरू जी ने बेहतर शिक्षा के लिये देश में *आई.आई.टी.* और *आई.आई.एम.* जैसे उच्च शिक्षण व तकनीकी संस्थानों की परिकल्पना की थी।
4. **कोठारी समिति**– सन् 1964 में गठित कोठारी समिति ने देश के बहुमुखी विकास के लिये निःशुल्क शिक्षा और 14 वर्ष तक के बच्चों के लिये अनिवार्य शिक्षा को अहम एवं भाषाओं को और विकसित करने तथा विज्ञान की पढाई को महत्वपूर्ण माना था।
5. *आपरेशन ब्लैक बोर्ड*– सन् 1987 में शिक्षकों की शिक्षा के लिये संसाधन बढ़ाये गये।
6. **बच्चों के लिये पौष्टिक आहार**– सन् 1995 में स्कूलों में उपस्थिति बढ़ाने के लिये ताजा पौष्टिक आहार दिया जाने लगा।
7. **मौलिक अधिकार**– सन् 2001 में देश में 6–14 साल के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य रूप से शिक्षा लेने को मौलिक अधिकार का प्रावधान किया गया।

पुरानी शिक्षा नीतियों की विशेषतायें

1. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968**– प्रथम शिक्षा नीति सन् 1968 में आयी थी। यह कोठरी आयोग (1964–66) की सिफारिशों पर आधारित थी। इसमें शिक्षा को राष्ट्रीय महत्व का विषय घोषित किया गया। इसमें 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा के साथ शिक्षकों को बेहतर प्रशिक्षण और योग्यता का लक्ष्य रखा गया। संस्कृति और विरासत के अनिवार्य हिस्से के रूप में संस्कृत भाषा के शिक्षण को प्रोत्साहित किया गया। इसमें व्यय के लिये बजट में 6 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया था तथा माध्यमिक स्तर पर "त्रिभाषा सूत्र" लागू किया गया।
2. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986**– इसे असमानताओं को दूर करने के लिये जाना जाता है। इसका उद्देश्य विशेष रूप से भारतीय महिलाओं, अनुसूचित जनजातियों और

अनुसूचित जातियों के समुदाय के लिये शैक्षिक अवसर की बराबरी पर विशेष जोर देना था। इन्दिरा गॉधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के साथ *ओपेन यूनिवर्सिटी* प्रणाली के विस्तार का लक्ष्य रखा गया। महात्मा गांधी के दर्शन पर आधारित ''ग्रामीण विश्वविद्यालय'' *माडल* के निर्माण का आह्वाहन किया गया। इसका उद्देश्य ग्रामीण भारत में जमीनी स्तर पर आर्थिक और सामाजिक विकास को बढ़ावा देना था।

3. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति संशोधन, 1992**– सन् 1986 में संशोधन के उद्देश्यों में व्यावसायिक और तकनीकी कार्यक्रमों में प्रवेश हेतु राष्ट्रीय स्तर पर एक आम प्रवेश परीक्षा का आयोजन करना था। *इन्जीनियरिंग* और *आर्कीटेक्चर* कार्यक्रमों में प्रवेश के लिये राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त परीक्षा (*जे.ई.ई*) और अखिल भारतीय इन्जीनियरिंग प्रवेश परीक्षा (*ए.आई.ई.ई.ई.*) तथा अन्य राज्य स्तर के संस्थानों के लिये राज्य स्तरीय *इन्जीनियरिंग* प्रवेश परीक्षा (*एस.एल.ई.ई.ई.*) निर्धारित की गयी। इससे इस विधा के छात्रों के लिये काफी आसानी हुई।

नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति

यह शिक्षा के क्षेत्र में बहुप्रतीक्षित सुधार है, जिससे लाखों लोगों का जीवन बदल जायेगा। 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' पहल के अन्तर्गत इसमें संस्कृत समेत क्षेत्रीय भारतीय भाषाओं को बढ़ावा दिया जायेगा। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में स्कूल से लेकर उच्च शिक्षा तक संसाधनों के अभाव का सामना करती शिक्षा व्यवस्था में पहली बार *जी.डी.पी* का 6 प्रतिशत खर्च करने का लक्ष्य रखा गया है। इसके अतिरिक्त 8 प्रमुख भाषाओं मे *ई–कोर्स* तथा 2 करोड़ बच्चों को फिर से स्कूल से जोड़ने का भी लक्ष्य रखा गया है। केन्द्र सरकार नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति को इसी वर्ष से अमल करने की तैयारी में है।

मातृभाषा किसी भी राष्ट्र के नागरिक की मूल होती है, उससे विलग होना वस्तुतः स्वंय की वास्तविकता से अनभिज्ञ रह जाना है। जब हम भारतीय संस्कृति और दर्शन के संदर्भ में शिक्षा पर दृष्टिपात करते हैं, तो यहाँ शिक्षा जीवकोपार्जन का साधन मात्र बनकर नही रह जाती है। भारतीय परम्परा में शिक्षा वस्तुतः हमारे जीवन की समग्रता की और संकेत करती है, जिसमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पुरषार्थों का समावेश है। मातृभाषा सिर्फ एक भाषा ही नही, बल्कि वह माध्यम है, जो अबोध बालक, बालिकाओं को उनके संस्कृतिक विरासत से सिंचित करती है, क्योंकि भाषा अपने साहित्य से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी होती है। प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में जो बात सबसे महत्वपूर्ण है, वह है लिखना और अवधारणात्मक क्षमता को विकसित करना है। मातृभाषा का ठोस आधार जिन बच्चों को प्राप्त होता है, उनकी अवधारणात्मक क्षमता और चिंतन की पद्वति अधिक पुष्ट और विकसित होती है। मातृभाषा में बच्चे तेजी से सीखते हैं क्योंकि सोच–विचार, चिंतन की स्वाभाविक प्रतिक्रिया मातृभाषा के द्वारा ही सम्भव हो पाती है। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में मातृभाषा में शिक्षा की आवश्यकता हेतु यह भी बताया गया है कि अंग्रेजी देश की आबादी के मात्र 15–16 प्रतिशत लोगों द्वारा ही व्यवहार में आती है, ऐसे में मातृभाषा में शिक्षा अधिकांश नागरिकों की शिक्षा सम्बन्धी हितों को ध्यान में रखने की दृष्टि से समुचित है। आज जितने भी देश विश्व में प्रगति किये हैं वो अपनी मातृभाषा में पढ़कर ही हुये हैं। मातृभाषा राष्ट्र की संस्कृति, दर्शन, इतिहास और धर्म का वाहक तत्व होती है। इस प्राण तत्व से जब एक बालक–बालिका रिंचित होते हैं, तो उनमें राष्ट्र का गौरव, स्वाभिमान और आत्मसम्मान जैसी भावनायें सहज विकसित होती हैं। अंग्रेजी माध्यम में शिक्षा हमें पाश्चात्य जीवन–मूल्यों और सभ्यता की ओर ले जाती है, क्योंकि भाषा अपने साथ अपनी अपरिहार्यतः ले आती है। शिक्षा के सम्बन्ध में राष्ट्रपिता महात्मा गॉधी के विचारों के अनुसार मातृभाषा से अलग छात्रों पर अंग्रेजी भाषा लादना वास्तव में विद्यार्थी समाज के प्रति एक कपटपूर्ण वृत्ति है। उन्होनें इस बात को स्पष्ट रूप से कहा था कि विदेशी माध्यम बच्चों पर अनावश्यक दबाव ड़ालने, रटने और नकल करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देने के साथ उनकी स्वंय की मौलिकता को भी धीरे–धीरे समाप्त करता जाता है। गॉधी जी का निश्चित रूप से इसके पीछे उनके समूचे जीवन का अनुभव और उनकी गहरी सोच थी, जो इसी तथ्य की ओर संकेत करती है कि विचार एवं अवधारणा सम्बंधी क्षमता का कौशल मातृभाषा में एक बालक के अंदर जिस तरह पनपता है, वह कोई अन्य भाषा नहीं कर सकती है। अतः नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति की सबसे क्रान्तिकारी विशेषता यह है कि कम से कम कक्षा 5 तक की पढ़ाई स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा में होगी, जिसे कक्षा 8 तक बढाया जा सकता है। अग्रेजी अब एक विषय के रूप में पढ़ायी जायेगी। शैक्षणिक मनोविज्ञान और *यूनस्को* की वर्ष 2008 की *रिपोर्ट* के अनुसार मातृभाषा में सम्प्रेषण और संज्ञान सहज एवं शीघ्र हो जाता है, जो पूर्णतया संज्ञानात्मक विकास के लिये आवश्यक है। यह भारतीय भाषाओं और संस्कृति को भी मजबूती प्रदान करेगी।

नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में स्वतंत्रता और लचीलेपन का भी समावेश है। शैक्षिक पाठयक्रम, पाठ्येत्तर गतिविधियाँ और व्यावसायिक शिक्षा के बीच अन्तर नही रखा जायेगा, अपितु व्यावसायिक शिक्षा को इसका अभिन्न अंग माना जायेगा। *कोड़िंग* जैसे आधुनिक *वोकेशनल* प्रशिक्षण कक्षा 6 से ही प्रारम्भ किये जायेंगे। *वोकेशनल* शिक्षा के उच्चतर रूप कालेज में भी उपलब्ध होंगे। वह युवाओं को स्वरोजगार और उद्यम की शिक्षा में बहुत उपयोगी सिद्व होंगे। अब विज्ञान अथवा वाणिज्य के विद्यार्थी मानविकी के विषय भी पढ़ सकेंगें। यह व्यवस्था स्नातक स्तर पर भी लागू होगी। यह छात्रों के संर्वागीण विकास में अत्यन्त लाभदायक होगी। नयी शिक्षा नीति में *एस.सी, एस.टी, ओ.बी.सी.* लड़कियों दिव्यागों और गरीब वर्ग के छात्रों के लिये विशेष प्रावधान किया गया है। सार्वजनिक के अतिरिक्त, निजी क्षेत्रों के उच्च शिक्षा संस्थानों में भी इस वर्ग के लिये छात्रवृत्ति उपलब्ध हो, इसके लिये भी प्रयास किये जायेंगे। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति उच्च शिक्षा के स्तर पर भी कई नयी सम्भावनाएं लेकर आयी है।

स्ट्रीम का लचीलापन अर्थात् विज्ञान, वाणिज्य या मानविकी के छात्रों को एक दूसरे के विषयों को पढ़ने की छूट अथवा *वोकेशनल* शिक्षा के समावेश के साथ–साथ स्नातक *प्रोग्राम* की एक बड़ी विशेषता होगी अर्थात् *मल्टी–एंट्री* और *मल्टी–एग्जिट* का प्रावधान होगा। अभी स्नातक *डिग्री* तीन वर्ष की होती है। अगर किसी कारणवश छात्र को बीच में ही पढ़ाई छोड़नी पड़े तो उसका सारा समय, परिश्रम और धन व्यर्थ चला जाता है। परन्तु अब आवश्यकता पड़ने पर एक या दो वर्ष की पढ़ाई के बाद भी छात्र को *सर्टिफिकेट* या *डिप्लोमा* दिया जायेगा। छात्र पुनः वापस आकर बची हुयी पढ़ाई पूरी कर सकता है। छात्र को तीन साल की पढ़ाई के उपरान्त स्नातक डिग्री मिलेगी। नयी शिक्षा नीति में चार वर्षीय स्नातक *डिग्री* का भी प्रावधान होगा, जो स्नातक *डिग्री* के साथ *रिसर्च डिग्री* होगी। यह उन छात्रों के लिये जरूरी है जो आगे परास्नातक या *पी.एच.डी* करना चाहते हैं। अमेरिका, यूरोप, जापान आदि विकासशील देशों में इस तरह की व्यवस्था के सकारात्मक परिणाम मिले हैं। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में यह आजादी होगी कि छात्र कोई *कोर्स* बीच में छोड़कर दूसरे *कोर्स* में दाखिला ले सकता है। इसी संदर्भ में एक *एकेडेमिक बैंक आफ क्रेडिट* का अभिनव प्रावधान भी हैं। यह एक प्रकार का डिजिटल *क्रेडिट बैंक* होगा, जिसके अर्न्तगत छात्रों द्वारा किसी एक प्रोग्राम या संस्थान से प्राप्त *क्रेडिट प्रोग्राम* को दूसरे *क्रेडिट प्रोग्राम* या संस्थानों मे स्थानान्तरित किया जायेगा। इसके अतिरिक्त, एकल विषय संस्थानों जैसे *लॉ*, कृषि विश्वविद्यालय आदि को समाप्त कर बहुविषयक संस्थानों में बदला जायेगा। यहां तक कि *इंन्जीनियरिंग* संस्थान भी कला और मानविकी का अधिकाधिक समन्वय करते हुए समग्र और बहुविषयक दिशा में अग्रसर होंगे।

देश में युवाओं की बड़ी संख्या को ध्यान में रखते हुए उनका सकारात्मक और अधिकतम उपयोग करने के लिये उच्च शिक्षा में 2035 तक 50 प्रतिशत सकल नामांकन अनुपात पहुँचाने का लक्ष्य है, जो कि इस समय 27 प्रतिशत है। इसके लिए उच्च शिक्षा में 3. 5 करोड़ नयी सीटें जोड़ी जायेगीं। नयी शिक्षा नीति में निजी संस्थानों में फीस की मनमानी रोकने के लिये *कैपिंग* का प्रावधान किया गया है। उच्च शिक्षा के लिये भारत उच्च शिक्षा आयोग (*एच.ई.सी.आई.*) का गठन किया जायेगा, जिसमें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग समेत अन्य निकायों का विलय हो जायेगा। इससे उच्च शिक्षा के संदर्भ में एक सामन्वित और सम्रग नीति बनाने और लक्ष्य निर्धारित करने में आसानी होगी। देश की उच्च शिक्षा की वैश्विक शक्ति के रूप में स्थापित करने के लिए उच्च शिक्षा में एक मजबूत शोध–अनुसंधान संस्कृति और क्षमता को बढ़ावा देने का भी प्रस्ताव हैं। इसके लिये एक शीर्ष निकाय के रूप में *नेशनल रिसर्च फाउन्डेशन* की स्थापना की जायेगी। जिसका उद्देश्य विश्वविद्यालयों के माध्यम से शोध की संस्कृति को सक्षम बनाना होगा। नयी शिक्षा नीति के व्यापक लक्ष्यों को पूर्ण करने हेतु ज्यादा धन की आवश्यकता होगी। इसलिये *जी.डी.पी.* का 6 प्रतिशत शिक्षा में लगाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है, जो कि इस समय 4.43 प्रतिशत है। नयी शिक्षा नीति 21वी सदी में भारत की जरूरतों को पूरा करने मे सक्षम साबित होगी, यदि इसका क्रियान्वन ठीक से हो जाये। सभी विश्वविद्यालयों के लिये एकल प्रवेश परीक्षा होगी जिससे समय और धन की बचत होगी। स्कूली शिक्षा एवं उच्च शिक्षा दोनों के लिये *फीस* की सीमा तय होगी। इसके अर्न्तगत कौन संस्थान किस कोर्स की कितनी फीस रख सकता है, इसका मानक भी तैयार किया जायेगा। इसके अर्न्तगत निजी एवं सरकारी दोनों ही संस्थान आयेगें।

नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अध्ययन के मानकों में बदलाव

नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अध्ययन के मानकों में भी निम्न बदलाव किये गये हैं :

1. वर्ष 2030 तक 4 साल की न्यूनतम *इंटीग्रेटेड बी. एड.* की डिग्री जरूरी की जायेगी।
2. वरिष्ठ एवं सेवानिवृत्त अध्यापकों का *पूल बनेगा*।
3. अध्यापकों के लिये समान राष्ट्रीय *प्रोफेशनल* मानक तैयार किए जायेगें।

देश की ज्यादातर राज्य सरकारें नयी शिक्षा नीति को उपयोगी मान रही हैं। लेकिन केवल इतने से बात नहीं बनेगी। उन्हें उन तत्वों को हतोत्साहित करना होगा, जिन्होंने संकीर्ण राजनैतिक कारणों से नयी शिक्षा नीति के खिलाफ मोर्चा खोल दिया है। कुछ तो ऐसे लोग हैं जिन्होंने नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति का अध्ययन किये बिना ही अपने नकारात्मक विचार व्यक्त किए हैं, यह एक विडम्बना है। यह सम्भव है कि हर कोई नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रावधानों से सहमत न हों, लेकिन ऐसे लोग यह ध्यान रखें कि शिक्षा ही देश के भविष्य का निर्माण करती है। कोई भी नीति कितनी भी अच्छी क्यों न हो वह तभी सफल हो सकती है, जब उसका क्रियान्वयन ठीक प्रकार से हो। इसके लिये पठन–पाठन का उचित वातावरण बनाने को प्रथम वरीयता देने की अत्यन्त आवश्यकता है। हमारे लिये चुनौती सिर्फ नयी शिक्षा नीति के लागू करने की ही नही है, अपितु पाठयक्रम में सुधार करने की भी है। हमें यह सुनिष्चित करना होगा कि पाठयक्रम के सुधार के कार्य में वैसा विलम्ब न हो जैसा नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति को तैयार करने में हुआ है। केन्द्र सरकार विशेषकर शिक्षा मंत्रालय को यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि राज्य सरकारों के साथ शैक्षिक संस्थानों के प्रतिनिधियों, शिक्षाविदों और शिक्षकों की भी नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करने मे महत्वपूर्ण भूमिका होगी। इस मामले में केन्द्र सरकार राजनीतिक इच्छाषक्ति का परिचय देने के लिये प्रतिबद्व है।

नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अध्यापक–शिक्षा की गुणवत्ता की आवश्यकता

शिक्षक समाज का निर्माता है, जो अंधकार से निकाल कर प्रकाश की ओर ले जाता है। वास्तव में शिक्षक शिक्षालय की आत्मा है। आज के समाज में शिक्षकों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है, वह पूरी शिक्षा प्रक्रिया की धुरी होते हैं। नयी राष्ट्रीय

शिक्षा नीति को सही प्रकार से लागू करने और उसके लक्ष्यों को पाने के लिये आवश्यक है कि अध्यापक और अध्यापक–शिक्षा के ऊपर गहनता और प्रतिबद्धता के साथ संकल्पपूर्वक आगे बढ़ा जाए। अध्यापक–शिक्षा के नाम पर खाना–पूर्ति करते हुये बिना हजिरी डिग्री की प्राप्त करने की प्रवृत्ति आदि कुछ ऐसे कड़वे सत्य हैं, जिनको लेकर अध्यापक–शिक्षा बराबर प्रश्नांकित होती रही है। अध्यापक–शिक्षा के लिये 2021 तक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा विकसित की जानी है। प्रस्ताव के अनुसार 2030 तक अध्यापक–शिक्षा का एकीकृत चार वर्षीय पाठ्यक्रम लागू किया जाना है। इसके साथ दो वर्षीय और एक वर्षीय *बी.एड.* की भी व्यवस्था की गयी है। ग्रामीण क्षेत्रों की प्रतिभाओं के लिये छात्रवृत्ति का भी प्रावधान है। यह भी रेखांकित करने योग्य है कि नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार भारतीय भाषाओं में अध्यापकों को तैयार करना होगा। इन सब दृष्टियों में सूचना एवं प्रौद्यौगिकी के प्रयोग और नवाचार को बढ़ावा देना अत्यन्त आवश्यक होगा। राष्ट्रीय उच्च शिक्षक नियामक परिषद द्वारा अध्यापक–शिक्षा संस्थानों का नियमन किया जायेगा और राष्ट्रीय अध्यापक–शिक्षा परिषद पाठयक्रम आदि से जुड़ी अपनी अन्य भूमिकाओं को सबल बनायेगी। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में जो सुझाव और उसके पीछे जो तर्क दिये गये हैं, उन्हें ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक हैं कि प्राथमिकता के आधार पर अध्यापक–शिक्षण के लिये पाठ्य चर्चा को विकसित किया जाये। पूर्व माध्यमिक शिक्षा के लिये राष्ट्रीय पाठ्य चर्चा की रूपरेखा को निर्धारित करना अत्यन्त आवश्यक है। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति स्वीकार करती है कि गुणवत्तापूर्वक शिक्षा के लिये युवा वर्ग को शिक्षण व्यवस्था के प्रति आकर्षण करना आवश्यक है। इसके लिये नियुक्त और सेवा शर्तो को अपेक्षाकृत आकर्षक और विश्वसनीय बनाना होगा। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आधार पर जिस शिक्षा की परिकल्पना की गयी है उसके लिये हमारे अध्यापक भाषायी पूर्वाग्रह से मुक्त, भारतीय संस्कृति और परम्परा पर आधारित मूल्य बोध के प्रति समर्पित, 21वीं सदी की दक्षताओं से युक्त, अपने विषय के साथ *जेन्डर* और पर्यावरण के प्रति संवेदनशील, बच्चो की विविधता, नागरिकता की शिक्षा, कला एवं शिल्प के प्रति अनुराग, समूह में कार्य करने, समस्या समाधान करने तथा ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने के लिये भी तत्पर होने चाहिए।

अध्यापक–शिक्षा की संस्थानों के नियमन के लिए सन् 1993 में ससंद के एक अधिनियम द्वारा *नेशनल काउसलिंग फार टीचिंग एजूकेशन (एन.सी.ई.टी)* नामक संस्था स्थापित की गयी थी। अध्यापक–शिक्षा की गुणवत्ता सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था की पूँजी है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षकों के माध्यम से ही हम विद्यालय में विद्यार्थियों तक प्रभावी रूप से पहुँच सकते हैं और अपनी कक्षाओं को रोचक, नवाचारी एवं आलोचनात्मक चिंतन का केन्द्र बना सकते हैं। अध्यापक–शिक्षा के संस्थानों में आ रही निरन्तर गिरावट का एक प्रमुख कारण इन अध्यापक–शिक्षकों की भर्ती एवं पदोन्नति के समय अपनाये जाने वाले मापंदड भी हैं। इस मापदण्ड़ का निर्धारण मुख्य रूप से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (*यू.जी.सी*) द्वारा किया जाता है। अब जब नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू होने जा रही है तब *नेशनल काउसलिंग फार टीचिंग एजूकेशन (एन.सी.टी.ई)* को अपनी महती भूमिका को समझना होगा, जो प्रशासनिक के साथ–साथ *अकादमिक* भी है। इसे अध्यापक–शिक्षा के पाठ्यक्रम, स्कूल *इंटर्नशिप* के साथ–साथ अध्यापक–शिक्षा संस्थानों के क्रिया–कलापों के विशिष्ट स्वरूप को ध्यान में रखते हुये भर्ती एवं पदोन्नति के नियमों में वांछित एवम् अपरिहार्य परिवर्तन करने होगें। ये परिवर्तन न केवल अध्यापक–शिक्षकों को प्रेरित करे, बल्कि उनकी *प्रोफेशनल* उन्नति में भी स्वीकार्य हों। अध्यापक, शिक्षा के संस्थानों में प्रशासनिक एवं अकादमिक कार्यों की भी समय–समय पर समीक्षा करना और अध्यापक–शिक्षकों की भर्ती एवं पदोन्नति नियमों को अध्यापक–शिक्षा संस्थानों की कार्य–संस्कृति एवं आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तित करना एक वृहद शैक्षिक सुधार है। अतः नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन के समय अध्यापक–शिक्षा की गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए इन सुधारों के लिये *नेशनल काउसलिंग फार टीचिंग एजूकेशन (एन.सी.टी.ई)* को बिना किसी विलम्ब के सार्थक प्रयास करने होगें।

महात्मा गांधी के अनुसार सच्ची शिक्षा वह है जो बालकों को आध्यात्मिक, बौद्विक तथा शारीरिक विकास हेतु प्रेरित करती है। विश्व में सबसे अधिक युवा मानव संसाधन हमारे पास उपलब्ध हैं। विश्व के कई देशों की जितनी कुल जनसंख्या हैं, उतने हमारे यहाँ प्रति वर्ष स्नातक पैदा होते हैं। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के स्वरूप को जड़ से जग तक, मनुज से मानवता तक, अतीत से आधुनिकता तक सभी बिन्दुओं का समावेश करते हुये तय किया गया हैं। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षा का आधार भारतीयता पर टिका हो और उसका स्तर अन्तर्राष्ट्रीय हो, इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये मजबूत कदम उठाये गये हैं। जय जवान–जय किसान, जय विज्ञान–जय अनुसंधान की संस्कृति को एक नया स्वरूप देने के लिये नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक मील का पत्थर साबित होगी। तकनीक के दौर में यहाँ ऐसे वैश्विक नागरिक का निर्माण करेगी जो देश की चुनौतियों के मध्य समस्याओं को खोजनें में अहम भूमिका निभायेंगें। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में स्वायत्तता और नियमन के बीच का मार्ग चुनते हुये संस्थाओ की आर्थिक, शैक्षणिक व प्रशासनिक स्वायत्तता के लिये प्रावधान किये गये हैं। इस नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति का लक्ष्य है कि संस्थान, स्वायत्त, पारदर्शी और उत्तरदायी भी हों। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य एक ऐसे राष्ट्र का निर्माण करना है जिसका ढाँचा विश्वस्तरीय हो परन्तु आत्मा भारतीय हो। इसके अतिरिक्त मनुष्य में मानवता, जड़ों से जुडाव और अतीत से आधुनिकता की ओर ले जाकर छात्रों को विश्व मानव बनाना है। अतः नयी शिक्षा नीति आने वाले समय में ऐसा मानव संसाधन तैयार करेगी, जो कि राष्ट्र के निर्माण में निर्णायक भूमिका अदा करेगा। यदि हम अपनी नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करके इस अपार संम्पदा को सहेज और संवार सके तो निश्चित ही विश्व हमारे देश का जयगान करने पर विवश होगा तथा हमारा एक भारत श्रेष्ठ भारत और आत्मनिर्भर भारत का सपना भी साकार हो सकेगा।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

ग्रीष्मकाल में *कोल्ड ड्रिंक्स* के स्थान पर घर में बने शीतल पेय पदार्थ प्रयोग कर रहें स्वस्थ

आशीष सिंह यादव, ब्रह्म प्रकाश, ओम प्रकाश, अभिषेक कुमार सिंह, कामिनी सिंह एवं पल्लवी यादव*
भाकृअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
*एस.एन. सेफ क्रॉप साइंस, इन्दौर

एक समय ग्रीष्मकाल में सेवन किए जाने वाले *सॉफ्ट ड्रिंक्स* अथवा शीतल पेय का वर्तमान में प्रत्येक मौसम में प्रयोग किया जा रहा है। एक बार इनको पीने का चस्का लग जाने पर इनको अपनी आदत से निकालना असंभव नहीं, परंतु मुश्किल अवश्य होता है। योगगुरु रामदेव जी द्वारा *"टॉइलेट क्लीनर"* की संज्ञा पाये इन *कोल्ड ड्रिंक्स* के सेवन के क्षणिक स्वाद से पीने वाले को तृप्ति अवश्य मिलती है,परंतु दीर्घ काल तक इनके सेवन से मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव अवश्य पड़ता है।

सड़क के किनारे बेचे जाने वाले बंद शीतल पेयों में सबसे अधिक सोडा वाटर के आधार वाले शीतल पेय होते हैं जो कार्बन डाइआक्साइड को उच्च दाब पर जल में घोलकर बनाए जाते हैं। गैस की तीव्रता अथवा उफान के लिए इन पेय पदार्थों में एलीथिन आक्साइड पौलीमर भी मिश्रित किया जाता है। इन पेय पदार्थों में कोई भी पोषक तत्व नहीं होता। इसमें प्रयुक्त चीनी हालांकि मात्र ऊर्जा का स्त्रोत होती है। परंतु कई बार कम गुणवत्ता वाले पेय पदार्थों में चीनी के स्थान पर सैक्रीन तक का प्रयोग किया जाता है जिसका मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन पेय पदार्थों में अधिक अम्लीयता तथा कार्बन डाइआक्साइड मानव शरीर में विभिन्न रोगों को जन्म देते हैं। इनमें अत्यधिक शक्कर, कार्बनिक अम्ल रंजक रसायन होते हैं लेकिन विटामिन एवं खनिज लवण नहीं होते। हमारे शरीर में तीस वर्ष की आयु के पश्चात अस्थियों का बनना रुक जाता है। उसके पश्चात ग्रहण किए गए भोजन की अम्लीयता के आधार पर धीरे–धीरे हड्डियाँ गलने अगती हैं तथा इन हड्डियों का कैल्शियम धमनियों, शिराओं अथवा अंगों में एकत्रित होता रहता है। गुर्दों में जमा होकर यह पथरी उत्पन्न करने के लिए उत्तरदायी होता है। इन पेय पदार्थों की अधिक अम्लीयता दांतों एवं हड्डियों को गलाने में सक्षम है।

आधुनिक जीवन–शैली के चलते, लोगों में खाना खाने के पश्चात ठंडा *सॉफ्ट ड्रिंक* पीने की आदत अत्यंत खतरनाक सिद्ध हो सकती है। पेट में उपस्थित पाचक एंजाइमों की कार्यक्षमता 37° सेल्सियस तापमान पर सर्वाधिक होती है। *सॉफ्ट ड्रिंक* का तापमान इससे अत्यंत कम अर्थात *जीरो डिग्री* तक होता है। भोजन के पश्चात इसके सेवन से पाचक एंजाइम, अपना कार्य सुचारु रूप से नहीं कर पाते तथा भोजन अधपचा रह जाता है। ऐसी स्थिति में उसका किण्वन (*फर्मेंटेशन*) आरंभ हो जाता है जिससे गैस तथा विषाक्त पदार्थ उत्पन्न होने लगते हैं। आँतें इनको सोखकर रक्त में पहुंचा देती हैं तथा रक्त के साथ शरीर के विभिन्न अंगों में पहुँचकर वे नाना प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं। इसके अतिरिक्त, *सॉफ्ट ड्रिंक्स* में कार्बन डाइआक्साइड की उपस्थिति शरीर को विभिन्न तरीकों से क्षति पहुंचा सकती है। *सॉफ्ट ड्रिंक्स* के बनाने में प्रयुक्त सैक्रीन तो कैंसर जैसे रोग को जन्म देकर हमको असुरक्षित कर सकती है। सैक्रीन हमारे शरीर में शर्करा की मात्रा अथवा स्तर को अस्त–व्यस्त कर सकती हैं। इसी कारण मधुमेह के रोगियों के लिए *कोल्ड ड्रिंक्स* का सेवन घातक सिद्ध हो सकता है।

सॉफ्ट ड्रिंक्स एलर्जी का कारण भी बन सकते हैं। कई लोगों को शीतल पेय पदार्थों के सेवन मात्र से ही *एलर्जी* के लक्षण दिख सकते हैं। *सॉफ्ट ड्रिंक्स* में उपस्थित रंग व सुगंध से किसी को भी *एलर्जी* हो सकती हैं। रसायनों से निर्मित कृतिम अथवा घटिया रंग भी शरीर के लिए बहुत नुकसानदायक सिद्ध होते हैं। कुछ निर्माता तो अखाद्य रंगों का प्रयोग भी *सॉफ्ट ड्रिंक्स* बनाने के लिए कर लेते हैं। नकली माल बनाने वाले अधिकांश निर्माता घटिया गुणवत्ता के सस्ते रंगों का प्रयोग करके उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य को खतरे में डाल देते हैं। *अमरन्त, मेटानीलज* जैसे हानिकारक रंगों का प्रयोग करते हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत घातक होते हैं। *अमरन्त* तो कैंसर जैसे रोग तक को उत्पन्न करने के लिए उत्तरदायी होता है। *सॉफ्ट ड्रिंक्स* को दीर्घ काल तक सुरक्षित बनाए रखने के लिए उसमें विभिन्न प्रकार के *प्रीजर्वेटिव्स* के मिश्रण का भी कुप्रभाव मानव शरीर पर पड़ता है।

हाल ही में कराए गए विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि जो लोग सप्ताह में कम से कम दो बार मीठा शीतल पेय पीते हैं, उन व्यक्तियों को अग्नाशय कैंसर होने की प्रबल संभावना रहती है। अमेरिका के मिनेसोटा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं के सिंगापुर निवासियों के साथ एक हजार से अधिक पुरुषों तथा स्त्रियों पर किए गए 14 वर्षीय अध्ययन में प्राप्त परिणाम से ज्ञात हुआ कि जो लोग सप्ताह में दो अथवा उससे अधिक बार शीतल पेय पीते हैं, उनमें इसे नहीं पीने वालों की तुलना में अग्नाशय का कैंसर होने का खतरा 67 प्रतिशत तक बढ़ जाता है। शीतल पेय पदार्थों में शर्करा की अधिक मात्रा अग्नाशय की बीमारी को जन्म दे सकती हैं। शीतल पेय में शर्करा की अधिक मात्रा शरीर में इंसुलिन के स्तर में वृद्धि करके अग्नाशय कैंसर की कोशिकाओं में वृद्धि कर सकती हैं।

स्मरण रखना चाहिए कि जो व्यक्ति अधिक मात्रा में मीठा झागदार शीतल पेय पदार्थों का सेवन करते हैं, वे मोटापे का शिकार बन सकते हैं। मोटापे का बढ़ना भी विभिन्न प्रकार के कैंसर उत्पन्न करने की संभावना में वृद्धि कर देता है। कुछ शीतल पेय पदार्थों में संभवतः फास्फोरिक अम्ल होने के कारण इनके सेवन से बचने की सलाह दी जाती है। विशेषज्ञ

चिकित्सकों का मत है कि अधिक मात्रा में शर्करायुक्त भोजन तथा पेय पदार्थों का सेवन करने से शरीर में रक्त में शर्करा के स्तर बढ़ जाने से अग्नाशय की कार्य क्षमता पर कुप्रभाव पड़ता है तथा अग्नाशय बढ़ने से इसके कैंसर के खतरे की संभावना को भी बढ़ाता है।

सादे पानी से बेहतर कोई भी पेय नहीं

बाजार में विभिन्न प्रकार के पेय पदार्थों के उपलब्ध होने के बावजूद सादे पानी से बेहतर कोई भी पेय नहीं होता। पानी सेहत के लिए कितना लाभकारी होता है, इसको वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। पेय पदार्थ जहां एक ओर शरीर के वजन को बढ़ाने में सहायक होते हैं, सादा पानी वजन को घटाने में भी सहायक होता है। कम पानी पीने से मानव स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचता है। यद्यपि यह सत्य है कि कई स्थानों पर लोग पानी के खारा होने अथवा बेस्वाद होने के कारण अत्यंत कम मात्रा में पानी का सेवन करते हैं। ऐसी स्थितियों में निम्नलिखित उपायों से पानी का स्वाद बढ़ाया जा सकता है।

दालचीनी

एक कप जल में एक टुकड़ा दालचीनी डालकर धीमी आंच पर पका लेने से तैयार चीनी की जगह गाढ़े घोल में ठंडे पानी अथवा बर्फ मिलाकर सेवन करने से पानी का स्वाद बढ़ जाता है। साथ ही, स्वास्थ्य के लिए कई खूबियों से भरपूर दालचीनी रक्त शर्करा तथा *कोलेस्ट्रॉल* के स्तर को भी कम करने में सहायक होती है।

फलों का रस

शत प्रतिशत *फ्रूट जूस* आपके गिलास में ढेर सारे स्वाद तथा रंग तो भरता ही है, साथ ही यह आपकी सेहत के लिए भी लाभप्रद होता है। फलों के रस के साथ–साथ नींबू के रस की कुछ बूंदें भी पानी में डालने से पानी का स्वाद बढ़ जाता है।

फ्लेवर्ड आइस क्यूब्स

कुछ लोग टमाटर, धनिया आदि को पीसकर *आइस क्यूब्स* बनाकर रख लेते हैं। ऐसी स्थिति में कुछ फलों के रस जैसे अनार, रसभरी तथा अनन्नास के *आइस क्यूब्स* बना लें। इन *फ्लेवर्ड आइस क्यूब्स* को पानी के गिलास में मिलाकर पीने से व्यक्ति तरोताजा महसूस करता है।

जड़ी बूटियाँ

पानी में जड़ी–बूटियाँ अथवा तुलसी की कुटी पत्तियाँ डालना भी पानी के स्वाद को बढ़ा देता है। पत्तियों को रात भर पानी में भिगो दें। फिर उसमें नींब का रस निचोड़कर डाल दें। इस पानी का गिलास आपको शीतलता के साथ ही जबर्दस्त ताजगी भी देगा।

अमृत लस्सी

गर्मी के मौसम में ठंडे पेय पदार्थ हर किसी को राहत देते हैं। वहीं यदि ये पेय पदार्थ पौष्टिकता से भी भरपूर हों, तो ये सोने पे सुहागा वाली बात चरितार्थ हो जाती है। इसको बनाने के लिए आम का गूदा और चीनी को *मिक्सर के जार* में डालकर अच्छी तरह से फेंट लें। अब इस मिश्रण की *सरविंग ग्लास* में आधा–आधा डाल दें तथा आधा मिश्रण जार में ही रहने दें। अब जार में बचे हुए आधे मिश्रण में फेंटा हुआ दही, इलायची पाउडर तथा थोड़ी बर्फ डाल कर फिर से अच्छी तरह से *मिक्स* करें तथा *सरविंग ग्लास* में डालें। पुदीने की पत्तियों, बादाम के बीज तथा केसर से सजा कर ठंडा–ठंडा पी सकते हैं।

पुदीना जीरा पानी

तीन व्यक्तियों के लिए पुदीना जीरा पानी बनाने के लिए आधा कप पुदीना पत्ती, डेढ़ *टेबिल स्पून* भुना जीरा पाउडर, एक *टेबल स्पून* नींबू का रस, अदरक के एक छोटे टुकड़े को बारीक–बारीक काटकर, चाय का आधा चम्मच काला नमक, चाय के दो चम्मच अमचूर पाउडर, चाय की एक चम्मच चीनी, स्वाद के अनुसार नमक जैसी सामग्री को थोड़े पानी के साथ *ब्लेंडर* में डालकर पीस लें। इस *पेस्ट* को एक कटोरे में निकालकर उसमें दो कप ठंडा पानी डालकर अचछी प्रकार मिलाएँ। यह मिश्रण तीन गिलासों में डालकर तथा सजावट के लिए ऊपर से पानी में भिगोयी बूंदी डालकर सेवन करें।

खीरा *मौकटेल*

चार व्यक्तियों के लिए खीरा *मौकटेल* बनाने के लिए डेढ़ कप खीरा, चाय की चार चम्मच पुदीना पत्ती, तीन–चार *टेबल स्पून* नींबू का रस, चार *टेबल स्पून* चीनी तथा चाय के दो चम्मच नमक लेकर *ब्लेंडर* में डालकर *पेस्ट* बना लें। इस मिश्रण को चार गिलासों में डाल कर ऊपर से *सोडा वॉटर* या सादा पानी डालें। पेय में *आइस क्यूब्स* डालें व पुदीना पत्ती से सजाकर ठंडा–ठंडा पिएं।

अंगूर का शर्बत

चार व्यक्तियों के लिए अंगूर का शर्बत बनाने के लिए 250 ग्राम अंगूर, तीन टेबल स्पून चीनी, चाय का आधा चममच कुटी हुई काली मिर्च, चाय का एक चम्मच भुना जीरा पाउडर, चाय का आधा चम्मच ममक व चाय के दो चम्मच नींबू का रस ले लें। सर्वप्रथम अंगूर को धोकर *कश* कर लें। उसमें तीन कप पानी डालकर अच्छी प्रकार मिलाएँ। इस मिश्रण को छान लें। शेष सभी सामग्री को मिश्रण में मिलाकर अच्छी प्रकार मिलाएँ। अंगूर का शर्बत तैयार हो गया। चार गिलासों में डालकर पुदीना पत्ती से सजाकर पिएँ तथा पिलाएँ।

कैसे अधिक मात्रा में पानी का सेवन करें?

नौकरीपेशा वाले ऐसे व्यक्ति जो शारीरिक श्रम नहीं करते तथा कुर्सी–मेज पर बैठकर कार्य करते हैं, उनको अधिक प्यास नहीं लगती। ऐसी स्थिति में मेज पर पानी की भरी बोतल रखने से थोड़ी–थोड़ी देर पर पानी पिया जा सकता है। इसी प्रकार घर से बाहर निकलते समय सदैव पानी की बोतल लेकर चलने से आप थोड़ी–थोड़ी देर में पानी पीकर खुद को *हाइड्रेट* रख सकते हैं।

पानी को अधिक मात्रा में पीने के साथ–साथ, अधिक पानी युक्त पदार्थों जैसे खीरा, खरबूज तथा तरबूज के सेवन से तकनीकी रूप से आप अपने आप को *हाइड्रेट* रख सकते हैं।

तरबूज

तरबूज में उपस्थित लगभग 90 प्रतिशत पानी तथा 10 प्रतिशत से कम शर्करा इसे ग्रीष्मकाल का सर्वश्रेष्ठ फल बनाता है। तरबूज सोडियम तथा पोटेशियम से भरपूर होता है। इसमें विटामिन सी, ए, बी तथा बीटा कैरोटीन जैसे *एंटीऑक्सीडेंट* भी पाए जाते हैं। इसमें *फाइबर* भी काफी मात्रा में पाया जाता है। पानी की अधिक मात्रा के कारण ये त्वचा को अचछी तरह से *हाइड्रेट* करता है। यदि ग्रीष्मकाल में आप तुरंत ताजगी चाहें तो तरबूज का सेवन बेहतर परिणाम दर्शाता है।

खरबूजा

गर्मियों का बादशाद कहा जाने वाला खरबूजा बीटा कैरोटीन से भरपूर होता है। इसमें *फाइबर* भी भरपूर मात्रा में होता है। *बीटा कैरोटीन* शरीर में पहुँचकर विटामिन ए में परिवर्तित हो जाता है। खरबूजा आँखों तथा त्वचा के लिए भी काफी लाभदायक होता है। यह हड्डियों को मजबूत बनाता है। साथ ही पेट को भी साफ रखता है तथा कब्ज की समस्या को दूर करता है। यदि आप अपना वजन कम करना चाहते हैं तो प्रातःकाल खरबूजे का नियमित सेवन करें। इसमें शर्करा के कम स्तर होने के कारण कैलोरीज़ भी कम होती हैं। खरबूजा में पाए जाने वाले विटामिन बी, सी, प्रोटीन, कैल्शियम, फास्फोरस जैसे पोषक तत्व गुर्दों की समस्या को दूर करने में सहायक होते हैं। खरबूजा का सेवन त्वचा संबंधी समस्याओं से भी राहत दिलाता है। खरबूजे के पोषक तत्व त्वचा को चमकदार बनाए रखने में सहायता करते हैं। हृदय संबंधी समस्याओं को दूर करने के साथ ही यह कैंसर से बचाव में भी सहायक होता है।

आम

फलों का राजा आम न सिर्फ हमारी *टेस्ट बड्स* को संतुष्ट करता है बल्कि यह अमीनो अम्लों, विटामिन ए, *फ्लेवोनओइड्स*, नियासिन, कैल्शियम, लौह तत्व, मैग्नीशियम तथा पोटेशियम आदि का प्रचुर स्त्रोत होता है। पोटेशियम तथा बीटा कैरोटीन से भरपूर होने के कारण यह त्वचा में रौनक लाता है। साथ ही कैंसर की रोकथाम में भी सहायक है। इसमें मिलने वाला विटामिन ए आँखों की रौशनी बढ़ाने में सहायक होता है। साथ ही यह आँखों संबंधी कई समस्याओं को दूर करने में सहायक होता है। आम शरीर का पाचन तंत्र भी सही करता है। आम अपने दोनों रूपों में लाभदायक सिद्ध होता है। कच्चे आम का पना बनाकर पीने से यह शरीर को *कूल* रखता है तथा शरीर के नुकसानदेह तत्वों को बाहर निकालने में मदद करता है। अध्ययनों से ज्ञात होता है कि आम शरीर की शक्ति को भी बढ़ाता है।

लीची

गर्मी के मौसम में आने वाली लाल–लाल लीची में संतरे से 40 प्रतिशत अधिक विटामिन सी के साथ ही बीटा कैरोटीन भी काफी मात्रा में मौजूद होता हैं। लीची में तांबा, फास्फोरस भी काफी मात्रा में पाया जाता है। इसमें फोलेट्स, नियासिन, कोलाइन, राइबोफ्लेविन, थियामिन तथा विटामिन ई प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। लीची कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम, मैंगनीज, जस्ता आदि पाया जाता है। लीची से प्राप्त होने वाले पोषक तत्व हड्डियों को मजबूती प्रदान करते हैं। साथ ही *एंटीएजिंग* का भी काम करती हैं। यह *फ्री रेडिकल्स* से लड़कर त्वचा को पोषण प्रदान करती है तथा त्वचा में रौनक लाती है। लीची सम्पूर्ण शरीर में रक्त संचार को सही करती है। नियासिन तथा थियामिन बालों को मजबूत बनाने में सहायक होते हैं। अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि लीची में पाये जाने वाले *फ्लेवनोइड्स* फेफड़ों तथा मुंह के कैंसर से बचाव करते हैं। लीची *हार्ट रेट* तथा रक्तचाप को नियंत्रित रखती है। लीची में मिलने वाले पोषक तत्व त्वचा को स्वस्थ रखते हैं।

अनन्नास

अनन्नास में *ब्रोमेलेन* तथा *फाइबर* काफी पात्रा में पाया जाता है। *ब्रोमेलेन* पाचन तंत्र को सही करता है और यह घावों को तेजी से भरने में सहायक है। यह हड्डियों को भी मजबूत बनाता है। इसमें विटामिन सी, बी$_1$, बी$_6$, मैगनीज, तांबा, फोलेट, थियामिन, राइबोफ्लेविन, पेंथोथेनिक अम्ल आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। कम मात्रा में कैलोरी प्राप्त होने के कारण अनन्नास के सेवन से वजन में कमी आती है। यह शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को भी बढ़ाने में उल्लेखनीय भूमिका निभाता है।

खाना खाते समय कुटी हुई लाल मिर्च को अपनी भोजन की प्लेट पर छिड़कने से आपके पानी पीने की मात्रा अवश्य बढ़ जाएगी। कई शोध अध्ययनों से ज्ञात हो चुका है कि लाल मिर्च हमारे चयपचय के लिए अत्यंत लाभकारी होती है। खाना खाने से पूर्व एक गिलास पानी पीने से भूख के थोड़ी शांत हो जाने के कारण पानी पीने से वजन कम करने में भी सहायता मिलती है।

आज सभी के पास *स्मार्टफोन* हैं जो उनके साथ पूरे दिन ही रहता है। *वाटरलोग्ड* नामक *मोबाइल एप* को *आईफोन* अथवा *वॉटर यूअर बॉडी* को *एंडरोइड* तथा *आईफोन* पर *डाउनलोड* करके आपको उपरोक्त *एप्स* से *एलर्ट्स* मिलते रहेंगे जो आपको पानी पीने की याद दिलाते रहेंगे। उपरोक्त बातों का ध्यान रखकर आप अपने स्वास्थ्य की रक्षा कर सकते हैं।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

गुड़ : स्वास्थ्य का खजाना

संतेश्वरी, वरुचा मिश्रा, मुकुन्द कुमार एवं आशुतोष कुमार मल्ल
भाकृअनुप– भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गुड़ भारत में खाया जाने वाला प्रमुख खाद्य पदार्थ है। यह एक अशोधित प्राकृतिक शर्करा है जिसे औषधीय चीनी के नाम से भी जाना जाता है। विश्व में कुल गुड़ उत्पादन का 70 प्रतिशत से अधिक का उत्पादन केवल भारत ही करता है। सबसे महत्वपूर्ण बात ये है कि प्राचीन काल से ही इसे किसी रसायन के उपयोग किये बिना ही बनाया जाता है, लेकिन आधुनिक युग में मानव की धन लोलुपता बढ़ जाने के कारण गुड़ बनाने के लिए रसायनों का भी प्रयोग होने लगा है, जो कि स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है। यही वजह है कि स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर आजकल सरकार प्राकृतिक विधि से गुड़ बनाने के लिए गुड़ इकाई स्थापित करने व गुड़ उद्यम विकसित करने के लिए अनुदान दे रही है। साथ ही साथ, कई प्रशिक्षण कार्यक्रम भी चला रही है। स्वाद में मीठा होने की वजह से सभी इसे बड़े चाव से खाते हैं। मिठाइयों के उत्पादन में ये एक महत्वपूर्ण घटक है। आमतौर पर गुड़ का सेवन हर घर के बुजुर्ग भोजन के उपरांत अवश्य करते हैं। यह स्वास्थ्य के लिए भी कई वजहों से फायदेमंद है। भारत के अधिकतर प्रान्तों में गुड़ गन्ने के रस से ही बनाया जाता है। अधिकतर लोग केवल एक ही प्रकार के गुड़ के बारे में जानते हैं, परंतु ऐसा नहीं है। गुड़ गन्ने के रस के अलावा, नारियल के रस, खजूर एवं पामिरा टॉडी पाम से भी बनाया जाता है। चारों प्रकार से बने गुड़ के अलग अलग फायदे होते हैं। गुड़ के उत्पादन, स्त्रोत, रंग एवं स्वाद की भिन्नता के आधार पर इसे विभिन्न भागों मे विभाजित किया जाता है। इसके स्त्रोत एवं उत्पादन के आधार पर इसकी गुणवत्ता तथा मूल्य भी अलग–अलग होता है।

1. गन्ने के रस से बना गुड़

भारत में गन्ने का उत्पादन बहुत अधिक मात्रा में होता है। यही वजह है कि गन्ना उत्पादन में हम विश्व में दूसरे स्थान पर आते हैं। गुड़ का नाम सुनते ही सबसे पहले गन्ने का ही ध्यान आता है। इसकी मुख्य वजह है इस गुड़ का ज्यादा होना तथा ज्यादातर लोगो द्वारा प्रयोग किया जाना। यह गुड़ सम्पूर्ण भारत में किसी भी जगह बड़ी आसानी से मिल जाता है। यह बाजार में बिकने वाला सबसे अधिक लोकप्रिय गुड़ है। इस प्रकार के गुड़ को गन्ने के रस से तैयार किया जाता है (चित्र 1)। इसे बनाने के लिए गन्ने के रस को गाढ़ा होने तक पकाया जाता है। फिर इससे गुड़ तैयार किया जाता है। इस गुड़ का रंग भूरा या हल्का पीला होता है। गन्ने के रस से बने गुड़ की बनावट कुछ अलग ही होती है एवं इसका स्वाद मीठा होता है। *एग्रोटेक्नोलॉजी* में प्रकाशित एक लेख के अनुसार इसमें *फोलिक एसिड* तथा *विटामिन बी कॉम्प्लेक्स* नामक *विटामिन* एवं कई खनिज लवण जैसे कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम, लोहा, जस्ता, तांबा और फॉस्फोरस मौजूद होते हैं। इसलिए इस गुड़ को ऊर्जा का अच्छा स्रोत एवं काफी फायदेमंद बताया जाता है।

चित्र 1: गन्ने का गुड़

गन्ने के रस से बने गुड़ के फायदे

आयुर्वेद के अनुसार गन्ने के गुड़ का उपयोग गले एवं फेफड़ों के संक्रमण और इसके इलाज में फायदेमंद है। यह गुड़ गठिया रोग और पित्त विकारों को रोकता है। *नेशनल सेन्टर फॉर बायोटेक्नोलॉजी इन्फॉर्मेशन* द्वारा किए गए अध्ययन के अनुसार *आयरन* से भरपूर होने की वजह से यदि इसे उचित मात्रा में खाया जाए तो *एनीमिया* जैसी बीमारी से बचा जा सकता है। यह थकान कम करने में भी सहायक है तथा मांसपेशियों एवं नसों की रक्त वाहिकाओं को शिथिल करके उचित रक्तचाप बनाए रखता है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान में प्रकाशित *फार्माकोग्नॉसी* के समीक्षा लेख के अनुसार गुड़ हमारे शरीर के यकृत में उपस्थित हानिकारक विष को अपशिष्ट पदार्थो के साथ मिलाकर शरीर के बाहर निकालने में मदद करता है। सबसे खास बात यह है कि यह हमारे शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत करने के साथ–साथ जल अवरोधन कम करने में भी सहायक होता हैं।

2. नारियल का गुड़

हमे भली भांति ज्ञात है कि दक्षिण भारत में नारियल की पैदावार सबसे अधिक होती है। यही कारण है कि दक्षिण भारत में

नारियल से बना गुड़ अधिक प्रयोग किया जाता है। इससे बना गुड़ गहरे भूरे रंग का एवं पिरामिड के आकार होता है (चित्र 2)। नारियल के गुड़ को किण्वन विधि द्वारा नहीं बनाया जाता है। नारियल में उपस्थित शर्करा क्रिस्टल के आकार की होती है, जिसके कारण इससे बना गुड़ थोड़ा सख्त होता है। इस गुड़ में उपस्थित विशेष पोषक तत्व इसे और भी अधिक सेहतमंद बना देते है। *फूड साइंस एंड न्यूट्रीशन* नामक एक *जर्नल* में प्रकाशित शोध लेख के अनुसार इस गुड़ में फास्फोरस, कैल्शियम, लौह तत्व, पोटेशियम और मैग्नीशियम जैसे कई आवश्यक खनिज लवण, *एंटीऑक्सीडेंट्स* और विटामिन भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं, जो कि हमारे शरीर के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

चित्र 2 : नारियल का गुड़

नारियल के गुड़ के फायदे

आयुर्वेद के अनुसार यह गुड़ खांसी–जुकाम जैसी बीमारियों में एक अच्छा घरेलू नुस्खा है। इसमें उपस्थित खनिज लवण शरीर के रक्तचाप को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभातें हैं। साथ ही साथ, इस गुड़ में जीवाणुरोधी क्षमता होने के कारण ये जीवाणुओं से होने वाले संक्रमण से भी शरीर की रक्षा भी करता है।

3. खजूर का गुड़

यह गुड़ मुख्यतः भारत के पूर्वी राज्य जैसे पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखंड आदि में बनाया जाता हैं। इसे खजूर के गुड़ के अलावा "पाताली गुड़" के नाम से भी जाना जाता है। यह गुड़ खजूर के पेड़ों से निकलने वाले रस से बनाया जाता है (चित्र 3)। इसे बनाने का तरीका भी गन्ने के गुड़ के ही समान होता है। इसे बनाने के लिए खजूर के रस को तब तक उबाला जाता है जब तक वह गाढ़ा न हो जाए। खजूर से तैयार किये जाने वाले गुड़ का रंग गहरा भूरा काफी हद तक गहरे चॉकलेट के रंग के जैसा होता है। इस गुड़ की सबसे बड़ी खास बात ये है कि यह गुड़ मुँह में डालते ही घुल जाता है। यह स्वाद में मीठा होता है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य कृषि संगठन द्वारा प्रकाशित एक शोध लेख के अनुसार खजूर के रस में कार्बोहाइड्रेट्स, विटामिन–बी, विटामिन–सी, लौह तत्व और कैल्शियम जैसे कई पोषक तत्व उपस्थित होते हैं। ये सभी हमारे शरीर को स्वस्थ रखने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह गुड़ हमारे शरीर में मीठे की आवश्यकता तथा पोषक तत्वों की कमी को भी पूर्ण करता है।

चित्र 3 : खजूर का गुड़

खजूर के गुड़ के फायदे

खजूर के गुड़ में उपस्थित फाइबर हमारे पाचन तंत्र के लिए अत्यंत उपयोगी है। इसका उपयोग *एंडोर्फिन* के उत्पादन को बढ़ावा देता है, जिसकी मदद से मासिक धर्म के दौरान होने वाली ऐंठन में राहत मिलती है। यह गुड़ *माइग्रेन* के दर्द के समय घरेलू उपचार के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह शोध द्वारा भी सिद्ध हो चुका है कि खजूर के गुड़ का सेवन *माइग्रेन* के दर्द से तुरंत राहत दिलाता है।

4. *पामिरा टॉडी पाम* (ताड़) का गुड़

पामिरा टॉडी पाम (ताड़) का वृक्ष देखने में काफी हद तक नारियल के वृक्ष की तरह ही होता है। लेकिन यह नारियल के वृक्ष से काफी अलग होता है। यह गुड़ मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल में मिलता है। इसे करुपट्टी भी कहा जाता है। यह गुड़ आमतौर पर सख्त होता है, जो तुरंत घुल नहीं सकता है। *पामिरा पाम* के रस को भी अन्य रसों की तरह ही उबालकर गाढ़ा किया जाता है तत्पश्चात उससे गुड़ बनाया जाता है। यह धूमिल सफेद से लेकर हल्के पीले सफेद रंग का होता है (चित्र 4)। इसका स्वाद कुछ–कुछ चॉकलेट जैसा होता है। यह स्वाद में गन्ने के रस से बने गुड़ से अधिक मीठा होता है। स्वाद में अच्छा होने के साथ ही यह सेहत के लिए बेहद ही फायदेमंद भी माना जाता है। ताड़ के गुड़ में पर्याप्त मात्रा में विटामिंस, कार्बोहाइड्रेटस, प्रोटीन, वसा,

कई फायदेमंद पोषक तत्व जैसे ग्लूकोज, फ्रक्टोज़, सुक्रोज आदि मौजूद होते हैं। विभिन्न खनिज लवण जैसे कैल्शियम, फास्फोरस, लौह तत्व, पोटेशियम, मैग्नीशियम भी भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। इस गुड़ की सबसे बड़ी अच्छाई यह है कि इसकी निर्माण प्रक्रिया पूरी होने के बाद भी इसके पोषक तत्व बरकरार रहते हैं।

पामिरा टॉडी पाम (ताड़) के गुड़ के फायदे

पामिरा टॉडी पाम के रस से बने गुड़ के सेवन से कई तरह की स्वास्थ्य समस्याओं में फायदा मिलता है। ताड़ के गुड़ में भरपूर कार्बोहाइड्रेट होने के कारण यह हमें ऊर्जावान बनाए रखने में मदद कर सकता है। लौह तत्व की उपस्थिति के कारण यह खून की कमी (*एनीमिया*) से ग्रस्त लोगों के लिए यह बेहद लाभदायक प्रतिकारक (*एंटीडोट*) है। ताड़ के गुड़ में काफी कम मात्रा में *ग्लाइसेमिक इंडेक्स* होता है जो कि भोजन में मौजूद कार्बोहाइड्रेट को जल्द से जल्द ग्लूकोज में बदल देता है। ताड़ के गुड़ का सेवन पाचन एंजाइमों को सक्रिय करके मल त्याग को नियमित करने के लिए सहायक माना जाता है। खांसी और सर्दी की समस्या में इसका इस्तेमाल घरेलू नुस्खे के रूप में भी किया जाता है। ताड़ के गुड़ का सेवन सांस लेने की समस्या में भी बहुत फायदेमंद होता है तथा आयुर्वेद में इस गुड़ को कब्ज जैसी समस्या में औषधि के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। कैल्शियम जैसे पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाने की वजह से यह हड्डियों को मजबूत बनाता है एवं *आर्थ्राइटिस* जैसी हड्डियों से जुड़ी समस्या में बहुत लाभ पहुंचाता है। पोटैशियम की पर्याप्त मात्रा में उपस्थिति वजन कम करने में सहायक होती है। सूजन एवं शरीर में पानी की कमी होने पर इसका सेवन बहुत ही फायदेमंद होता है।

चित्र 4 : *पामिरा टॉडी पाम* (ताड़) का गुड़

गुड़ का उद्यम

चीनी की अपेक्षा गुड़ का सेवन करना स्वास्थ्य के लिहाज से अच्छा माना गया है। ऐसे लोग जिन्हें चीनी खाना ज्यादा पसंद नहीं हैं या फिर चीनी का विकल्प ढूंढ रहें हैं, उनके लिए गुड़ एक अच्छा विकल्प है। आजकल गुड़ से होने वाले फ़ायदों को ध्यान में रखकर मिठाईयों, बेकरी, कन्फेक्शनरी के अलावा दवाओं में भी इसका उपयोग बहुत तेजी से किया जा रहा हैं, फलस्वरूप गुड़ की मांग में काफी वृद्धि हो गयी है। इस बदलाव के कारण छोटे एवं मध्यम किसान गुड़ बनाकर अधिक से अधिक लाभ कमा सकते हैं। केंद्र सरकार ने इसके लिए एक *स्टार्टअप* योजना भी शुरू की है। किसान इस योजना का लाभ उठाकर गुड़ उत्पादन इकाई स्थापित कर सकते हैं, एवं गुड़ उद्यमी बन सकते हैं। गुड़ उद्यम एक बहुत ही अच्छा रोजगार है, इससे बेरोजगारी भी समाप्त हो जाती है। भारत सरकार के कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पादन निर्यात विकास प्राधिकरण की *रिपोर्ट* के अनुसार वर्ष 2019–20 में भारत द्वारा विदेशों को 3,41,155.34 मीट्रिक टन गुड़ और गुड़ से बने उत्पादों का निर्यात किया गया, जिससे लगभग ₹ 1633.64 करोड़ का शुद्ध लाभ प्राप्त हुआ है। यह आंकड़ा दर्शाता है कि भारत केवल चीनी में ही नहीं अपितु गुड़ में भी बड़ा निर्यातक बन चुका है। केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के गन्ने से संबन्धित सभी शोध संस्थानों तथा राज्य सरकारों द्वारा गन्ना किसानों को प्रोत्साहित करने के लिए विभिन्न प्रकार की योजनाओं पर कार्य कर रहा हैं। खादी एवं ग्रामोद्योग भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। सरकार की योजनानुसार, गन्ना पेराई के लिए कोल्हू खरीदने तथा गुड़ इकाई स्थापित करने के लिए आर्थिक अनुदान दिया जा रहा है। उत्तर प्रदेश गन्ना उत्पादन में प्रथम है यहाँ पर छोटी–बड़ी कुल 10,000 से ज्यादा गुड़ इकाई स्थापित हो चुकीं हैं। आधुनिक गुड़ उत्पादन इकाई को बहुत अच्छी तरह से सोच समझकर बनाया गया है जिसमें चिमनी से कम धुआं निकलता है एवं प्रदूषण भी कम होता है। एशिया का सबसे बड़ा गुड़ उत्पादक जिला मुजफ्फरनगर है, यहाँ लाखों किसान गुड़ उत्पादन का कार्य करते हैं। भाकृअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ भी विगत कई वर्षों से गुड़ बनाने के लिए किसानों को अनवरत प्रशिक्षण देने के काम में लगा हुआ है। यह उन स्थानों के किसानों के लिए वरदान समान है जिन स्थानों पर चीनी मिलें बंद हो चुकी हैं। ऐसे क्षेत्रों के बेरोजगार युवक गुड़ उत्पादन का उद्यम करके अपनी आर्थिक स्थिति मजबूत कर सकते हैं तथा अपने जीवन में मिठास ला सकते हैं।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

गुड़ का गुलकंद

मिथिलेश तिवारी[1], प्रियंका सिंह[1], साची चौरसिया[2], राजीव रंजन राय[1], दिलीप कुमार[1] एवं अखिलेश कुमार सिंह[1]
[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ
[2]*सैम हिगिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर, टैक्नोलॉजी एंड साइंसेज,* प्रयागराज

गुलाब प्रकृति की एक सुदंर रचना हैं। देशी गुलाब (*रोज इण्डिका* एल.) *रोजोऐसी* कुल का सदस्य है इसे ''फूलों की रानी'' कहा जाता हैं। इसके फूल की पत्तियों में 95 प्रतिशत पानी, विटामिन ए, बी, सी, डी और ई बहुत अधिक मात्रा में *एंटीआक्सीडेंट* भी पाए जाते हैं जो कि रोगों के इलाज में काम आते है। गुलाब की लगभग 100 से भी ज्यादा प्रजातियाँ हैं और विभिन्न किस्मों में से, दमास्क गुलाब (*रोज डयासीन* मिल) सबसे महत्वपूर्ण गुलाब की प्रजाति हैं। इसका उपयोग गुलाबजल, गुलाब के तेल एवं गुलकंद बनाने में किया जाता है।

गुलाब के पोषक तत्व

गुलाब में अत्यधिक मात्रा में पोषक तत्व पाए जाते हैं जैसे विटामिन–सी, कैरोटिनॉयड, *फिनोलिक कंपोनेट्स*, खनिज लवण एंव आवश्यक तेल।

गुलाब मूल्यवर्धन के फायदे

गुलाब मूल्यवर्धित उत्पाद *एंटीआक्सीडेट, एंटीबैक्टीरियल,* गुणों में समृद्व होते हैं। इसका उपयोग विभिन्न बीमारियों से बचाव में किया जाता हैं जैसें *एंटी–एच.आई.वी,* हृदय रोग के लिए, *डिहाईड्रेशन* से बचाने के लिए, वजन घटाने में, हड्डियों की मजबूती, कब्ज, मुँह के छालों, संक्रमण से बचाव, *यूरिनरी ट्रैक्ट इफेंक्शन* से बचाव के लिए आदि। इस लेख में हम गुलाब की पंखुड़ियों से बने गुलकंद की चर्चा करेगें।

गुलकंद

गुलकंद सबसे स्वादिष्ट आयुर्वेदिक व्यंजन हैं जो प्राचीन काल से अच्छे स्वास्थ्य के लिए उपयोग किया जाता रहा है। यह पारंपरिक रूप से थकान, सुस्ती, अति–अम्लता कष्टार्तव द्रव प्रतिधारण से लड़ने के लिए शीतलता–टॉनिक के रूप में उपयोग किया जाता रहा है। यह स्मृति के लिए भी अच्छा है और एक अच्छे रक्त–शोधक के रूप में उपयोग किया जाता है। गुलकंद को *टॉनिक* और रेचक, दोनों ही रूप में उपयोग किया जाता है। यह एक शक्तिशाली *एंटीआक्सीडेंट* और एक बहुत अच्छा *रेज्यूवनेटर* है। 1–2 चम्मच गुलकंद का सेवन करने से *एसिडिटी* और पेट की गर्मी से राहत प्राप्त होती है।

सामग्री एवं विधि

यह प्रयोग भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान की गुड़ इकाई प्रसंस्करण प्रयोगशाला में किया गया है। स्वास्थ्यवर्धक गुलकंद बनाने में 100 ग्राम ताजी गुलाब की पत्तियों को 100 ग्राम गुड़ के साथ अलग–अलग परतों में मिलाकर बड़े मुँह वाले जार में रख दिया जाता है। जार के मुख को *मस्लिन* कपड़े से बाँधकर बंद कर दिया जाता है। एक माह तक धूप में जार को रखा जाता है। ताकि गुड़ पत्तियों में अच्छें से घुल जाए। इस विधि से बने हुए गुलकंद का संवेदी आकलन करवाया गया। संवेदी आकलन से प्राप्त निष्कर्ष में इस गुलकंद को उत्तम माना गया।

ताजी गुलाब पत्तियों को साफ कर लें

↓

कुछ देर फैलाकर *पेपर* के ऊपर रख दें (पंखे के नीचे पानी सुखाने के लिए)

↓

एक साफ काँच की बोतल में एक परत के रूप में गुलाब की पत्तियाँ डालें

↓

उसके ऊपर गुड़ के *पाउडर* की परत डालें

↓

इस प्रकार से बोतल को पूरा भरकर *मसलिन* कपड़े से बोतल को *सील* कर ढक्कन से बन्द कर दें

↓

इस मिश्रण को एक माह तक धूप में रखें

↓

संवेदी आकलन करवाएं

भारतीय गन्ना अनुसंधान में गुड़ इकाई की प्रयोगशाला में तैयार किए गये गुड़ का गुलकंद पोषण की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। मूल्यवर्धन गुड़ को और अधिक पोषक बनाता है जो कि ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल के बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं को दिया जा सकता है।

अमोद–प्रमोद प्रभाग

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान की गौरवशाली गाथा

ब्रह्म प्रकाश
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

प्राचीन काल से भारतीय भोजन में रहा है मीठे का अतिविशिष्ट स्थान।
ऋषियों, मुनियों, कृषि वैज्ञानिकों ने मीठे भोज्य पदार्थों पर दिया है बहुत ध्यान।।
भारत में सैकड़ों फसलें हैं होती पैदा, पर गन्ने जैसी कोई फसल नहीं है।
किसी का उत्पाद न गन्ने जैसा होता लंबा, कोई और फसल इतनी मीठी नहीं है।।
चीनी उद्योग लाखों व्यक्तियों को रोजगार देकर, करता है ग्रामीण समाज की सेवा।
सूती वस्त्र उद्योग के बाद इसका स्थान, भारत में इससे बड़ा कोई कृषि–आधारित उद्योग नहीं है।।
भारतीय केंद्रीय गन्ना समिति ने संस्तुति दी देश में हो गन्ना व चीनी शोध के लिए एक शानदार संस्थान।
अतः 16 फरवरी 1952, शनिवार के दिन स्थापित किया गया लखनऊ में भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान।।
यहाँ गन्ने जैसी व्यावसायिक फसल पर होता शोध कार्य, कोई और इतनी अधिक मीठी फसल नहीं है।
सी4 फसल होने के कारण इसके द्वारा होने वाले *कार्बन सीक्वेस्ट्रेशन* का कोई जवाब नहीं है।।
गन्ना शोध के लिए बने इस संस्थान ने गन्ना अनुसंधान को दी एक नई पहचान।
स्थापना के समय से कार्यरत तीन विभाग थे सस्य विज्ञान, कृषि अभियांत्रिकी, कवक विज्ञान व कीट विज्ञान।।
1974 में अखिल भारतीय समन्वित परियोजना (गन्ना) का संस्थान बना मुख्यालय।
यहीं 1974 में ही अखिल भारतीय समन्वित परियोजना (चुकंदर) का भी स्थापित हुआ मुख्यालय।।
1996 में गन्ना संस्थान को कृषि विज्ञान केंद्र, लखनऊ को किया गया स्थानांतरित।
2019 में इसी संस्थान ने लखीमपुर खीरी में किया एक और कृषि विज्ञान केंद्र स्थापित।
इसके अलावा संस्थान द्वारा किया गया है प्रवरानगर, अहमदनगर महाराष्ट्र में एक जैव नियंत्रण केंद्र स्थापित।।
गन्ने की उत्पादकता, लाभदेयता व टिकाऊपन में वृद्धि करना संस्थान ने बनाया मिशन।
वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धात्मक व जीवंत गन्ना कृषि विकसित करना है इसका विजन।।
किसी भी फसल की औसत राष्ट्रीय उत्पादकता के सुधार में होता है किस्मों का अत्यंत अहम योगदान।
संस्थान गन्ने की कई उन्नतशील रोगरोधी किस्मों का विकास करके निभा रहा अपना कर्तव्य महान।।
किसी भी फसल से उच्च उत्पादकता प्राप्त करने हेतु महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है बीज।
खेती हेतु अपने क्षेत्र की नवविकसित किस्में ही प्रयोग करें, स्मरण रखे सदा यह चीज।।
चुकंदर, राजमा, मूँग, उर्द, सरसों, आलू, मटर, के साथ गन्ने की जा सकती है खेती।
जो किसान गन्ना के साथ अन्य फसलों की भी खेती करते, उनको है अतिरिक्त आय प्राप्त होती।।
परंपरागत रूप से गन्ने की खेती में दो गांठ व तीन गांठ के टुकड़ों का ही होता था प्रयोग।
पर अब रूपांतरित कलिका चिप, *एसटीपी* व गन्ना गांठ का प्रयोग भी लाभ हेतु बनाता योग।।
संस्थान ने गन्ना खेती हेतु सभी पोषक तत्वों की मात्रा संस्तुत है कर डाली।
सूक्ष्म पोषक तत्वों व जैव उर्वरकों के प्रयोग की भी वैज्ञानिकों ने सिफारिश कर डाली।।
महाराष्ट्र जैसे राज्य में गन्ने की फसल हेतु पानी की कमी एक बड़ी समस्या के रूप में है उभरी।
संस्थान ने गन्ना फसल की जल आवश्यकता को कम करने हेतु कई प्रौद्योगिकियाँ दें डारी।।

एक–एक कूँड़ छोड़कर गन्ने की फसल में सिंचाई करने से पानी की अच्छी बचत होती है।
सूखी पत्तियों से मिट्टी ढाकने व सूक्ष्म सिंचाई भी पानी को बहुत बचाव देती हैं।।
लाल सड़न, कंडुआ, उकठा तथा पीली पत्ती रोग फसल को पहुँचाते हैं बहुत नुकसान।
इन रोगों से निजात पाने के लिए संस्थान के फसल सुरक्षा के वैज्ञानिकों ने सुझाए हैं विभिन्न निदान।।
गन्ने की उपज पर विभिन्न बुवाई विधियों का भी पड़ जाता है गहरा प्रभाव।
संस्थान ने गोल गड्ढा, गहरी नाली, फर्ब विधि विकसित कर उपज में दिखलाया उपज पर इनका गहरा प्रभाव।।
गन्ने की खेती में मजदूरों की अनुपलब्धता इसके उत्पादन पर दुष्प्रभाव है दर्शाती।
कृषि अभियंत्रण विभाग द्वारा विभिन्न कृषि–क्रियाओं हेतु कृषि यंत्रों का विकास किसानों को बड़ी राहत दिलाती।।
संस्थान ने भारत भर के विभिन्न प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों से समझौता कर बढ़ाया छात्रों का मान।
उन विश्वविद्यालयों के मेधावी शोध छात्र–छात्राएँ उच्च शिक्षा के लिए संस्थान आना समझते हैं अपनी शान।।
संस्थान के प्रशासनिक नियंत्रण में दो कृषि विज्ञान केंद्र भी मानते प्रत्येक किसान को भगवान।
समेकित कृषि प्रणाली के अपनाने से किसानों के चौमुखी विकास से मिला किसानों को नया सम्मान।।
संस्थान ने किसानों की आय बढ़ाने हेतु *डीएससीएल शुगर* से *पीपीपी मोड* में एक समझौता कर डाला।
अपने प्रयासों से प्रधानमंत्री जी के किसानों की आय दोगुना करने के सपने को साकार कर डाला।।
गन्ना किसानों की आय बढ़ाने के कारण यह संस्थान बन गया गन्ना शोध का प्रमुख तीर्थ स्थान।
अखिल भारतीय स्तर पर जिससे संस्थान को मिल पायी देश भर में एक अलग पहचान।।
विभिन्न फसलों के अनुसंधान संस्थानों में गन्ना संस्थान जैसा संस्थान कोई दूजा नहीं है।
इसमें सेवा देना मात्र ही है ईश्वर सेवा, इससे बड़ी कोई उपासना नहीं है।।
यह संस्थान ऐसे ही नहीं बन गया देश के शीर्ष शोध संस्थानों में सबसे खास।
इस संस्थान के सभी कर्मियों ने अपने खून पसीने से सींचकर डाली है इसमें मिठास।।

हिंदी भाषा

कृष्ण मुरारी सिंह "किसान"
ग्राम – बरमा, पोस्ट कैभावॉ, वाया–सिरारी, जिला–शेखपुरा (बिहार)

मेरे लिए अमृत रस पान
जितनी बार उसे पीता हूँ
लगता है,
उतनी बार पुनः जीता हूँ
मेरे लिए अमृत रस पान

हिंदी सुधा– सार मेरे लिए
चिंतामणि है बहु बार
सपने में भी रोम–रोम को
रोमांचित करती है
उनकी मधुर धुनों की जय–जयकार
मेरे लिए अमृत रस पान

हिंदी ध्वनि
मेरे लिए पारसमणि है अनमोल
जितनी बार उसे सुनता–
लगता है
उतनी बार पुनः वृंदावन घूमता हूँ
मेरे सारे समूचे संस्कारों की निधि
स्वयं भारत–भूमि
स्वयं हिंदी
जिसके बोल
मेरे लिए आनंद अनमोल
जिसके गान, इन प्राणों में मोक्ष वरदान
मेरे लिए अमृत रस पान

मेरे लिए प्रभु राम सा है जिसका सुमिरण
जिस–जिस घड़ी अपने मंदिर में
लगता है,
सत्यं शिवं सुंदरं पाता हूँ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) की बैठक का आयोजन

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) का अध्यक्षीय कार्यालय है। वर्तमान में लखनऊ स्थित 70 केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में किए जा रहे राजभाषा के कार्यों के मूल्यांकन की ज़िम्मेदारी भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के पास है। इसी क्रम में दिनांक 28 दिसम्बर, 2021 के पूर्वाहन में संस्थान द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) लखनऊ की वर्ष 2020–21 की द्वितीय बैठक का आयोजन *ऑन लाइन* किया गया। जिसमें राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) लखनऊ के सदस्य कार्यालयों के प्रमुखों एवं हिंदी अधिकारियों ने भाग लिया। इस बैठक की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक एवं नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ के अध्यक्ष, डॉ. ए.डी. पाठक ने की। उक्त बैठक में उत्कृष्ट कार्य करने वाले 11 कार्यालयों एवं पत्रिका हेतु 3 कार्यालयों को अध्यक्ष महोदय द्वारा पुरस्कृत किया गया। इस बैठक में डॉ. ए.के. साह, सचिव, नराकास, (कार्यालय –3) ने अप्रैल से सितम्बर 2021 के बीच सदस्य कार्यालयों द्वारा राजभाषा के किए गए कार्यों पर विस्तारपूर्वक चर्चा की। इस छमाही में कुल 92 हिंदी कार्यशालाएं आयोजित की गयीं।

कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत कार्यालयों की सूची

क्र. स.	सदस्य कार्यालयों के नाम	स्थान
1.	मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे, लखनऊ	प्रथम
2.	मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, उत्तर रेलवे, लखनऊ	द्वितीय
3.	रक्षा लेखा प्रधान नियंत्रक (मध्य कमान), लखनऊ	तृतीय
4.	सीएसआईआर – भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	चतुर्थ
5.	भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ	चतुर्थ
6.	कमान्डेण्ट–91 बटालियन, द्रुत कार्य बल, समूह केन्द्र केरिपुबल, परिसर, लखनऊ	पंचम
7.	क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय, लखनऊ	
8.	उत्तर रेलवे, रेल इंजन कारख़ाना, लखनऊ	सप्तम
9.	पुलिस उप महानिरीक्षक, ग्रुप केन्द्र, के.रि.पु.बल, बिजनौर, लखनऊ	अष्टम
10.	रेल संरक्षा आयोग, तकनीकी *विंग*, लखनऊ	नवम
11.	अनुसंधान अभिकल्प एवं मानक संगठन (रेल मंत्रालय), लखनऊ	नवम

पत्रिका हेतु पुरस्कृत कार्यालय एवं पत्रिका का नाम

क्र.सं	संस्थानों से प्राप्त राजभाषा पत्रिका	पत्रिका
1.	**मत्स्य लोक**– भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ	प्रथम
2.	**औस विज्ञान**– वैऔअप–केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान, लखनऊ	द्वितीय
3.	**सारंग**– मण्डल रेल प्रबन्धक, उत्तर रेलवे, लखनऊ	तृतीय

वाक्यांश

A	
After perusal	देख लेने के बाद, अवलोकन के बाद
After taking into consideration all aspects of the question	मामले के सभी पहलुओ पर विचार करने के बाद
After the expiry of	की समाप्ति
Against public interest	लोकहित के विरुद्ध
Agenda is sent herewith	कार्यसूची साथ भेजी जा रही है
B	
By goods train	मालगाड़ी से
By hand	दस्ती
By no means	कभी नहीं, कदापि नहीं
By order (of)	के आदेश से
By registered post	रजिस्ट्री से, पंजीकृत डाक द्वारा
C	
Commuted pension	संराशिकृत पेंशन
Compensation *ex-gratia*	अनुग्रहपूर्वक क्षतिपूर्ति
Competent authority's sanction is necessary	सक्षम प्राधिकारी की मंजूरी आवश्यक है
Compliance with orders is still awaited	आदेशों के अनुपालन की अभी भी प्रतीक्षा है
Computation of repaying capacity concluding remark	चुकाने की क्षमता का अभिकलन समापन टिप्पणी
Conclusive and final	निश्चायक और अंतिम
Concurrence of the finance branch is necessary	वित्त शाखा की सहमति आवश्यक है
Consequent upon	के परिणामस्वरूप
D	
Deputation to foreign service	विभागीय सेवा में प्रतिनियुक्त
Detailed enquiry	व्यापक जाँच
Detail of remarks	ब्यौरेवार अभियुक्ति
Detention in custody	हिरासत में रखना
Detrimental to the interest of	के लिए अहितकर
Devices for payment of pension	पेंशन भुगतान की युक्ति
E	
Expedite action	कार्यवायी शीघ्र करें
Expedite in your ietter	आपके पत्र में स्पष्ट किया गया
Expedite submission of report	रिपोर्ट शीघ्र प्रस्तुत करने की व्यवस्था करें
Experimental basis	प्रयोगात्मक आधार
F	
For favour of necessary action	आवश्यक कार्यवाही के लिए
For favour of orders	आदेशार्थ
For further action	आगे की कार्यवाही के लिए
For guidance	मार्गदर्शन के लिए
For information	सूचनार्थ, सूचना के लिए
H	
His request be acceded to	उसकी प्रार्थना स्वीकार की जाए
His request is in order	उनका अनुरोध नियमानुसार है
Hold in abeyance	प्रास्थगित रखना
I	
In connection with	के संबंध में
In consequence of	के परिणामस्वरूप
In consideration of	को ध्यान में रखते हुए
In consultation of	के परामर्श करके
In continuation of	के आगे के सिलसिले में
L	
Letter of acceptance	स्वीकृति –पत्र
Letter of acknowledgement	पावती
Letter of administration	प्रशासन पत्र
Letter of advice	सूचना–पत्र
Letter of allotment	आवंटन पत्र
M	
May please see	कृपया देखें
Medical attendance rules	चिकित्सा परिचर्या नियम
Medical certificate	स्वस्थता प्रमाणपत्र
Medical certificate of sickness	बीमारी का प्रमाणपत्र
Memo of demands	मांग–ज्ञापन
Memorandum of association	संस्था की बहिर्नियमावली
N	
Nominal penalty	नाममात्र शस्ति
Non-admissibility	पेंशन की अस्वीकार्यता
Non – availability certificate	अनुपलब्धता प्रमाणपत्र
Non - bailable offence	गैर–जमानती अपराध
Non – bailable warrant	गैर –जमानती वारंट
Non – clearance of claim	दावे का असमाशोधन, दावे की अनुमति नहीं,
Non – cognizable offence	संज्ञेय अपराध
O	
One time increase	एकबारगी वृद्धि
One year completed service	एकवर्षीय सम्पन्न सेवा
On ground of	के आधार पर

On hire purchase basis	भाड़ा–क्रय आधार पर
On humanitarian grounds	मानवीय आधार पर
P	
Pertaining to	संबंधित, के संबंध में
Petty contingent voucher	खुदरा आकस्मिक व्यय वाउचर
Placed at the disposal or	को सौंपा गया, को सुलभ किया गया
Placed under suspension	निलंबित
Please acknowledge receipt	कृपया पावती भेजें कृपया प्राप्ति–सूचना दें
Q	
Question does not arise	प्रश्न नहीं उठता
R	
Rendition of reports	रिपोर्ट देना
Rent free accommodation	निःशुल्क आवास
Repairable equipment	मरम्मत योग्य उपस्कर मरम्मती उपस्कर
Repairable to the context	प्रसंग के विरूद्ध, प्रसंग के प्रतिकूल
Required information is furnished herewith	अपेक्षित सूचना इसके साथ भेजी जा रही है
Required information of family pension	परिवार पेंशन की अपेक्षित जानकारी
Required to be rectified	परिशोधन अपेक्षित है
Requires modification	आशोधन की आवश्कता है
S	
Service condition are not satisfactory	सेवा–स्थिति संतोषप्रद नहीं है
Settlement of pension claims shall not be questioned on any ground	पेंशन दावे का निपटारा किसी भी आधार पर आपत्ति नहीं की जाएगी
Should be given top priority	परम अग्रता दी जाए
Show cause as to why strict action should not be taken	इस बात का कारण बताएँ कि सख्त कार्रवाई क्यों न की जाए
Shri - is offered a post of	श्री– –को– –पद की नियुक्ति का प्रस्ताव भेजा जाता है
Side by side	साथ–साथ
Signed sealed and delivered	हस्ताक्षरित, मोहरबंद और सुपुर्द किए मामले में समरूपता
Similarity in case	मामले में समरूपता
Sincerely yours	आपका भवदीय
Sitting over the papers	कागज दबाकर बैठना
T	
There is no cause to modify the orders already passed	पहले दिए गए आदेशों में परिवर्तन करने का कोई कारण नहीं है
The required papers are placed below	अपेक्षित कागज–पत्र नीचे रखे हैं
This has reference to this office earlier correspondence at s. no..	यह क्रमांक.....इस कार्यालय के पिछले पत्र– व्यवहार के संदर्भ में है
This is in accordance with the extant rules	यह वर्तमान नियमों के अनुसार है
U	
Undersigned is directed to acknowledge the receipt of your letter no. dated	अधोहस्ताक्षरी को निर्देश हुआ है कि आपके दिनांक–के पत्रांक–की पावती भेजी जाए
Under suspension	निलंबनाधीन
Under the auspices of	के तत्वावधान में
Undue interference	अनुचित हस्तक्षेप
V	
Valedictory address	समापन भाषण, विदाई भाषण
W	
Whichever is earlier	जो भी पहले हो, जो भी पहले घटित हो
Whole as a	कुल मिलाकर
Widow certificate	विधवा–प्रमाणपत्र
Widow's pension	विधवा पेंशन
Y	
Your reply should reach this office by ..... at the latest	आपका उत्तर इस कार्यालय में अधिक से अधिक..... तारीख तक पहुँच जाना चाहिए

संकलनः
अभिषेक कुमार सिंह

समाचार प्रभाग

पासपोर्ट कार्यालय में हुआ हिंदी पखवाड़े का समापन

बहुत बुरी हालत है ईश्वर, धरती के भगवान की...

'इक्षु' को राजभाषा कीर्ति पुरस्कार

हिंदी पखवाड़े का समापन

आज बहेगी काव्य रस की धारा

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में कवि सम्मेलन का आयोजन

आज

हिंदी कार्यशाला : 25 सितम्बर, 2021

हिंदी कार्यशाला : 20–23 दिसम्बर, 2021

हिंदी पखवाड़ा : 14–30 सितम्बर, 2021

स्वच्छता पखवाड़ा : 16–31 दिसम्बर, 2021

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agri search with a human touch

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विजन

उत्कृष्ट, वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्धात्मक तथा गन्ने की खेती के लिए एक अग्रणीय अनुसंधान संस्थान के रूप में कार्य करना।

मिशन

भारत की गन्ना एवं ऊर्जा की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु गन्ने के उत्पादन, उत्पादकता, लाभप्रदता तथा स्थायित्व को बढ़ाना।

अधिदेश

- गन्ना उत्पादन एवं सुरक्षा पर मूल, नीतिगत एवं अनुकूलक शोध करना तथा देश के उपोष्ण क्षेत्रों के लिए गन्ना किस्मों के प्रजनन पर कार्य करना।
- उन्नत प्रजातियों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास के लिए राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय मुद्दों पर प्रयुक्त शोध का समन्वयन एवं अनुश्रवण।
- प्रौद्योगिकी का प्रसार एवं क्षमता निर्माण

एक कदम स्वच्छता की ओर